धारा..69 ग्रन्थांक - 282

श्रेष्ठता गीताञ्जली

(गद्य-पद्यमय)

आचार्य कनकनन्दी

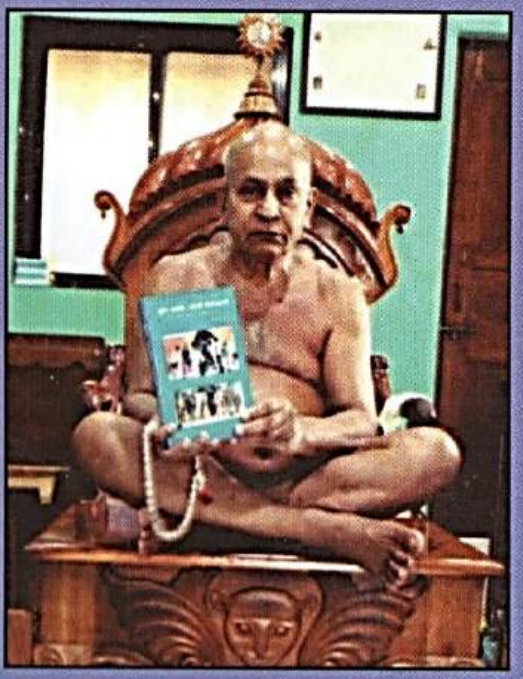

आचार्य कनकनन्दी द्वारा रचित ग्रन्थ का विमोचन करते हुए स्व गुरु
आचार्य कुन्थुसागरजी गुरुदेव।

'युक्त्यनुशासनम् ' ग्रन्थ का विमोचन करते हुए आचार्य कनकनन्दी गुरुदेव आदि।
(चितरी-2017)

गोचरी में आचार्य कनकनन्दी गुरुदेव की पूजा करते हुए बच्चे। (चितरी-2017)

आचार्य कनकनन्दी गुरुदेव की त्रिपरिक्रमा सहित वन्दना करते हुए
मुनि प्रणाम सागरजी आदि। (सिपुर-2017)

आचार्य कनकनन्दी गुरुदेव के पादप्रक्षालन करते हुए भक्त-शिष्यगण।
(चितरी-2017)

श्रेष्ठता गीताञ्जली

(गद्य-पद्यमय)

-आचार्य कनकनन्दी

पुण्य स्मरण

सांस्कृतिक ग्राम चीतरी में एक परिवार कुमार अक्षय शौर्य पुत्र श्री भूपेश शाह द्वारा आचार्य श्रीसंघ के निराडम्बर चातुर्मास कराने के उपलक्ष्य में...

स्वैच्छिक अर्थ सौजन्य (ज्ञानदानी)

1. महिला मण्डल चितरी (रोट तीज व्रत)
2. श्री विजयजी रायचंदजी (कुण्डा वाले), चितरी
3. श्रीमती विजयालक्ष्मी श्री कमलजी, ग.पु.कॉ., सागवाड़ा (रक्षाबंधन व महिम के गुरु दर्शन के उपलक्ष में)
4. श्री हुकमीचंदजी मंगलजी सेठ, चितरी
5. श्रीमती चंद्रकांता श्री नगीनलालजी पंचोरी, चितरी
6. श्रीमती मधुबाला श्री सज्जनलाल जी, ग.पु.कॉ., सागवाड़ा
7. श्री भुवनेशजी राजेन्द्रजी सेठ, चितरी
8. श्रीमती संगीता प्रकाशचन्द्र जी शाह, चितरी

ग्रथांक-69 प्रतियाँ-500
संस्करण-प्रथम 2017 मूल्य-101/-

प्राप्ति स्थान एवं सम्पर्क सूत्र

आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव द्वारा आशीर्वाद प्राप्त
(1) धर्म-दर्शन सेवा संस्थान
द्वारा-श्री छोटूलाल जी चित्तौड़ा
चन्द्रप्रभ दि. जैन मन्दिर, आयड़, आयड़ बस स्टॉप के पास,
उदयपुर (राज.)-313001/मो. 097832-16418
(2) डॉ. नारायणलाल कछारा
सचिव-धर्म-दर्शन सेवा संस्थान
55, रवीन्द्रनगर, उदयपुर (राज.)-313001
फोन नं. 0294-2491422/मो. 092144-60622
E-mail:nlkachhara@yahoo.com

अतिशय क्षेत्र सीपुर में आचार्यश्री कनकनंदी श्रीसंघ को आजीवन चातुर्मास कराने हेतु नितिन का अनुरोध!

-श्रमण मुनि सुविज्ञसागर

(चाल : सुनो-सुनो ऐ दुनिया....., सायोनारा.....)

सुनो-सुनो ऐ! दुनिया वालों...समता तीर्थ की महान् क्रांति...
सेवा-परोपकार-समर्पण की...भावना व्यापक संदेशकारी...(स्थायी)...

भारतवर्ष की पुण्यधरा में...सीपुर ग्राम अतिशयकारी...
देव-शास्त्र-गुरु जिनालय है...अद्वितीय जन-गण मनोहारी...

अधिष्ठाता नितिन भैया ने...तूफानों से कश्ती निकाली...
काँच से कनक तक की यात्रा...सर्वोदयी व सुखकारी...सुनो...(1)...

कनकनंदी गुरु जबसे आये...उपलब्धियाँ अनेक हुई...
सेवा-सहयोग ज्ञान-विज्ञान...भावना अतिशय प्रशस्तकारी...

गुरुदेव की निस्पृहता व...निराडम्बर साधना भायी...
वीतरागता-सरलता से...प्रमुदित है नितिन भाई...सुनो...(2)...

आचार्य श्रीसंघ यहाँ पर...ज्ञान ध्यान तप साधना करे...
अर्थ लाभ व नाम ख्याति बिन...निःस्वार्थ भाव से सेवा करे...

आजीवन चातुर्मास-प्रवास...कराने की उत्कट भावना...
चातुर्मास अन्यत्र होने पर...शीघ्र ही सीपुर पधारना...सुनो...(3)...

आचार्यश्री के व्यापक ज्ञान...समन्वय व अनुभव से...
नेतृत्व व मार्गदर्शन से...लाभान्वित होवे राष्ट्र-समाज...

ऐसी महान् भावना भावे...नितिन व सीपुर परिवार...
कनकनंदी गुरु आशीष देवे...सफल होवे लक्ष्य महान्...सुनो...(4)...

सीपुर, दिनांक 15.05.2017, मध्याह्न 2.02

'''सीपुर अतिशय-क्षेत्र' में आचार्यश्री कनकनंदी-श्रीसंघ को-'आजीवन-चातुर्मास' करने हेतु 'नितिन' का अनुरोध''

-आर्यिका सुवत्सलमती

(चाल : मेरे सामने वाली खिड़की में.....)

मेरे सामने एक व्यक्तित्व है, जो तूफानों से संघर्ष करता है।
सभी अवरोधों को पार करे, वो नितिन (भैया) अद्वितीय है।। (ध्रुव)

साधु निस्पृह निराडम्बर हो, ध्यान-अध्ययन ही (वे) करें...
आगमानुकूलचर्या हो, समता में प्रतिक्षण रहें...
भक्त-शिष्य व श्रावक, उनके अनुकूल व्यवस्था करें।। (1)

अर्थलाभ की उनको चाह नहीं, ख्याति-पूजासे दूर रहते...
कनकनंदी सूरीश्वर उनके मन को नित मोहे रहे...
गुरुदेव श्री की निस्पृहवृत्ति से, उनका मन प्रमुदित है।। (2)

विगत (2010) कुछ वर्षों से 'नितिन' गुरुवरश्री से प्रभावित है...
उनकी चर्या व प्रज्ञा से, नितप्रति वे आनंदित होते है...
अनेक जिज्ञासायें करके, समाधान श्रीवर से वे पाते हैं।। (3)

गुरुदेव के अद्वितीय गुणों से, (वे) महिमा युक्त अनुभव करें...
अनुमोदन समर्थन करके, निःस्वार्थ वे गुरु सेवा करें...
अनुमोदना से पुण्यार्जन कर, भावों की विशुद्धि कर रहें।। (4)

बालकवत् है 'कनक' गुरु, कोई उनका अपमान न करें...
इस हेतु उनका आजीवन (ही), सीपुर (समता-धाम) में निवास रहें...
संप्रति ग्यारह मास से अतः यहाँ ही प्रवासरत है।। (5)

वैश्विक व्यापक ज्ञान व समन्वय अनुभव ज्ञान का...
लाभ मैं सतत ले पाऊँ, यह अंतरंग शुभ भावना...
गुरुदेव निराबाध-साधना करें, 'नितिन' की 'सुवत्सल' भावना।। (6)

धर्म समाज राष्ट्र में आयी, विकृतियों का परिशोधन हो...

इस हेतु दो हजार इक्कीस (2021) में 'श्रमण-सम्मेलन' हो...
'युग-प्रतिक्रमण' कर, एक नवाचार स्थापित हो/(करें)।। (7)

सीपुर, दिनांक 15.05.2017, मध्याह्न 12.40

आचार्य कनकनंदी गुरुदेव के अलौकिक गुण

-क्षु. सुवीक्षमती

(चाल : जिन्दगी एक सफर.....)

'कनक' गुरुवर है समताधारी। सारी दुनिया है गुरु की दीवानी।। (ध्रुव)

बालकवत् है सहज-सरल, छल न सुहायें एक भी पल।
निश्छल छवि है मनभावन, समाहित चित्त है पावन।। (1)

निर्णय क्षमता है अद्वितीय, प्रज्ञा है तीक्ष्ण अकल्पनीय।
विघ्न बाधाओं में रहते अचल, धैर्यशाली साहसी है प्रबल।। (2)

वात्सल्य गुरु का है अपरम्पार, तीर्थंकर प्रकृति बंध का आधार।
विश्व शांति हेतु करते हैं भाव, वैर-विरोध का सर्वथा अभाव।। (3)

आत्म कल्याण में है रक्त, ख्याति-पूजा-लाभ से विरक्त।
भाव-विशुद्धि में है आसक्त, स्व की प्राप्ति में है अनुरक्त।। (4)

गुरुवर के आगे चले सरस्वती, पीछे-पीछे चले है धनलक्ष्मी।
भौतिक वैभव से है विरागी, आत्मिक वैभव में अनुरागी।। (5)

'सुवीक्ष' का है गुरुवर को नमन, करने हेतु दुष्ट कर्म दलन।
स्त्री पर्याय छेदन हेतु, स्व-स्वरूप के वेदन हेतु।। (6)

सीपुर, दिनांक 20.05.2017

कनक गुरु बड़े ज्ञानी है

बालकवि-कु. चैत्य जैन, 7वीं, गायरियावास, उदयपुर

(चाल : गुरुवर तेरे चरणों के.....)

कनक गुरु बड़े ज्ञानी है...मुझे ज्ञान का सागर दो।
आपके ज्ञान से मैं भी...अच्छे गुणों का संचय करूँ।।

आहारदान भी मैं करूँ...वैयावृत्ति भी नित्य करूँ।
अच्छे पुण्य का संचय करूँ...श्रीसंघ की सेवा करूँ।।

आपकी कृपा से...मुझे वैज्ञानिक धर्म मिले।
सहयोग करता रहूँगा...मुझे ज्ञान देते रहिये।।

मुझे ज्ञान ऐसा दीजिये...कि मैं आप जैसा श्रेष्ठ बनूँ।
मुझे ज्ञान इतना दीजिये...जीवन ज्ञानामृत हो जाये।।

मेरी भावना ऐसी है...मुझे सम्यक्ज्ञान मिले।
आपके अद्भुत ज्ञान से...मेरी नाव उबर जाये।।

सभी पापों का नाश करूँ...ऐसा गुण मुझे देना।
जो राग-द्वेष-मन में...वो सब कुछ मिट जाये।।

ऐसे महावीर नंदन जो...हमें ज्ञान देते हैं।
उन्हें मन-वचन-काय से...चैत्य का वंदन हो।।

अ.क्षेत्र सीपुर, दिनांक 25.05.2017, मध्याह्न प्रायः 12.30

कनकनंदी गुरुवर हमें ज्ञान दो

बालकवि-प्रियांशु जैन, 10वीं, गायरियावास, उदयपुर

(चाल : छोटी-छोटी गैया.....)

कनकनंदी गुरुवर हमें ज्ञान दो...आप तो ज्ञान रत्न भंडार हो...
आपसा महाज्ञानी नहीं देखा...इस जगत् में आप श्रेष्ठ हो...(स्थायी)...

गुरुदेव हमारे जीवन से...अवगुण हर सदगुण भर दो...
ज्ञानमृत पीकर मस्त बनूँ...ऐसा आशीष आप दे दो...(1)...

गुरुवर हमें 'मैं' का बोध कराओ...शुद्ध-बुद्ध आत्म प्राप्त कराओ...
ईर्ष्या भ्रम व अज्ञान मिटे...समता रस का भाव भर दो...(2)...

आपकी चर्चा व ज्ञान से...आपको मैंने समझ लिया...
प्रशंसा पूजा-प्रार्थना करूँ...सूर्य को दीपक क्या दिखाऊँ...(3)...

आपके ज्ञान की चर्चा तो...देश-विदेशों में होती है...
आप तो महावैज्ञानिक हो...'प्रियांशु' करे नित नमन हो...(4)...

ऐसे वात्सल्य रत्नाकर...वैज्ञानिक धर्माचार्य गुरुवर...
श्रीसंघ को मेरा वंदन...अभिनंदन शतवार...(5)...

अ.क्षेत्र सीपुर, दिनांक 28.05.2017, मध्याह्न 1.50

अलौकिक गुरु आचार्य कनकनंदी

-कुमार दैविक जैन, कक्षा-10वीं, पारसोला, प्रतापगढ़ (राज.)

(चाल : है प्रीत जहाँ की रीत सदा....., तुम दिल की धड़कन....., सायोनारा.....)

कनक गुरुवर के चरणों में...मैं पल-पल शीश झुकाता हूँ...
गुरुवर के ध्यान में लीन रहूँ...मैं यही कामना करता हूँ...(ध्रुव)...

ज्ञानी अनेक नजर आते...कनक गुरु जैसा कोई नहीं...
संत अनेक देखे दुनिया में...पर आप जैसा विज्ञानी नहीं...

'मैं' की महिमा बतलाते हो...वैज्ञानिक धर्माचार्य महान्
द्रव्य-तत्त्व का राज बताते...जैन धर्म के ये गुरु महान्...(1)...

जो विष को भी अमृत कर दे...भगवान् वही बन पाता है...
ज्वाला नहीं ज्योति बनकर...जो सौम्य जीवन जीता है...

कनकनंदी स्वाध्याय तपस्वी...नित ज्ञान-ध्यान में लीन है...
ऐसे महान् साधक गुरु को...मेरा शत-शत वंदन है...(2)...

कनक गुरुवर के आशीष से...स्वर्ग/(मोक्ष) प्राप्त हो जाता है...
जिनके सिर पर गुरुवर हाथ...उनको मिल जाती मंजिल है...

अन्य के लिए ये गुरुवर जो हो...ये हैं मेरे भगवान् सही...
ऐसे सरल-सहज गुरु को...'दैविक' का नित्य नमन हो...(3)...

समता तीर्थधाम, सीपुर, दिनांक 29.05.2017

आगम पर्व (श्रुतपञ्चमी) महोतसव सोल्लास संपन्न

समता तीर्थधाम, अतिशय क्षेत्र सीपुर स्थित देव-आगम-गुरु जिनालय के एकांत-शांत-निर्जन वातावरण में गत प्रायः 11½ माह से विराजित निस्पृह समता योगी श्रमणाचार्यश्री कनकनंदी जी गुरुदेव श्रीसंघ सान्निध्य में अनूठा ज्ञान पर्व यानी श्रुतपञ्चमी महोत्सव आनंदपूर्वक संपन्न हुआ। इस अवसर पर क्षेत्र के अध्यक्ष मणिलाल जी गोटी परिवार द्वारा श्रुतपञ्चमी विधान आयोजित हुआ। सर्वप्रथम भगवान् श्रेयांसनाथ, देवी सरस्वती जिनवाणी माँ व आचार्य विमलसागर जी गुरुदेव की भव्य त्रय प्रतिमाओं का पञ्चामृताभिषेक हुआ।

वैश्विक प्रभावकारी साहित्य सृजेता आचार्यश्री कनकनंदी गुरुदेव द्वारा सृजित गीताञ्जली द्वय 1. ''पूजा-प्रार्थना-आरती गीताञ्जली'', धारा-66, ग्रथांक-279 व 2. ''सर्वोत्तम-गीताञ्जली, धारा-63, ग्रथांक-271'' को विमोचन किया गया। पूजा-प्रार्थना-आरती गीताञ्जली कृति की रचना व प्रकाशन गुरुभक्त, ऊर्जावंत, उदारभावी नितिन जैन, सीपुर की स्व-प्रेरित भावना व स्वैच्छिक अर्थ सौजन्य से हुई है। इस कृति में आचार्यश्री ने चौबीस तीर्थंकरों, सरस्वती व गुरु आदि की पूजाएँ आगम-आध्यात्म-विज्ञान-मनोविज्ञान आदि को दृष्टिगत रखते हुए सृजित की हैं, जो कि अत्यंत तार्किक रोचक व प्रेरक बन पड़ी हैं। इस अवसर पर माँ-जिनवाणी सरस्वती की पूजा इसी कृति से सामूहिक रूप से की गई जिसमें आध्यात्मिक विजय हेतु पूज्य जिनवाणी-सरस्वती माँ के गुणानुस्मरण-गुणानुवाद व गुणानुकरण के भावों की अभिव्यक्ति से उपस्थित पूजकगण आनंदित हुए।

विशेष उल्लेखनीय यह है कि आचार्यश्री अन्य किसी भी पर्व आदि को मनाने हेतु कभी भी कोई आग्रह या दबाव आदि नहीं करते, किन्तु मात्र ज्ञान पर्व श्रुतपञ्चमी मनाने हेतु व्यक्ति से लेकर समाज तक को प्रेरित व प्रोत्साहित करते हैं, जिससे जिनवाणी के ज्ञान-विज्ञान की विशिष्ट प्रभावना हो सकें। इसी भावना से आचार्यश्री ने

गद्य-पद्यात्मक बहुआयामी प्रायः 280 ग्रंथों का अब तक सृजन किया है, आगे प्रवाहमान है।

-शुभकामनाओं सह श्रमण मुनि सुविज्ञसागर

इस साल इतिहास की संशोधित पुस्तक आयेगी

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (एनसीईआरटी) द्वारा अप्रैल में 11वीं कक्षा की इतिहास की संशोधित पुस्तक जारी की जायेगी। इस पुस्तक में तीर्थंकर महावीर और गौतम बुद्ध को लेकर जो जानकारियाँ थीं, उसे लेकर जैन समाज में लंबे समय से रोष चल रहा था। प्रसिद्ध जैन विद्वान् डॉ. प्रेमसुमन जैन ने जैन गजट (साप्ताहिक, लखनऊ) के गत 2 मार्च के अंक और दिगंबर जैन महासमिति पत्रिका (पाक्षिक, दिल्ली) के 1-15 मार्च के अंकों में प्रकाशित समाचारों के आधार पर स्पष्ट किया है कि एनसीईआरटी ने 11वीं कक्षा की इतिहास पुस्तक के 10वें अध्याय में प्रकाशित जिन जानकारियों को लेकर एतराज उठाया जा रहा है, उसके मद्देनजर संशोधन कर लिया गया है। संशोधित पुस्तक आगामी 1 अप्रैल को प्रकाशित की जायेगी। पुस्तक में तीर्थंकर महावीर और गौतम बुद्ध के जीवन-काल, दर्शन, सिद्धांत आदि को लेकर जो जानकारियाँ दी गई थीं, उन पर जैन संतों सहित समुदाय ने खूब आपत्तियाँ जताई थीं। इस मामले में एनसीईआरटी की सचिव अनिता कौल ने अपने 31 जनवरी के पत्र में भी स्पष्ट किया है कि आपत्तियों का निवारण करते हुए संशोधित पुस्तक अप्रैल में जारी कर दी जायेगी। **उल्लेखनीय है कि कुछ समय पूर्व जबकि उदयपुर में वैज्ञानिक धर्माचार्य कनकनंदी महाराज का वर्षावास था, यहाँ से भी उक्त पाठ पर आपत्तियाँ करते हुए संशोधन की माँग पर एनसीईआरटी को ज्ञापन भेजा गया था। इस पर गत दिसंबर में ही वहाँ से संशोधन का आश्वासन दे दिया गया था।**

विषयानुक्रमणिका

अ.क्र.	विषय	पृ.सं.
1.	अतिशय क्षेत्र सीपुर में आचार्यश्री कनकनंदी श्रीसंघ को आजीवन चातुर्मास कराने हेतु 'नितिन' का अनुरोध	2
2.	'''सीपुर अतिशय क्षेत्र में आचार्यश्री कनकनंदी श्रीसंघ को आजीवन चातुर्मास' करने हेतु 'नितिन' का अनुरोध''-आर्यिका सुवत्सलमती	3
3.	आचार्य कनकनंदी गुरुदेव के अलौकिक गुण	4
4.	कनक गुरु बड़े ज्ञानी है	5
5.	कनकनंदी गुरु हमें ज्ञान दो	5
6.	अलौकिक गुरु आचार्य कनकनंदी	6
7.	आगम पर्व (श्रुतपंचमी) महोत्सव सोल्लास संपन्न	7
8.	इतिहास की संशोधित पुस्तक	8
	श्रेष्ठता गीताञ्जली	
1.	पवित्र भाव-व्यवहार है प्रार्थना/(पूजा)	11
2.	महापुरुषों के महान् गुण	21
3.	स्व-पर को मैं प्रोत्साहित करूँ	32
4.	क्षमता व ज्ञान होने पर भी पर अपकार न करूँ	37
5.	मेरी साधना : नवकोटि से बनूँ सरल-सहज-पावन	44
6.	मेरी भाव कहानी	69
7.	स्व-पर गुण-दोष ज्ञान से स्व-सुधार करूँ	81
8.	परतंत्रता त्यागकर स्वकेन्द्रित बनूँ	88
9.	न्यायोचित युद्धकर्त्ता से भी अधिक पापी : गुण-गुणी निंदक	99
10.	अनंत की आत्मकथा	113
11.	ध्यान की आत्मकथा	121
12.	अहंकार की आत्मकथा	135
13.	वृक्ष की शिक्षा : बच्चों के द्वारा	154

14. स्व-वश V/S परवश 156
15. विनय V/S पूजा 164
16. दान V/S त्याग 169
17. समता V/S ध्यान 174
18. मेरा (आ. कनकनंदी) विश्व रूप 181
19. मैं ही मेरे लिए ग्राह्य/(सर्वस्व), अन्य सभी अग्राह्य (परिग्रह) 182
20. मानव यदि है तुम्हें आकर्षक (सुंदर) बनना 192
21. स्व-परिणति में ही शांति... 196
22. अंधानुकरण बिन संपूर्ण बनूँ 208

मृत्यु से पूर्व मैं अमृत होना चाहता हूँ

-आचार्यश्री कनकनंदी जी

(चाल : तेरे प्यार का आसरा.....)

मृत्यु से पूर्व (मैं) अमृत होना चाहता हूँ, पूर्ण नहीं तो श्रद्धा/(प्रज्ञा) से होना चाहता हूँ।
मैं हूँ जीव द्रव्य जो सद्द्रव्य लक्षण है, उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यमय चैतन्यवान् है।। (1)

सत्य होने से मैं शाश्वतमय हूँ, अनादि अनिधन ध्रौव्यमय हूँ।
उत्पाद-व्यय मेरी पर्याय रूप है, शुद्ध व अशुद्ध में तन्मयं रूप है।। (2)

अनंत गुणमय हूँ द्रव्य होने से, अतः मेरे गुण है अनादि काल से।
अनंत ज्ञान-दर्शन-वीर्य-सुखादि गुण, सुप्त में विद्यमान कर्म के कारण।। (3)

राग-द्वेष-मोहादि से सुप्त है गुण, रागादि क्षय कर प्रकट करूँ गुण।
इस हेतु ही करूँ सभी प्रयत्न, इससे बन रहा हूँ मैं अमृतमय।। (4)

राग-द्वेष-मोहादि है मेरा विभाव, विभाव सभी होते मृत स्वभाव।
शुद्धात्मा स्वभाव है अमृत रूप, शुद्धात्मा होना ही है (मेरा) परम लक्ष्य।। (5)

अतः मैं निशंक हूँ निर्विकल्प, निर्भय हूँ, मैं स्व-निर्भर-स्वरूप।
चैतन्य-चमत्कार हूँ मैं साम्य रूप, 'कनक' मैं हूँ निजानंद स्वरूप।। (6)

श्रेष्ठता गीताञ्जली

पवित्र भाव-व्यवहार है प्रार्थना/(पूजा)

(चाल : आत्मशक्ति.....)

पवित्र भावना होती प्रार्थना/(पूजा), जो स्व-पर-विश्व हित हेतु होती।
संकीर्ण स्वार्थ व राग-द्वेष रहित, ईर्ष्या-घृणा-तृष्णा रहित होती।।

स्वयं को पवित्र करना है प्रार्थना, श्रद्धा-प्रज्ञा-शांति युक्त होती।
आध्यात्मिक महापुरुषों के गुणस्मरण गुणकीर्तन पूजन प्रार्थना होती।।

प्रसन्न भाव से गुणी-गुण-प्रशंसा (व) अनुमोदना (व) अनुकरण भी प्रार्थना।
विश्व मंगल की कामना है प्रार्थना, उत्तम भाव-व्यवहार (भी) होती प्रार्थना।।

उत्तम साहित्य अध्ययन है प्रार्थना, साधु समागम भी होती प्रार्थना।
परदोष कथन न करना प्रार्थना, आत्म तत्त्व की भावना प्रार्थना।।

सभी जीव प्रति हित बोलना प्रार्थना, हितमार्ग में प्रेरित करना प्रार्थना।
मैत्री-प्रमोद-करुणा भाव प्रार्थना, समता-उदारता भाव प्रार्थना।।

इससे भिन्न न होती प्रार्थना, जो संकीर्ण स्वार्थ आदि सहित।
संकीर्ण स्वार्थ की प्रार्थना है भीख, ईर्ष्या-घृणा-तृष्णा से जो सहित।।

ईर्ष्यादि से युक्त जो होती प्रार्थना, वह यथार्थ से नहीं प्रार्थना।
यह तो चोर डाकू कषायी की प्रार्थना, गोमुख व्याघ्र सम प्रार्थना।।

(सही) प्रार्थना से होती आत्म जागृति, जिससे वृद्धि होती आत्मशक्ति।
जिससे पड़ता सकारात्मक प्रभाव, पाप नाश होता बढ़ता पुण्य।।

जिससे मिलते सुद्रव्य क्षेत्रादि, आरोग्य से लेकर वैभव आदि।
परंपरा से मिले स्वर्ग व मोक्ष, प्रार्थना से चाहे 'कनकनंदी' मोक्ष।।

सीपुर, दिनांक 19.05.2017, रात्रि 10.21

संदर्भ-

प्रिय भक्तिः/अथेष्ट प्रार्थना

स्वात्माभिमुख-संवित्ति, लक्षणं श्रुत-चक्षुषा।

पश्यन्पश्यामि देव त्वां केवलज्ञान-चक्षुषा।। (1)

भावार्थ-हे वीतराग जिनेन्द्र देव! स्वकीय आत्मा के संवेदन रूप लक्षण से युक्त अथवा स्वसंवेदन लक्षण युक्त आपको श्रुतज्ञान के माध्यम से देखते हुए, आपके सामान्य स्वरूप का चिंतन करता हुआ, मैं आज आपकी साक्षात् केवलज्ञान मंडित अवस्था का ही दर्शन कर रहा हूँ। ऐसा मुझे अनुभव में आ रहा है। अथवा

जो भव्य जीव श्रुतज्ञान रूप चक्षु से आगम के अनुसार आपकी आराधना करता है, वह केवलज्ञानरूपी नेत्र से सर्वलोक का अवलोकन करता है अर्थात् केवलज्ञान को अवश्य प्राप्त करता है।

शास्त्राभ्यासो जिनपति-नुतिः, संगतिः सर्वदार्यैः,
सद्वृत्तानां गुणगण-कथा, दोषवादे च मौनम्।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्वे,
संपद्यन्तां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः।। (2)

भावार्थ-हे जिनेन्द्रदेव! मैं जब तक मुक्त अवस्था को प्राप्त न हो जाऊँ तब तक प्रत्येक भव में मैं जिनेन्द्र कथित सच्चे आगम का अभ्यास करता रहूँ। तब तक आपके चरणों में नतमस्तक हुआ, आपकी स्तुति करता रहूँ, हमेशा साधु मनुष्यों की, आर्य पुरुषों की संगति करता रहूँ। आपके चरणों की आराधना का एकमात्र फल यही हो कि रत्नत्रयधारियों, सदाचारियों, के दोषों के कथन में मैं मौन रहूँ। प्राणीमात्र में हितकर-प्रिय वचनों से वार्तालाप करूँ और अंत में यही प्रार्थना है कि मैं अपने आत्म तत्त्व की भावना मुक्ति-पर्यंत भाता रहूँ।

जैनमार्गरुचिरन्यमार्ग निर्वेगता, जिनगुणस्तुतौ मतिः।
निष्कलंक विमलोक्ति भावनाः, संभवन्तु मम जन्म-जन्मनि।। (3)

भावार्थ-हे वीतराग प्रभो! मुक्ति पर्यंत प्रत्येक भव में मुझमें जिनेन्द्र कथित रत्नत्रय-रूप मुक्ति मार्ग के प्रति अविचल श्रद्धा बनी रहे। एकांत, मिथ्यामतों में या संसार-मार्ग में मेरी रुचि अत्यंत दूर रहे। मेरी बुद्धि सदा जिनेन्द्रदेव के अनुपम अतुल गुणों के स्तवन में लगी रहे तथा निर्दोष, निष्कलंक, निर्मल ऐसी जिनेन्द्र वाणी-जिनवाणी मुझे जन्म-जन्म में प्राप्त होती रहे। यह प्रार्थना करता हूँ।

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां, यतीन्द्र-सामान्य-तपोधनानाम्।

देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः, करोतु शान्तिं भगवन्-जिनेन्द्रः।। (14)

भावार्थ-हे जिनेन्द्रदेव! श्रद्धा से आपकी आराधना करने वाले आराधकों को, धर्म के आयतन-देव, शास्त्र, गुरु और तीर्थों की रक्षा करने वालों को, आचार्यों, सामान्य तपस्वियों, मुनियों आदि सर्व संयमियों को, देश, राष्ट्र, नगर, प्रजा सभी को शांति प्रदान कीजिये।

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु, बलवान् धार्मिको भूमिपालः।
काले काले च सम्यग वितरतु मघवा, व्याधयो यान्तु नाशम्।।
दुर्भिक्षं चौरमारिः क्षणमपि जगतां, मास्मभूज्जीव-लोके।
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं, सर्व-सौख्य-प्रदायि।। (15)

भावार्थ-हे प्रभो! लोक में समस्त प्रजा का कल्याण हो, राजा बलवान् और धार्मिक हो, सर्व दिग्दिगन्त में समय-समय पर मेघ यथायोग्य जलवृष्टि करते रहे, कहीं भी, कभी भी अतिवृष्टि रूप प्रकोप न हो, मानसिक-शारीरिक बीमारियों का नाश हो तथा लोक में जीवों को कभी भी क्षणमात्र के लिए भी दुष्काल, चोरी, मारी रोग, हैजा, मिरगी आदि न हों। वीतराग जिनेन्द्रदेव का धर्मचक्र जो प्राणीमात्र के लिए सुखप्रदायक है, सदा प्रभावशाली बना रहे। हे विभो! आपका जिनशासन सर्वलोक में विस्तृत हो, लोकव्यापी जिनधर्म कल्याणकारी हो।

तद् द्रव्यमव्ययमुदेतु शुभः स देशः, संतन्यतां प्रतपतां सततं सकालः।
भावः स नन्दतु सदा यदनुग्रहेण, रत्नत्रयं प्रतपतीह मुमुक्षवर्गे।। (16)

भावार्थ-जिनके अनुग्रह से मोक्ष के इच्छुक मुनिजनों का निर्दोष रत्नत्रय प्रकाशमान हो वह द्रव्य उत्पन्न हो। अर्थात् निर्दोष आहार, औषध आदि व संयम के उपकरण पिच्छी-कमंडलु आदि ऐसा वह शुभ द्रव्य है तथा मुनियों को यह निर्दोष रत्नत्रय की वृद्धि करने वाला द्रव्य जिस क्षेत्र में प्राप्त हो वह शुभ देश/क्षेत्र है। दिगम्बर मुनियों के सदा उत्तम रत्नत्रय की वृद्धि जिस काल में हो वह शुभ काल है तथा उन मुनियों के सदा आत्मानंद की प्राप्ति से प्राप्त निर्मल परिणाम का होना शुभ भाव है। अर्थात् जिनके योग से मुनियों का रत्नत्रय उन्नतिशील बने वही शुभद्रव्य, शुभक्षेत्र, शुभकाल व शुभभाव है ऐसा जानना चाहिए।

प्रध्वस्त घाति कर्माणः, केवलज्ञान भास्कराः।

कुर्वन्तु जगतां शान्तिं, वृषभाद्या जिनेश्वराः।। (17)

भावार्थ-ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय व अंतराय इन चार घातिया कर्मों का जिन्होंने समूल क्षय कर दिया है तथा जो केवलज्ञानरूपी सूर्य से सर्वजगत् को प्रकाशित करते हुए शोभा को प्राप्त है ऐसे वृषभनाथ को आदि लेकर तीर्थंकर महावीर पर्यंत चतुर्विंशति तीर्थंकर जगत् के समस्त प्राणियों को शांति, सुख, क्षेम, कुशल प्रदान करें।

शांति शिरोधृत जिनेश्वर शासनानां,
शान्तिः निरन्तर तपोभव भावितानां।
शान्तिः कषाय जय जृम्भित वैभवानां,
शान्तिः स्वभाव महिमानमुपागतानाम्।। (1)

भावार्थ-हे शान्तिनाथ भगवान्! जिनशासन की आज्ञा को शिरोधार्य करने वाले भव्य जीवों को शांति/सुख की प्राप्ति हो। अखंड रूप से तप में लीन मोक्ष के इच्छुक मुनियों को शांतरस रूप शुक्लध्यान की प्राप्ति हो। कषायों को जीतकर आत्मानंद को प्राप्त करने वालों को समतारस रूप शांति प्राप्त हो तथा जो आत्म स्वभाव की महिमा को प्राप्त कर चुके हैं ऐसे यतियों को शाश्वत शांतिरूप सिद्धपद की प्राप्ति हो।

जीवन्तु संयम सुधारस पान तृप्ता,
नंदंतु शुद्ध सहसोदय सुप्रसन्नाः।
सिद्धयंतु सिद्धि सुख संगकृताभियोगाः,
तीव्रं तपन्तु जगतां त्रितयेऽर्हदाज्ञाः।। (2)

भावार्थ-हे शांतिनाथ भगवन्! संयमरूपी अमृत का पान करने से पूर्ण तृप्त ऐसा मुनि समूह सदा जीवन्त रहे अर्थात् पृथ्वी पर सदा मुनिजनों का विचरण होता रहे। आत्मानंद के उदय से सदा प्रसन्न रहने वाले यतिगण शाश्वत आनंद को प्राप्त हों। मुक्ति लक्ष्मी की प्राप्ति के लिए उपसर्ग, परिषहों को सहनकर घोर तपश्चरण का उद्योग करने में तत्पर मुनिराज सिद्धिसुख को प्राप्त हों तथा अर्हंत देव का शासन तीन लोक में संपूर्ण पृथ्वीमंडल पर विशेष प्रभावना को प्राप्त हो।

शान्तिः शं तनुतां समस्त जगतः, संगच्छतां धार्मिकैः।

श्रेयः श्री परिवर्धतां नयधरा, धुर्यो धरित्रीपतिः।।
सद्विद्यारसमुद्गिरन्तु कवयो, नामाप्यघस्यास्तु मां।
प्रार्थ्यं वा कियदेक एव, शिवकृद्धर्मो जयत्वर्हताम्।। (3)

भावार्थ-हे शांतिनाथ प्रभो! तीन लोक के समस्त प्राणी सुखी हों, धर्मात्मा जीवों को कल्याणकारी स्वर्ग-मुक्त लक्ष्मी प्राप्त हो, नीति-न्याय का घर-घर में प्रचार हो, पृथ्वी का राजा शूरवीर हो। विद्वान् लोग उत्तम शिक्षा का प्रसार करे जिससे कोष में पाप का नाम भी न रहे/पृथ्वी पर पाप का नाम भी न रहे और अंत में क्या माँगूँ, बस एक ही माँगता हूँ, वह यह कि ''वीतराग जिनदेव/अर्हंत भगवन्त का मोक्षदायक जिनधर्म'' सदा पृथ्वी-मंडल पर जयवन्त रहे।

प्रार्थना से स्वस्थ तन-मन

एक नये शोध के मुताबिक, प्रार्थना करने से शरीर स्वस्थ रहता है और आयु भी बढ़ती है। यही नहीं, प्रार्थना करने से ब्लड प्रेशर नियंत्रित रहता है। यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया में हुए इस शोध में पाया गया कि धार्मिक प्रवृत्ति के लोगों में कई तरह की बीमारियाँ होने की आशंका भी कम होती हैं। रोज प्रार्थना करने से व्यक्ति को ध्यान केंद्रित करने में मदद मिलती है।

कितना अच्छा हो अगर हमें अपने मन की भावनाओं पर नियंत्रण करना आ जाये या कम से कम हम अपने मन को कुछ ऐसा प्रशिक्षण दे सके कि किसी भी परिस्थिति में दुःख हमें छू तक न जाये और हम हमेशा खुश रहें।

दिमाग को दीजिये खुश रहने की ट्रेनिंग

अपने नजदीकी लोगों को किसी दुःख में दुःखी देखकर कई बार मन में यह खयाल आता है कि काश कोई ऐसा स्विच हमारे पास होता जिसे दबाते ही झट से हम सबका मन प्रसन्न हो जाता है। खुशियों की यह चाबी तो अभी दूर की कौड़ी है लेकिन शोधकर्त्ताओं ने यह दावा जरूर किया है कि हम अपने मन को कुछ इस तरह प्रशिक्षित कर सकते हैं कि किसी भी परिस्थिति में दुःख हमें छू तक न जाये ताकि हम हमेशा प्रसन्न रह सकें। लंबे समय से यह धारणा रही है और यह सही भी है कि स्वस्थ शरीर और चिंतामुक्त मन दोनों ही हमारे समग्र विकास का आवश्यक अंग हैं।

जाहिर है अगर हम चिंतामुक्त रहे तो हम अपेक्षाकृत लंबा और खुशहाल जीवन बिता सकते हैं। इसके अलावा ऐसे लोगों की जिंदगी में रिश्ते भी औरों की अपेक्षा मजबूत होते हैं साथ ही उनके अपराध की ओर प्रवृत्त होने की आशंका भी कम होती है। सुप्रसिद्ध ब्रिटिश मनोवैज्ञानिक क्रिस्टीन वेबर कहती हैं कि मनोविज्ञान के क्षेत्र में हाल के दिनों में हुई कुछ नई खोजों से पता चला है कि कोई व्यक्ति जब बेहद खुश होता है उसके दिमाग का एक खास हिस्सा कुछ ज्यादा ही सक्रिय हो जाता है। कहा जा सकता है कि दिमाग का यह हिस्सा खुशियों से ताल्लुक रखता है।

इस एक खोज को ध्यान में रखते हुए ही इटली के मनोविज्ञानी जियोवानी फावा ने अपने मरीजों पर एक प्रयोग किया। उन्होंने उनको प्रोत्साहित करना शुरू किया कि वे जब खुश रहते हैं तो अपने खुशी के क्षणों और उसकी वजहों को डायरी में दर्ज कर लिया करें। बाद में डायरी में दर्ज आँकड़ों का विश्लेषण करने पर फावा ने पाया कि एक बार जब लोगों ने अपने जीवन में सकारात्मक क्षणों को डायरी में लिख दिया तब खुशहाली के उन क्षणों ने उनकी स्मृति में स्थायी रूप से जगह बना ली। **इससे यह स्पष्ट हुआ कि खुशियों के बीते पलों को दोहराना हमारे भावी जीवन में खुशियों की राह आसान करता है।**

इससे पहले भी तमाम शोधों से यह बात साबित हो चुकी है कि जिंदगी के प्रति आशावादी रुख रखने वाले लोग जिंदगी के नकारात्मक दौर का सामना अधिक मजबूती से करते हैं और उससे बेहतर ढंग से निपटते हैं।

हमें विचारों में सकारात्मकता का संकल्प मजबूत करना चाहिए। इसके माध्यम से हम निम्नस्तरीय भावनाओं को दिव्यता में बदल सकते हैं और तब हमारे भीतर खिलता है प्रेरणा शक्ति का फूल।

इंट्यूशन जगाना है तो फूलों जैसे बनने का प्रयास करें

-श्री श्री निमिषानंद, संस्थापक, श्री पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट

जीवन एक सुंदर, कोमल और सुगंधित फूलों का बुके है। फूल सूक्ष्मता, कोमलता, सौजन्यता, धैर्य और सहिष्णुता की अभिव्यक्ति है। सुगंधित पुष्प ईश्वर को अर्पित किये जाते हैं ताकि हमारे जीवन में ज्ञान की सुगंध भर जाये और हम अपने

भीतर दिव्य गुणों को विकसित कर सकें। इसके लिए पहले हमें प्रत्येक दिन अपनी सोच में सकारात्मक संकल्प गूँथकर निम्नस्तरीय सांसारिक भावनाओं को दिव्य भावनाओं में बदलकर साधना करनी होगी।

इससे हमारे अंदर प्रेरणाशक्ति का फूल खिलता है, जिसे हम इंट्यूशन के नाम से भी जानते हैं। यह शक्ति सब कुछ जानती है और दिव्य कृपा की सर्वोच्च अभिव्यक्ति है। हमारे लिए यह शक्ति बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह हमें पहले ही देखकर किसी स्थिति के समाधान या समस्या को टालने की योग्यता देती है। इसे एक ही समय में भूत, वर्तमान और भविष्य का ज्ञान रहता है। प्रारंभ में हमें बिजली की कौंध की तरह बीच-बीच में अंतर्दृष्टि के रूप में इंट्यूशन का अनुभव होगा। यानी अभी हम ईश्वर की कृपा के लिए पूरी तरह परिपक्व नहीं हुए हैं।

इंट्यूशन के लिए 'शांत मन'-समाधान स्थिति-के रूप में मजबूत व स्थिर आधार की जरूरत होती है। हमें स्वयं और दूसरे लोगों के साथ हमेशा शांत बने रहने का प्रयत्न करते रहना होगा ताकि इंट्यूशन के बीज का अंकुरण शुरू हो सके। यदि एक भी नकारात्मक विचार या भावना बनी रहती है तो यह प्रेरणाशक्ति के प्रवाह का विरोध करेगी। समस्याएँ, निराशा, भय, आवेश, ईर्ष्या, क्रोध और अधीरता जैसी नकारात्मक भावनाओं को जन्म देती हैं, जो इंट्यूशन के अंकुरण के लिए घातक है।

अब तक तो दिव्य कृपा की हमारी समझ अच्छी सेहत, भरपूर धन-दौलत और प्रसिद्धि तक सीमित रही है। ये तो केवल दिव्य कृपा के फल हैं। इन फलों का प्रारंभ बिंदु तो इंट्यूशन ही है। शरीर की जरूरतों को समझना, पैसा कमाने के लिए आइडिया, चतुराईपूर्वक उठाये गये कदम, कब तेजी दिखाना, कब धीमे चलना यह सब विचार हमें इंट्यूशन के जरिये ही उजागर होते हैं। प्रेरणाशक्ति हम सबमें बह रही है लेकिन, अनियमित रूप से, रुक-रुककर। इसका कारण यह है कि हम स्थिति पर बिना ज्यादा विचार किये प्रतिक्रिया देते हैं। कठोर या रूखा व्यवहार कर सकते हैं, हताशा महसूस कर सकते हैं या भड़क सकते हैं। इसकी बजाय अपने विचार फूलों जैसे कोमल होने दीजिये। दिल को छू लेने वाली कोमल भावनाओं के साथ बोलें। जिस फूल को आप बहुत पसंद करते हैं उसकी सुंदरता, उसके गुणों को विजुअलाइज करें, कल्पना में देखें, महसूस करें। उदाहरण के लिए यदि आपको गुलाब पसंद है तो

इसके रंग, इसकी कोमल बनावट, गहरी खुशबू और सुंदरता को विजुअलाइज करें। हमारे आस-पास चाहे जैसा ही वातावरण क्यों न हों, यदि हम दैवीय गुणों को हमारे अस्तित्व का अंग बना लेंगे तो हम इससे अछूते रहकर साहसी व सुंदर बन सकते हैं।

जैसे-जैसे हमारी साधना गहरी होती जायेगी, हमारी प्रेरणाशक्ति बढ़कर हमारे पूरे जीवन को अपने आगोश में ले लेगी। यह तो नदी की तरह है, जो पर्वत-शिखर पर टपकती बूँदों से शुरू होती है और नीचे बहते-बहते विशाल जलराशि एकत्र कर आखिरकार शक्तिशाली महासागर का विस्तार ले लेती है। इंट्यूशन भी व्यापक, असीम महासागर है। इसे रोका नहीं जा सकता, नियंत्रित नहीं किया जा सकता। जब सरस्वती देवी इंट्यूशन के जरिये हमारे मन व बुद्धि में दिव्य नृत्य शुरू करती हैं, तो कोई उसे रोक नहीं सकता। जैसे फूलों में सुगंध प्राकृतिक होती है उसी तरह दिव्य गुण और इंट्यूशन हमारे अस्तित्व के अंग हो जायेंगे। हम ज्ञान के सुंदर, सुगंधित पुष्प हो जायेंगे, जो दिव्यता पर अर्पित होने के लिए तैयार है।

कुटिलता व अधर्म से मानव समृद्धि और संपन्नता पाता है। अच्छे भाग्य का अनुभव करता है। शत्रुओं को भी जीत लेता है परंतु अंत में उसका विनाश निश्चित हैं।

अच्छा व्यक्ति बनने से मिलती है अच्छी सेहत

-रमेश बिजलानी

अच्छी सेहत के लिए व्यायाम और उचित आहार तो आवश्यक है और इसकी चर्चा भी खूब होती है लेकिन, मानसिक शांति भी उतनी ही या शायद कहीं अधिक जरूरी है। मानसिक शांति दूसरों की मदद करने से मिलती हैं। सच्चा प्रेम पाने और दूसरों को देने से मानसिक शांति मिलती है। अच्छे गुण अपनाने से प्रसन्नता मिलती है और प्रसन्नता से अच्छी सेहत।

शांति और मानसिक स्थिरता अच्छे स्वास्थ्य की अनिवार्य शर्त है।
किसी भी तरह की चंचलता, संकीर्णता बीमारी को लंबा खींचती है।।

-श्री माँ, महर्षि श्रीअरबिंदो की सहयोगिनी

हम प्राकृतिक रूप से बीमार होने के लिए नहीं सेहतमंद रहने के लिए बने हैं। ज्यादातर समय, हममें से ज्यादातर लोग बीमार नहीं पड़ते। हम बीमार पड़ते भी है तो स्व-उपचार प्रणाली हमारी सेहत को बहाल कर सकती है। हम जो औषधियाँ लेते हैं

वे हमारी उपचार प्रणाली के माध्यम से ही असर दिखाती हैं। यदि यह प्रणाली ठीक न हो तो इलाज असंभव हो जाता है जैसा कि कई लाइलाज बीमारियों में हम देखते हैं। किंतु, वह संरक्षण-तंत्र, जो हमें अच्छी सेहत में रखता है और वह तंत्र जो बीमार होने पर स्वास्थ्य को पुनः बहाल करता है उसे सर्वश्रेष्ठ हालत में रखने के लिए उचित परिस्थितियों की जरूरत होती हैं। इन दोनों तंत्रों को चाक-चौबंद रखने के लिए व्यायाम और आहार की तरह मानसिक शांति को पर्याप्त महत्व नहीं दिया गया है। आज चारों ओर एक्सरसाइज और डाइट की चर्चा है। मानसिक शांति के नाम पर सिर्फ मेडिटेशन की बात होती है। सच तो यह हैं कि कई बार मनोवैज्ञानिक तत्त्व भौतिक तत्त्वों पर भारी पड़ते हैं। जिन लोगों को इसकी सच्चाई पर संदेह है या इससे कही-सुनी बात मानते हैं उन्हें बता दे कि यह आधुनिक विज्ञान द्वारा साबित तथ्य है।

यदि मानसिक शांति इतनी ही महत्वपूर्ण है तो सवाल उठता है कि हम इसे कैसे पायें। मानसिक शांति कर्मयोग की भावना से किये कर्म से आती है अर्थात् फल से लगाव रखे बगैर कर्त्तव्य के रूप में अपने कर्म को सर्वोत्तम में अंजाम देना। फिर मानसिक शांति दूसरों की मदद करने से मिलती है। सच्चा प्रेम पाने और दूसरों को देने से मानसिक शांति मिलती है। क्रोध, ईर्ष्या, संकीर्णता और घृणा को दूर रखने से मानसिक शांति निर्मित होती है। कृतज्ञता, क्षमाशीलता और उदारता जैसे सकारात्मक विचार विकसित करने से मानसिक शांति मिलती है। यह भय और असुरक्षा के अभाव में पैदा होती है। सफलता व विफलता, सुविधा-असुविधा, अपमान-सम्मान से अप्रभावित रहकर आती है।

इसका मतलब यह नहीं कि यह मोटी चमड़ी होने के कारण आती है बल्कि इसलिए कि व्यक्ति इन विरोधी स्थितियों को समान प्रसन्नता (समत्व) के साथ स्वीकार करता है। समत्व इस अहसास से आता है कि जिन घटनाओं को हम प्रिय और जिन्हें हम अप्रिय समझते हैं, दोनों, वास्तव में आध्यात्मिक विकास के अवसर होते हैं। यह अहसास तभी प्राप्त होता है जब हम उपरोक्त गुणों को अपनाकर दुर्गुणों से मुक्त हो जाये अथवा कम से कम प्रयत्न तो करें। संक्षेप में आध्यात्मिक जीवन जीने से मानसिक शांति आती है। सरल शब्दों में कहें तो मानसिक शांति अच्छा व्यक्ति बनने से आती है। अब सारी कड़ियाँ जुड़ने के बाद अच्छी सेहत का रहस्य आपके

सामने खुल गया है-अच्छा होने से प्रसन्नता मिलती है और प्रसन्नता से अच्छी सेहत।

आकर्षण का नियम जीवन का महान् रहस्य है

आकर्षण का नियम कहता है कि समान चीजें समान चीजों को आकर्षित करती हैं, इसलिए जब आप एक विचार सोचते हैं, तो आप उसी जैसे अन्य विचारों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं।

विचार चुंबकीय हैं और हर विचार की एक फ्रीक्वेंसी होती है। जब आपके मन में विचार आते हैं, तो वे ब्रह्माण्ड में पहुँचते है और चुंबक की तरह उसी फ्रीक्वेंसी वाली सारी चीजों को आकर्षित करते हैं। हर भेजी गई चीज स्रोत तक यानी आप तक लौटकर आती है।

आप मानवीय ट्रांसमिशन टॉवर की तरह हैं और अपने विचारों से फ्रीक्वेंसी प्रसारित कर रहे हैं। अगर आप अपनी जिंदगी में कोई चीज बदलना चाहते हैं, तो अपने विचार बदलकर फ्रीक्वेंसी बदल लें।

आपके वर्तमान विचार आपके भावी जीवन का निर्माण कर रहे हैं। आप जिसके बारे में सबसे ज्यादा सोचते हैं या जिस पर सबसे ज्यादा ध्यान केन्द्रित करते हैं, वह आपकी जिंदगी में प्रकट हो जायेगा।

आपके विचार वस्तुएँ बन जाते हैं।

आकर्षण का नियम प्रकृति का नियम है। गुरुत्वाकर्षण के नियम की तरह ही यह भी निष्पक्ष है।

जब तक आप लगातार विचार करके किसी चीज का आह्वान न करे, तब तक कोई भी चीज आपकी जिंदगी में नहीं आ सकती।

क्या आप सोच रहे हैं, यह जानने के लिए खुद से पूछे कि आप कैसा महसूस कर रहे हैं। भावनाएँ मूल्यवान् साधन हैं। वे हमें तत्काल बता देती हैं कि हम क्या सोच रहे हैं।

बुरा महसूस करते समय अच्छे विचार रखना असंभव है।

आपके विचार आपकी फ्रीक्वेंसी तय करते हैं और आपकी भावनाएँ आपको फौरना बता देती हैं कि आप किस फ्रीक्वेंसी पर हैं। जब आप बुरा महसूस करते हैं,

तो आप ज्यादा बुरी चीजें आकर्षित करने की फ्रीक्वेंसी पर होते हैं। जब आप अच्छा महसूस करते हैं तो आप ज्यादा अच्छी चीजों को प्रबलता से अपनी ओर आकर्षित करते हैं।

मनोभाव-परिवर्तक, जैसे सुखद यादें, सुंदर प्राकृतिक दृश्य या आपका पसंदीदा संगीत आपकी भावनाओं को बदल सकते हैं और पल भर में आपकी फ्रीक्वेंसी बदल सकते हैं।

प्रेम का भाव वह सर्वोच्च फ्रीक्वेंसी है, जिसे आप ब्रह्माण्ड में भेज सकते हैं, आप जितना ज्यादा प्रेम महसूस और प्रेषित करते हैं, आपकी शक्ति उतनी ही ज्यादा होती है।

अलादीन के जिन्न की तरह ही आकर्षण का नियम भी हमारे हर आदेश का पालन करता है।

रचनात्मक प्रक्रिया आपकी मनचाही चीज को पाने में आपकी मदद करती है। इसके तीन आसान कदम है-माँगें, यकीन करे और पायें।

ब्रह्माण्ड से अपनी मनचाही चीज माँगने का मतलब इस बारे में स्पष्ट होना है कि आप क्या चाहते हैं। अगर आपके दिमाग में स्पष्ट तस्वीर है, तो आपने माँग लिया है।

यकीन रखने में इस तरह काम करना, बोलना और सोचना शामिल है, जैसे आपको माँगी हुई चीज मिल चुकी है। जब आप इसे पा लेने की फ्रीक्वेंसी भेजते हैं, तो आकर्षण का नियम लोगों, घटनाओं और परिस्थितियों को अनुकूल बना देता है।

पाने का मतलब उस तरह महसूस करना है, जैसा आप इच्छा पूरी होने के बाद महसूस करेंगे। अभी अच्छा महसूस करके आप मनचाही चीज की फ्रीक्वेंसी पर पहुँच जाते हैं। **(रॉन्डाबर्न-अहा जिंदगी)**

महापुरुषों के महान् गुण

(चाल : ऊँचे-ऊँचे शिखरों.....)

सच्चे-अच्छे गुण धारे हैं, महापुरुष महान्...
महापुरुष महान् (हैं), भाव से महान्...(ध्रुव)

आप हो दुर्गुण वर्जक, आप हो सुगुण सर्जक...

आप सनम्र सत्यग्राही, आप न होते कट्टर दुराग्रही...
सरल-सहज आप उदारभावी, न होते ढोंगी-पाखंडी...सच्चे...(1)

अंतरंग से बनते पावन, अंदर से होते वर्द्धमान...
सत्ता-संपत्ति-प्रसिद्धि बिना, सद्भाव (सद्) व्यवहार से महान्...
उच्च आदर्श से हो श्रेष्ठ, दिखावा-आडंबर से न ज्येष्ठ...सच्चे...(2)

आत्मविश्वास श्रद्धा-प्रज्ञा से, धैर्य-संयम व क्षमा भाव से...
समता-शांति दया-दान से, महान् लक्ष्य व उच्च विचार से...
आप स्वतः ही बनते महान्, अंधानुकरण रिक्त...सच्चे...(3)

महान् पुरुषों के आदर्श मानते, (उनके) गुणगान व अनुकरण करते...
हर जीव प्रति मैत्री भाव रखते, दुःखी जीव प्रति करुणा करते...
दुर्जन-नीच से साम्य रखते, विश्व की मंगल कामना भाते...सच्चे...(4)

दीन-हीन-अहंकार न करते, आत्म गौरवशाली बनते...
स्व-पर प्रकाशी ज्योति बनते, स्व-चारित्र से शिक्षा देते...
परनिंदा-अपमान/(हानि) न करते, अप्रभावी हो प्रगति करते...सच्चे...(5)

कौन क्या कहता मानना परे, सत्य-समता-शांति सहारे...
स्व-गलतियों से शिक्षा लेकर, करते दृढ़ता से स्व-सुधार...
शोध-बोध-अनुभव सहारे, विकास करते पुरुषार्थ से...सच्चे...(6)

ईर्ष्या-घृणा व तृष्णा भय, काम-क्रोध व मद-मोह...
चिंता-निराशा-उदासीनता, इत्यादि त्यागते नकारात्मकता...
अस्त-व्यस्त-संत्रस्त त्याग से, महान् आत्मानुशासी बनते...सच्चे...(7)

भौतिकवादी संकीर्ण बुद्धिजीवी, स्वार्थी से अज्ञात आप की शक्ति...
सत्ता-संपत्ति से (वे) मानते महान्, महान् गुणों को न करते सम्मान...
ऐसे होते हो! महापुरुष, 'कनक' माने/(चाहे) तव आदर्श...सच्चे...(8)

सीपुर, दिनांक 17.05.2017, रात्रि 10.08

दूसरे क्या कर रहे हैं उसकी परवाह न करें, अपने आप से बेहतर करें, अपने ही रिकॉर्ड को तोड़ें, और आप कामयाबी हासिल कर लेंगे। **-विलियम बॉटकर**

विश्व का एक ही कोना है जिसका सुधार कर पाना आपके हाथ में है, और वह है आप स्वयं। -ऐल्डस हक्स्ले

रूसी अरबपति इगोर का आइडिया; अंतरिक्ष में भेजेंगे नैनो-सैटेलाइट, जिसमें हर नागरिक का डेटा होगा

अंतरिक्ष में नया देश बसाने की तैयारी, एस्गार्डिया होगा इसका नाम; खुद का संविधान होगा पर नहीं होगी कोई जाति या धर्म

अंतरिक्ष में नया देश बसाने की तैयारी हो रही है। ऐसा देश, जहाँ कोई धर्म या जाति नहीं होगी। एस्गार्डिया नामक इस देश के संविधान पर तो काम बाकी है। पर इसका अंतरिम प्रमुख तय हो गया है। रूसी अंतरिक्ष यात्री व अरबपति इगोर अशरबेयली इसके हेड ऑफ नेशन होंगे।

दरअसल, इस देश की कल्पना अशरबेयली और मैक्गिल यूनिवर्सिटी इंस्टीट्यूट ऑफ एयर एंड स्पेस लॉ के डायरेक्टर रैम जाखू की है। दोनों ने एस्गार्डिया एनजीओ बनाया। इसका मुख्यालय ऑस्ट्रिया में है। एनजीओ ने पिछले साल अक्टूबर में स्पेस नेशन की योजना बनाई थी। मंगलवार को अशरबेयली ने इसका नया प्लान बताया। कहा कि वे 12 सितंबर को नासा की मदद से एस्गार्डिया-1 नैनो-सैटेलाइट अंतरिक्ष में भेजेंगे। इसमें उसकी नागरिकता चाहने वालों का डेटा होगा। अशरबेयली ने कहा, 'हम एक गंभीर देश बनाना चाहते हैं, जो आजाद हो। जहाँ कानून का शासन हो। इसे धरती के देश और संयुक्त राष्ट्र (यूएन) भी मान्यता देंगे।' मैक्गिल यूनिवर्सिटी के रैम जाखू ने कहा, 'एस्गार्डिया में सभी देशों के लोगों के लिए जगह होगी। यह ऐसा देश होगा, जहाँ शांति और मानवता सर्वोपरि होगी। हजारों लोग नागरिकता के लिए आवेदन कर चुके हैं। बेहतर देश के लिए हमें संविधान की जरूरत होगी। हम जल्दी ही इस दिशा में काम शुरू करेंगे।' अशरबेयली ने बताया कि शुरुआती योजना के मुताबिक उनके देश में 15 लाख नागरिक होंगे। 512 जीबी की नैनो-सैटेलाइट में इन सभी का डेटा सुरक्षित रहेगा।

क्या स्पेस नेशन को यूएन वाकई मान्यता देगा? विशेषज्ञों के मुताबिक यह आसान नहीं होगा। यूएन ने इसकी सदस्यता से जुड़े सवाल का कोई जवाब नहीं

दिया। दूसरा अहम सवाल यह है कि क्या स्पेस में लोगों की निजी सूचनाएँ, तस्वीरें रखी जा सकती हैं। जानकारों के मुताबिक इससे कानूनी अड़चनें आ सकती है। एस्गार्डिया-1 को अंतरिक्ष में नासा का स्पेसक्राफ्ट लेकर जायेगा। इसलिए इस सैटेलाइट पर अमेरिका का ही कानून लागू होगा।

पाँच साल में नष्ट हो जायेगा एस्गार्डिया का पहला सैटेलाइट–नैनो-सैटेलाइट एस्गार्डिया-1 पाँच साल में नष्ट हो जायेगा। पर इसे स्पेस में भेजने वाले अशरबेयली कहते हैं कि इसके नष्ट होने से पहले दूसरा सैटेलाइट भेजा जायेगा। इससे एस्गार्डिया का डेटा ट्रांसफर कर दिया जायेगा। चाँद या अंतजरिक्ष में कहीं भी वह डेटा मौजूद रहेगा।

स्कूल में विवाद के बाद माँ ने बच्चे को सिखाया माफी माँगना

यूके के उत्तरी आयरलैंड में जोवी विलयम्स को कुछ दिन पहले पता चला कि उनका बेटा केलम (6) के साथ स्कूल में कुछ ठीक नहीं चल रहा है। उन्होंने जानने की कोशिश की। फिर पता चला कि स्कूल में कोलम का एक अन्य छात्रा के साथ विवाद हो गया था। कोलम उसके साथ खेलना चाहता था, लेकिन छात्रा ने कहा कि वह ऐसा नहीं कर सकता। वह खेल केवल लड़कियों का था। उसके बाद केलम ने उसे कुछ गलत कह दिया, जिसके बाद उस छात्रा ने भी कुछ कहा।

केलम ने सबके सामने ऐसा कहा गया, तो वह उदास रहने लगा। उसे अपनी गलती पता चल गई थी। उसने अपने दोस्तों को वह बात बताई। जोवी ने कहा, मैं जब घर पहुँची तब वह मेरे पास आ गया। उसने कहा कि उसे खराब लग रहा है, उसे छात्रा के साथ उसे विवाद नहीं करना चाहिए था। फिर जोवी ने उससे कहा कि उसे अपनी गलती के लिए माफी माँगनी चाहिए। इसका सबसे अच्छा तरीका है कि फूलों का गुलदस्ता लिया जाये। जोवी ने उसे समझाया कि गुलदस्ते के कारण ऐसा नहीं है कि सब कुछ तुरंत सुधर जाये, लेकिन अच्छा होने की शुरुआत जरूर हो सकती है। उन्होंने समझाया कि हमें अपने साथ पढ़ने-खेलने वालों एवं बडों का सम्मान करना चाहिए। अगर हमसे गलती हो जाये, तो तुरंत माफी माँगना ही बेहतर होता है। केलम ने गुलदस्ता लेकर उस छात्रा से माफी माँगी और उसने भी केलम को

माफ कर दिया। केलम बहुत खुश हुआ, वह घर आया और आते ही माँ को पूरी बात बताकर कहा कि उसका नया दोस्त बन गया है।

आप सिर्फ वही खोते हैं, जिससे आप चिपके रहते हैं

बुद्ध का कहा मुझे वॉरेन बफेट की बात याद दिलाता है, वही वॉरेन बफेट, जो कि दुनिया को तीसरा सबसे और अमेरिका का दूसरा सबसे अमीर आदमी रहा है। शेयर बाजार के जादूगर के नाम से जाने जाते वॉरेन कहते हैं, 'मुझे यूँ तो अमीर होने में कोई खासी परेशानी नहीं है। ऐसा भी नहीं है कि मैं **इन कागज के टुकड़ों को खुद पर खर्च नहीं कर सकता। अगर मैं चाहूँ तो सिर्फ 10 हजार लोग सुबह-शाम अपनी तस्वीरें खिंचवाने के लिए रख सकता हूँ, लेकिन इससे किसी का भला नहीं होगा।' वॉरेन बफेट अपनी संपत्ति का लगभग 85 फीसदी हिस्सा दान कर चुके हैं।** फिर भी उन्होंने कुछ नहीं खोया, बल्कि पाया एक ऐसा रुतबा, जो शायद ही दुनिया के किसी भी दौलतमंद को हासिल हो। लेकिन इस दिलदार जादूगर ने आखिर इतना बड़ा कद पाया कैसे, बुफेट ने सात साल की उम्र में ही अपने दादा की दुकान से **लेकर** च्यूइंगम बेचनी शुरू कर दी थी। वे आसपास के घरों में इसे बेचकर मुनाफा कमाते थे। घुड़दौड़ के संभावित विजेता का पता लगाने के लिए मैथ्स का एक फॉर्मूला बनाया और वे एक डॉलर में यह बताने लगे कि रेस में कौनसा घोड़ा जीतेगा। वॉरेन जीतते चले गये, लेकिन खुद को सफलता का, पैसे का गुलाम नहीं बनाया। वॉरेन बफेट दुनिया भर को जहाँ यह नजरिया देते हैं कि अगर एक बच्चा सोच ले तो च्युइंगम बेचने के रास्ते से होता हुआ दुनिया का सबसे अमीर आदमी बन सकता है और अगर वही व्यक्ति चाहे, तो वह अपनी सारी कमाई, सारी पूँजी एक क्षण में दान कर सकता है। उनके पास जितना काम करने का माद्दा है, उतना ही उसे समाज के लिए दे देने का भी। यहीं मुझे भूटान से जुड़ा एक और किस्सा याद आता है। एक बार हमारे यहाँ एक यूनिवर्सिटी में मौका था, ह्यूमन वैल्यूज विषय पर इंटरनेशनल कॉन्फ्रेंस का। भूटान प्रमुखता से इस कॉन्फ्रेंस को करवा रहा था, उसी में रॉयल यूनिवर्सिटी भूटान के वीसी से मिलना हुआ। एक जाहिर-सा सवाल भी पूछा कि आखिर कैसे भूटान के लोग इतने

खुशमिजाज माने जाते हैं। उन्होंने तपाक से, लेकिन मुस्कुराते हुए कहा, बहुत सरल है। हम अपना पैसा हथियार खरीदने पर खर्च नहीं करते, बल्कि हम तो एजुकेशन पर इसे खर्च करते हैं। एजुकेशन का मतलब यहाँ पर डॉक्टर, इंजीनियर, टीचर बनाने वाली फैक्ट्री कतई नहीं थी, बल्कि स्कूल से लेकर कॉलेज तक स्टूडेंट्स को ह्यूमन वैल्यूज के बारे में पढ़ाना था और यह भी कि मौत जिंदगी का असल सत्य है और उससे भी बड़ा सत्य यह है कि जीवन के खत्म होने से पहले हम इसे जी लें। ये भी कि हथियारों से कुछ हासिल नहीं होता कुछ भी नहीं। **(अहा! जिंदगी, अक्टूबर, 2016)**

आधा खाली, आधे भरे गिलास के और भी बहुत रंग हैं

जाहिर-सी बात है कि वे लोग जो नीचे से उठकर सफलता के सबसे ऊँचे पायदान पर पहुँचते हैं, उनके पास एक ही चीज आपसे और हमसे अलग होती है। उनके सोचने का तरीका, उनका नजरिया, जिंदगी के प्रति उनकी अप्रोच। पानी का गिलास आधा भरा है या आधा खाली किसी के नजरिये को जान लेने वाला शायद सबसे पुराना और प्रचलित उदाहरण और सवाल है। लेकिन लोगों को इसकी और भी विस्तृत परिभाषाएँ दी हैं। सकारात्मक सोच रखने वाले कहते हैं कि गिलास आधा भरा है। नकारात्मक सोच रखने वाले कहते हैं कि गिलास आधा खाली है। प्रोजेक्ट मैनेजर कहता है कि गिलास जितने साइज का होना चाहिए उससे दोगुना बड़ा है। यथार्थवादी कहते हैं कि गिलास में जितना पानी होना चाहिए उसका आधा है, आधा और चाहिए और अवसाद में डूबे रहने वाले लोग कहते हैं कि हैरानी इस बात की है कि आधे गिलास पानी को पिया किसने? इंजीनियर कहता है कि इतनी मात्रा में पानी के लिए गिलास का डिजाइन ठीक नहीं है। हमेशा चिंतित रहने वाला शख्स कहेगा कि बाकी का पानी भी कल तक भाप बन उड़ जायेगा। कंप्यूटर प्रोग्रामर कहेगा कि गिलास तो पूरा ही खाली है। बुद्धिस्ट कहेगा, चिंता मत करो, याद रखो गिलास तो पहले से ही टूट चुका है। जादूगर आपको दिखायेगा कि गिलास का पानी निचले नहीं, बल्कि ऊपरी हिस्से में है। फिजिस्ट कहेगा कि पानी का गिलास खाली नहीं है, बल्कि आधा हवा और आधा पानी से भरा हुआ है।

आधे भरे या आधे खाली गिलास की यह विस्तृत परिभाषाएँ आपको हँसा

सकती हैं, लेकिन मुस्कुराते हुए जान लीजिये कि किसी भी चीज को देखने का आपका नजरिया जिंदगी को सच में प्रभावित करता है। कैसे? इस पर वैज्ञानिक बड़ा ही सरल-सा जवाब देते हैं कि आप जैसा सोचते हैं, वैसे ही होने लगते हैं। आप अगर आज यह कहते हैं पानी का गिलास आधा खाली है। तो यकीन मानिये कि ताउम्र अपने जिंदगी के फैसलों को लेकर किये गये बड़े और छोटे फैसलों में आप ऐसा ही सोचेंगे, यानी कि कमियाँ निकालते रहेंगे। तस्वीर के चमकदार पहलू को देखने की बजाय आप स्याह पहलू की बात करेंगे। फिर वो बिजनेस हो, रिलेशनशिप हो या फिर जिंदगी को जीने का तरीका। वहीं अगर आप यह सोचते हैं कि गिलास में बाकी का पानी किसने पिया, तो आपकी उम्र शिकायतें करने में बीतेंगी। शोध कहते हैं कि आपका बेसिक नजरिया आपकी जिंदगी के सारे फैसलों को प्रभावित करता है और आप सड़क से उठकर धीरू भाई अंबानी बनते हैं, अब्राहम लिंकन बनते हैं या फिर इस देश की डेढ़ अरब आबादी का एक अरबवाँ हिस्सा, यह सिर्फ और सिर्फ आपके नजरिये पर निर्भर करता है।

वे लोग जिनके पास नहीं था, नजरिये के अलावा कुछ और

दुनिया सफल लोगों की कहानियाँ याद रखती हैं, उनके कहे हुए शब्द भी। वे सारी बातें, जो वे सफल होने से पहले कहते थे, वे जिन्हें उन्होंने हमेशा दोहराया। तो फिर वे असफल लोग कौन हैं, जिनके नजरिये ने उनको इतना ऊँचा उठने का हौंसला ही नहीं दिया कि जान सके कि उन्होंने क्या सोचा, जब उनको जिंदगी ने मौका दिया होगा। वे असफल लोग दुनिया की आबादी का सबसे बड़ा हिस्सा हैं, हम उस भीड़ से पहले मुट्ठी भर लोगों की बात करते हैं, जिन्होंने सोचा और कर दिखाया, लेकिन मुझे यहाँ भीड़ से उठी मर्लिन मुनरो याद आती हैं, 35 साल की उम्र में उन्होंने वो ख्याति प्राप्त की, जिसका ख्वाब तक देखने में लोग डरते हैं। नोर्मा जीन यानी मर्लिन को न माँ का प्यार मिला, न पिता का नाम। उनका बचपन केयरटेकर्स परिवारों के पास भटकता रहा। मर्लिन की शादी इसलिए कर दी गई, क्योंकि दो जगह से निकाले जाने के बाद उसके पास रहने का कोई ठिकाना नहीं था। तो मर्लिन ने क्या किया? उसने एक ख्वाब देखा एक्ट्रेस बनने का। मर्लिन ने एक इंटरव्यू में कहा था

कि, 'मुझे मालूम है कि मेरी तरह हजारों लड़कियाँ फिल्म्स्टार बनने का सपना देखती हैं, लेकिन मुझे किसी की चिंता नहीं, मुझे पता है कि मेरा सपना दृढ़ है।' इस सपने से भी बड़ा था, मर्लिन का नजरिया। वे जिंदगी के बारे में कहती थी, हँसते रहो क्योंकि जिंदगी बहुत खूबसूरत है और यहाँ मुस्कुराते रहने के लिए बहुत-सी चीजें हैं।

शायद यही कारण है कि तमाम त्रासदियों के बाद भी लगभग अपनी सारी तस्वीरों में वे हँसती-मुस्कुराती नजर आती हैं। जहाँ वे यह कहती थी कि, 'मैं किसी दिन एक महान् फिल्मस्टार बनूँगी, हो सकता है कि यह बात मजाक लगे, लेकिन मैंने अभिनेत्री बनने के अलावा कुछ और सोचा ही नहीं' वहीं वे यह भी कहती थी, 'प्रसिद्धि अस्थिर होती है, अपनी कुछ कीमत भी माँगती है, प्रसिद्धि के अपने जोखिम भी हैं।' यानी वे जिस वक्त प्रसिद्धि का सपना देखती थी, ठीक उसी समय उसके स्याह पहलू को भी अपनी नजरों के नजरिये से उन्होंने ओझल नहीं होने दिया। सफल लोग ऐसे ही होते हैं। चार्ली चैपलिन हों, सोफिया लॉरेन हों या चे ग्वेरा, उन्हें उनके नजरिये ने अलग बनाया। हम सबसे अलग। चे ग्वेरा जिन्हें लोग टी-शर्ट में बनी तस्वीर के रूप में तो पहनकर घूमते हैं, लेकिन नहीं जानते कि चे का नजरिया कैसे बदले। मोटरसाइकिल पर लैटिन अमेरिका घूमते हुए चे ग्वेरा का दुनिया को देखने का नजरिया बदला था। न सिर्फ खुद को लेकर उनका नजरिया बदल गया, बल्कि उन्हें लैटिन अमेरिका में लोगों की आर्थिक स्थिति को जानने का मौका भी मिला। एक यात्रा ने उन्हें गरीबी, भूखमरी और बेबसी की वह तस्वीरें दिखाई कि वे क्यूबा रेवोल्यूशन का महत्वपूर्ण हिस्सा बन गये, तो अगर यह कहे कि यात्राएँ भी आपके जिंदगी को देखने के नजरिये को बदलती हैं, तो यह गलत नहीं होगा। अब्राहम लिंकन कहते थे, 'हम शिकायत कर सकते हैं गुलाब के फूलों में काँटे हैं और हम खुश भी हो सकते हैं कि काँटों में फूल हैं।' मार्टिन लूथर किंग जूनियर कहते थे, 'मैंने तय कर लिया है कि मैं प्रेम के साथ खड़ा रहूँगा, क्योंकि नफरत को बर्दाश्त करना बड़ा बोझ है।' स्टीव जॉब्स कहते थे, 'आपके पास समय कम है, अपनी जिंदगी को वेस्ट मत करो, किसी और की जिंदगी जीने के लिए। यह भी कि दूसरे के विचारों को अपने भीतर की आवाज को दबाने मत दो।'

दूसरे के नजरिये को समझना, आपके लिए सेहतमंद और फायदेमंद दोनों है

अलग-अलग शोधों में वैज्ञानिक एक नतीजे पर पहुँचे हैं कि अगर आप दूसरों के नजरिये को भी समझने की कोशिश करते हैं, तो यह आपके लिए फायदेमंद और सेहतमंद दोनों रहेगा। आप दूसरों की सोच को, उनकी बातों को और उनके नजरिये को समझेंगे, तो आपके भीतर शिकायतें कम होगी और ऐसा होने से आप हाइपरटेंशन, एंग्जाइटी और हाई ब्लड प्रेशर और अन्य बीमारियों से बच जायेंगे। वहीं, दूसरे के नजरिये को समझेंगे, तो आप अपने कार्यक्षेत्र में सफल भी होंगे। कैसे दूसरों को समझना आपके संबंधों को बेहतर बनाता है, यह संबंध परिवार, दोस्तों या रिश्तेदारों में हो या फिर कंपनी और कस्टमर में हो सकते हैं। सो कह सकते हैं कि खुद सफल देखना चाहते हैं, तो यह चीजें जरूर करें। जैसे कि दूसरों के बारे में सोचे कि आखिर उनके नजरिये के पीछे क्या कारण हैं, आपकी सफलता सिर्फ आपकी अकेले की नहीं होती, बल्कि लोग उसे बनाते हैं, तय करते हैं। वो लोगों का एक समूह हो सकता है और एक बड़ी भीड़ भी। कोई गीत, कोई फिल्म, कोई प्रोडक्ट, कोई विचार इसलिये लोगों के जीवन का हिस्सा बनते हैं। क्योंकि कहीं न कहीं उसमें उस समूह का, उस भीड़ का नजरिया रिफलेक्ट होता है। इसके लिए आपको सबसे पहले लोगों के नजरिये को हूबहू वैसे ही समझने की प्रैक्टिस करनी होगी, जैसा उन्होंने कहा है। अगर आप अपने पूर्वाग्रह उन पर थोपेंगे, तो शायद कभी सफल नहीं हो पायेंगे।

सिग्मंड फ्रायड मानते थे और आज के वैज्ञानिक भी मानते हैं कि हमारे बचपन में जो भी घटता है और जो भी हम अपने आस-पास देखते हैं, वो हमारे सोचने-समझने की क्षमता को प्रभावित करता है। नजरिया हमारे जीवन को कैसे प्रभावित करता है, इससे पहले उन अनुभवों पर बात होना जरूरी हैं, जो उसे प्रभावित करती है। फिर उन अनुभवों से उभरते हुए, एक नया, साफ रोशनी से भरा नजरिया विकसित करना है। तो जरूर है कि जिंदगी से चार कदम पीछे जाने वाले नजरिये को हम पहचाने, पहचाने कि कौनसे खराब अनुभव है, जिसकी वजह से जिंदगी में हम फूलों की महक, चिड़ियों का चहचहाना मिस करते हैं। किस वजह से

हम ठीक उस जगह नहीं है, जहाँ हमें होना चाहिए था। जरूरत है अपने नजरिये को जानने की, उसे पहचानने की और जरूरत पड़े तो उसे जड़ से बदल देने की। तो क्या आप तैयार हैं, जिंदगी के प्रति अपने नजरिये को खंगालने के लिए? क्या आप तैयार हैं दूसरे के नजरिये को उतने ही बेहतर तरीके से, तर्कों के साथ सझने के लिए जैसा कि आप अपने को समझते हैं? अगर आप तैयार हैं उन सड़ चुके विचारों, दुनिया के प्रति अपनी पुरानी और आउटडेटेड सोच को बदलने के लिए, तो यकीन मानिये कि यह फर्नांडो पेसोआ ने आपके लिए कहा था।

फर्नांडो पेसोआ कहते हैं

एक समय आता है, जब जरूरी हो जाता है इस्तेमाल किये हुए कपड़ों को फेंक देना। जिन कपड़ों में पहले से ही हमारे शरीर की बनावट दर्ज है। जो हमें एक ही जैसे रास्तों पर ले जाते हैं। यही समय है कि हम नदी को पार करें। अगर हम आज रास्ते को बदलने का, नदी को पार करने का हौसला नहीं कर पाये, तो हम हमेशा पीछे दिखाई देंगे। हमको पुराने, इस्तेमाल किये हुए, हारे हुए, नजरिये को बदलना होगा। बिल्कुल वैसे ही, जैसे हम उतार फेंकते हैं, पुराने इस्तेमाल किये गये और फटे हुए कपड़े। **(अहा जिंदगी)**

श्रेष्ठता के सूत्र

मानव मनोविज्ञान के जनक अब्राहम मास्लो के अनुसार 'श्रेष्ठता हासिल करना, एक दिन का काम नहीं है, इसमें प्रयासों की भारी खुराक, दृढ़-निश्चय, आत्मशक्ति और वास्तविकता चाहिए।' सबसे पहले यह जानना जरूरी है कि इतने प्रयासों से मिलने वाली श्रेष्ठता के जीवन में प्रवेश के बाद जिंदगी कैसी होती है? यूनिवर्सिटी ऑफ मिशिगन के मनोवैज्ञानिक नैनसूक पार्क और क्रिस्टोफर पीटरसन ने विज्ञान से इस सवाल का जवाब माँगने की कोशिश की। आखिर एक श्रेष्ठ जिंदगी क्या होती है? हम इसे कैसे पा सकते हैं? कैसे इसे बरकरार रख सकते हैं? उन्होंने पाया कि मनोविज्ञान यही बताता है कि श्रेष्ठ जिंदगी में नकारात्मक भावनाओं की अपेक्षा सकारात्मक भावनाएँ होती हैं। अपने निष्कर्ष में उन्होंने बेहद सरल, लेकिन सटीक परिभाषा पाई कि जिंदगी को बेहतरीन ढंग से जीते हुए, अपनी प्रतिभाओं और खूबियों

का इस्तेमाल करते हुए, घनिष्ठ व्यक्तिगत रिश्तों के साथ, काम में व्यस्तता के साथ, सामाजिक समुदाय का हिस्सा रहते हुए, सेहत और सुरक्षा महसूस करते हुए, एक ऐसी जिंदगी जी लेना जिसका कोई अर्थ हो, आपको श्रेष्ठ बना देता है। दिलचस्प यह है कि जहाँ एक ओर यह सब बेहद आम नजर आता है, वहीं हम इंसान के रूप में इन खूबियों को हासिल करने व बरकरार रखने के सूत्र को प्राप्त करने में कामयाब नहीं होते, जबकि इस सूत्र को हासिल कर लेना बेहद आसान बन सकता है, बशर्ते आपको श्रेष्ठता का सही अर्थ समझ में आ जाये और आप यह जान ले कि आपके जीवन को श्रेष्ठ क्या बनायेगा?

मनोवैज्ञानिक मार्टिन सेलिगमैन और मिहाली सिक्सजेंटमिहेली ने इस बात का पता लगाने की कोशिश की कि कौनसे तत्त्व श्रेष्ठ जिंदगी बनाते हैं? असंख्य शोध और अध्ययन के परिणामों में सेलिगमैन ने पाया कि श्रेष्ठ जिंदगी के लिए तीन रास्ते थे और वे सभी महत्वपूर्ण थे। जब आप वर्तमान का आनंद लेते हैं तो आप अतीत के लिए कृतज्ञ और भविष्य के लिए आशावान होते हैं, आप सकारात्मक संवेदना का अनुभव कर रहे होते हैं, जो कि खुशी का पहला तत्त्व होती है। जिस काम में आप सबसे अच्छे हैं, जब आप उस काम को कर रहे होते हैं या फिर जब आप अपनी मुख्य शक्तियों का इस्तेमाल अपने काम में करते हैं, तब आप व्यस्त होते हैं और तभी आप श्रेष्ठ होते हैं। यह खुशी का दूसरा तत्त्व होता है और जब आप उन गतिविधियों में व्यस्त होते हैं, जिनके लिए आप मानते हैं कि वे दुनिया के लिए महत्वपूर्ण है तो आप श्रेष्ठ जीवन के तीसरे और अंतिम तत्त्व का अनुभव कर रहे होते हैं। आपकी जिंदगी सार्थक होती है। यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया की प्रोफेसर सोन्जा ल्यूबोमिरस्की रिसर्च बताती हैं कि श्रेष्ठ जिंदगी संभव है और इसका मापन आपके द्वारा जिये गये सालों की संख्या से नहीं होता। बल्कि उन गुणों पर निर्भर करता है, जिनका इस्तेमाल आपने अपने जीवन में किया है।

लेखक डेविड जे. पॉल अपना एक अनुभव बताते हैं 'एक बार मैं और मेरी पत्नी अपनी बेटियों एरिला और इलायना को लेकर तितलियों के संग्रहालय पहुँचे। जब हम म्यूजियम पहुँचे तो हम वहाँ हजारों तितलियों से घिरे हुए थे। सभी अपने बहुरंगी पंखों को फड़फड़ा रही थीं। मेरी बेटियाँ रोमांचित थीं। मैंने म्यूजियम गाइड से पूछा,

तितलियाँ कितने वक्त तक जिंदा रहती हैं। उसने जवाब दिया, दस दिन तक। मैंने तुरंत कहा, तितलियाँ दस दिन में क्या कर सकती हैं। मेरी छोटी बेटी रुक गई, चुपचाप, कुछ पल के बाद उसने कहा, वे दुनिया को एक खूबसूरत जगह बना देती हैं। अब हर दिन मैं अपने आपसे पूछता हूँ, मैं किस तरह दुनिया को खूबसूरत जगह बना रहा हूँ? एक लंबी जिंदगी अच्छी है, लेकिन श्रेष्ठ जिंदगी बेहतर है। रोमन दार्शनिक सेनेका ने एक बार कहा था कि जीवन एक नाटक की तरह है, जिसकी लंबाई नहीं बल्कि अभिनय की श्रेष्ठता महत्वपूर्ण होती है।'

श्रेष्ठता के तत्त्वों में जो सबसे महत्वपूर्ण है, वह है सिर्फ और सिर्फ बेहतर करने की इच्छा। स्पेनिश दार्शनिक और मानववादी जोस ऑर्टेगा वाई गेस्सेट शब्दों में श्रेष्ठता की स्थिति तब उत्पन्न होती है, जब एक महिला या पुरुष अपने आपसे, दूसरों से ज्यादा कर दिखाने की इच्छा रखते हैं। बात केवल इच्छा तक सीमित नहीं होती क्योंकि इच्छा या अपेक्षाएँ तो हर व्यक्ति के भीतर होती हैं, लेकिन उसे सही दिशा की ओर ले जाना सभी के वश की बात नहीं होती। कारण केवल इतना है कि हम इच्छाओं को असीमित कर लेते हैं और उन तक पहुँचने की कोशिशें सीमित कर लेते हैं, जबकि श्रेष्ठता का सफर उस छोटी पहल से शुरू होता है, जिसे श्रेष्ठता प्राप्त कर लेने तक बनाये रखना होता है।

इंसान की किसी से तुलना नहीं–एक मशीन 50 साधारण मानवों का काम कर सकती है, लेकिन कोई भी मशीन एक असाधारण व्यक्ति का काम नहीं कर सकती है। **–अल्बर्ट हब्बर्ड, वैज्ञानिक**

स्व-पर को मैं प्रोत्साहित करूँ

(पर हतोत्साह से भी प्रगति करूँ)

–आचार्य कनकनंदी

(चाल : छोटी-छोटी गैया)

स्वयं को मैं प्रोत्साहित करता रहूँ, आत्मविश्वास से आगे बढ़ता रहूँ।
अन्य को भी प्रोत्साहित करता रहूँ, स्व-पर को हतोत्साह कभी न करूँ।। (1)

गुण-गुणी की अनुमोदना (भी) इसे कहते, पुण्य कर्म परमाणु इससे बंधते।

भाव भी सकारात्मक व प्रशस्त होता, आत्मविश्वास युक्त प्रोत्साहन बढ़ता।। (2)
इससे उत्तम काम भी अधिक होता, कार्य करने मैं (भी) दोष न उत्पन्न होता।
शंका- भयादि इससे दूर भी होते, तन-मन-इन्द्रियाँ भी नहीं थकते।। (3)
हतोत्साह से इससे विपरीत भी होता, शंका-भय से आत्मविश्वास घटता।
जिससे तन-मन-इन्द्रियाँ भी थकते, कार्य करने में व्यवधान/(विघ्न) उत्पन्न होते।। (4)
कोई मुझे प्रोत्साहित करे या ना करे, स्व-प्रोत्साहन व आत्मविश्वास करूँ।
पर हतोत्साह से मैं प्रेरित होकर, गेंद सम प्रहार से भी प्रगति करूँ।। (5)
आधुनिक विज्ञान भी इसे सिद्ध किया, धार्मिक ग्रंथों में इसका वर्णन हुआ।
बाल्यकाल से हजारों (मेरे) अनुभव में पाया, स्व-पर को प्रोत्साहन अतः मुझे भी भाया।। (6)
प्रोत्साहन से हैप्पी हार्मोन स्राव होता, जिससे प्रसन्नता से काम सही होता।
महान्जन स्व-पर को प्रोत्साहित करते, नीचजन स्व-पर को हतोत्साहित करते।। (7)
प्रशंसा करना व पुरस्कृत करना, अनुमोदना व सहयोग/(समर्थन) करना।
प्रसन्न होना आदि होता प्रोत्साहन, 'कनक' करे स्व-पर को प्रोत्साहन।। (8)

सीपुर, दिनांक 07.06.2017, रात्रि 9.41 से 10.57
(यह कविता विदेशी वैज्ञानिक टी.वी. चैनलों से भी प्रोत्साहित-प्रभावित)

जब संदेह आत्मविश्वास हिलाकर रख दें

हम जो जिंदगी जीने के हकदार हैं, संदेह उसमें बड़ी बाधा है। आत्मा को मिलने वाला यह अस्वास्थ्यकर भोजन उसे नीचे घसीट लेता है, महत्वाकांक्षाओं को कुचल देता है और हमें वह सब हासिल करने से रोकता है, जो हम आसानी से हासिल कर सकते हैं।

20 मिनट चर्चा हमें बदल देती है, सही दोस्त चुनें-हम उन पाँच लोगों के औसत के बराबर होते हैं, जिनके साथ हम ज्यादातर वक्त बिताते हैं। ब्रेन साइंस रिसर्च बताती है कि 20 मिनट की बातचीत में भी मस्तिष्क में न्यूरल कनेक्शन बदल जाते हैं। संदेह का बीज किसी मुलाकात में भी पड़ सकता है। सही दोस्त चुनें।

कौनसी स्थितियाँ हैं, जो आपमें संदेह जगाती हैं? कोई कमी है, तो उसे दूर करें। कोई भी हुनर, कभी भी सीखा जा सकता है।

यह सेल्फ कंपेशन टेस्ट उपयोगी है-नाकाम होते हैं तो क्या कमतरी की भावना से बेजार हो जाते हैं? कोई काम सही ढंग से नहीं होता तो क्या आप भावनात्मक संतुलन कायम रख पाते हैं? सबक है खुद पर करुणा दिखायें।

हमेशा दूसरों की राय लेने की आदत से बचें-दूसरों की सलाह से मदद मिलती है, लेकिन हर फैसले के पहले दूसरों से राय लेने की आदत पड़ जाये, तो हो सकता है कि हम अपना आत्मविश्वास खो रहे हों।

मनोविज्ञान के मुताबिक जब हम किसी को अपनी योजना बताते हैं और वह सहमत होता है तो लक्ष्य को हासिल करने के लिए जरूरी काम हम नहीं करेंगे, क्योंकि हमारा मस्तिष्क 'बोलने' को 'करना' समझ लेता है। फिर विफलता और संदेह आते हैं।

जब आप यह जानते हैं कि आप किन आदर्शों पर चलना चाहते हैं तो फैसला करना आसान हो जाता है। संदेह को जगह नहीं रहती। यह संदेह का बेस्ट एंटीडोट है।

खुद से दोगुनी और आधी उम्र के दो मेंटर चुन लें-एक मेंटर आपको अनुभव की पूँजी देगा और दूसरा अज्ञात रास्तों पर चलने की प्रेरणा। आत्मविश्वास बढ़ेगा।

कई कलाकार यही सोचकर प्रदर्शनी नहीं लगाते कि अभी बेस्ट सामने नहीं आया है। लेखक, परफेक्ट होने तक प्रकाशक के पास नहीं पाते। यह आलोचना से बचने का बहाना है और संदेह को जन्म देता है। नदी की धारा में कूदना ही बेहतर है।

हमारा दिमाग बारीक ब्योरे दर्ज करने में माहिर है और हम उनकी अनदेखी करने में उस्ताद। संदेह कई बार इसलिये भी पैदा होता है कि कहीं कोई कमी होती है, संभव है बहुत सूक्ष्म हो। पता लगाये कि हमारा मस्तिष्क किस बात की और इशारा कर रहा है।

ज्ञान गंगा

तीक्ष्ण नारुंतुदा बुद्धिः, कर्म शान्तं प्रतापवत्।
नोपतापि मनः सोष्म, वागेगा वाग्मिनः सतः।।

सत्पुरुष की बुद्धि तीक्ष्ण होती है, परन्तु मर्मभेदी नहीं, कर्म तेजस्वी होता है

परंतु शांत भी, मन उष्ण होता है पर ताप देने वाला नहीं और वाग्मी सत्पुरुष एकवाक् (सत्य वक्ता) होता है। **(शिशुपालबध, 2/109)**

दिल टूटने पर हार्ट अटैक का खतरा

अब दिल टूटने पर हार्ट अटैक आने पर विज्ञान की भी मोहर लग गई है। शोध जर्नल 'सरकुलेशन' में प्रकाशित अध्ययन में खुलासा हुआ कि अगर प्यार में आपका दिल टूट जाता है तो अगले 24 घंटों में हार्ट अटैक आने का खतरा 21 गुना अधिक होता है। जबकि प्रियजन की मौत होने के एक हफ्ते के भीतर हार्ट अटैक का खतरा आठ फीसदी ज्यादा होता है। यह अगले एक महीने तक कायम रह सकता है।

2000 मरीजों पर अध्ययन–शोधकर्त्ताओं ने पिछले पाँच साल से मायोकार्डियल इंफॉरैक्शन से पीड़ित 2000 मरीजों से सवाल पूछे। मरीजों से पिछले सालों में प्रियजनों की मौत सहित कई सवाल श्रृंखलाबद्ध तरीके से पूछे गये। निष्कर्ष से पता चला कि प्रियजन की मौत के बाद अवसाद, एंजाइटी और गुस्से की भावना बढ़ जाती है। जिसका सीधा प्रभाव दिल की गति और ब्लडप्रेशर पर पड़ता है। इससे सामान्य हृदय गति 80 प्रति मिनट से बढ़कर 130 तक पहुँच जाती है।

ज्यादातर हार्ट अटैक रक्त वाहनियों में खून का प्रवाह रुकने के कारण होते हैं। शारीरिक या भावनात्मक तनाव के समय खून के साथ कैटेकोलामाइन्स हार्मोंस का स्रावण होता है। ऐसे हार्मोंसों में नॉरपाइनफेराइन, डोपामाइन, ऐपीनॉरफेराइन शामिल हैं। यह जाना-माना तथ्य है कि प्रियजन की मौत होने पर व्यक्ति के स्वास्थ्य में तेजी से गिरावट आती है।

सब्र का फल अच्छी सेहत भी होता है

जहाँ धैर्य की कमी आपको तनाव, गुस्सा और दूसरी परेशानियाँ दे सकती है। वहीं विशेषज्ञों का मानना है कि धैर्य रखकर आप अपने जीवन को बेहतर बना सकती है। आइये जाने कैसे।

तनावग्रस्त, व्यग्र और झगड़ालू लोगों में अक्सर धैर्य की कमी पाई जाती है। विशेषज्ञ भी इससे सहमत है। उनका कहना है कि जिन लोगों में धीरता की कमी होती

है, उनमें दिल की बीमारी की आशंका ज्यादा होती है और यही वजह है कि सब्र और दिल की सेहत के बीच सीधा संबंध है। यही नहीं, यह भी माना जाता है कि अधीरता से आपको साँस लेने में तकलीफ, माँसपेशीय तनाव और झगड़ालू प्रवृत्ति जैसी परेशानियों का सामना करना पड़ सकता है। जरूरत धैर्य को धारण करने की कोशिश की है। आखिर सब्र का फल सेहतमंद दिल, दिमाग और शरीर होता है।

सोच-सोच का फर्क-ग्रॉसरी स्टोर में कतार में खड़े रहकर अपनी बारी का इंतजार करते हुए आप बेसब्र होने लगे तो अपने आसपास शांति से खड़े लोगों को देखे और यह समझने की कोशिश करे कि सभी इंतजार कर रहे है। इसे अपने विचारों में जगह दे और खुद से कहे कि सेवा पहले मिलना अच्छा तो है लेकिन दूसरों के साथ यह न्याय नहीं होगा। अगर पाँच मिनट इंतजार करना भी पड़े तो कोई दिक्कत नहीं।

खबरदार रहें-निर्णयात्मक हुए बिना अपने आसपास देखकर खुद को खबरदार रखने का अभ्यास करें। इससे आप धैर्य रखना सीख सकती है। अपनी पाँचों इंद्रियों की मदद के साथ भी आप ऐसा कर सकती है। यह बहुत ही आसान है। मसलन आप सूर्यास्त को इत्मिनान से खड़े होकर निहारते हुए भी कर सकती हैं।

सोचें फिर बोलें-किसी व्यक्ति तक अपनी बात मौखिक रूप से या किसी डिजिटल माध्यम से पहुँचाने से पहले रुके और थोड़ा सोचे जरूर। विशेषज्ञों का मानना है कि कई बार हम नतीजों और सामने वाले की भावना की परवाह किये बिना अपनी बात बोल देते हैं। लेकिन बोलने से पहले सोचने की आदत से न केवल धैर्य रखना सीखा जा सकता है, बल्कि दूसरों का दिल दुखाने से भी बचा जा सकता है।

हमदर्दी साथ-धीरज आपके अंदर हमदर्दी पैदा करता है। जब आप सब्र रखना सीख जाती है तो आप सहनशील बनती है और दूसरों की भावनाओं को बेहतर रूप से समझ पाती है।

कारण क्या है-इस वक्त पर गौर करे कि वे कौनसी परिस्थितियाँ हैं, जो आपको धैर्य खोने के लिए मजबूर करती हैं। इन्हें पहचानकर आप इन परिस्थितियों में खुद को शांत रखना सीख सकती है। व्यायाम, प्रकृति के बीच चहलकदमी, अपने पालतू के साथ समय बिताना या लेखन जैसे काम इसमें आपकी मदद कर सकते हैं।

क्षमता व ज्ञात होने पर भी पर अपकार न करूँ

(शक्ति से तप-त्याग करूँ : स्व-पर अहित न करूँ)

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : मन रे तू काहे....., सायोनारा.....)

जिया रे! तू आत्मसाधना करऽऽऽ
शक्ति से तप-त्याग तू करऽऽऽ स्व-पर अहित न करऽऽऽ...(ध्रुव)

अरिहंत (सिद्ध) होते परम पावनऽऽऽ अनंत ज्ञान सुख वीर्यवान्ऽऽऽ
जानते अन्य के संपूर्ण दोषऽऽऽ करते नहीं पर अहितऽऽऽ
रहते शुद्ध-बुद्ध आनंदऽऽऽ जिया...(1)

मन-वचन-काय से न करऽऽऽ स्व-पर अहितकर कामऽऽऽ
कृत-कारित व अनुमत सेऽऽऽ न कर तू अहितकर कामऽऽऽ
शक्ति का न कर दुरुपयोगऽऽऽ जिया...(2)

स्वयं का ही तू बन कर्त्ता-धर्त्ताऽऽऽ उद्धारकर्त्ता व विधाताऽऽऽ
विश्वहित हेतु कर मंगल कामनाऽऽऽ न बनो अन्य के विधाताऽऽऽ
त्यागकर अहं मन्यमानाऽऽऽ जिया...(3)

आत्मचिंता है उत्तम से उत्तमऽऽऽ परचिंता अधम से अधमऽऽऽ
तू तेरा उद्धारकर्त्ता ही बनोऽऽऽ अहंकार-ममकार त्यजऽऽऽ
पर-परिणति को त्यजऽऽऽ जिया...(4)

पर अहित चिंतन मात्र से हीऽऽऽ होता स्व का ही अहितऽऽऽ
हर जीव है स्व के कर्त्ता-भोक्ताऽऽऽ शुभाशुभ शुद्ध भाव काऽऽऽ
ध्याओ तू शुभ शुद्ध भावऽऽऽ जिया...(5)

इच्छा निरोध है होता तपऽऽऽ स्व-दोष दूर है होता त्यागऽऽऽ
आत्म नियंत्रण है संयम-धैर्यऽऽऽ स्व-सुधार है आत्म-कल्याणऽऽऽ
मोह क्षोभ रहित होना धर्मऽऽऽ जिया...(6)

क्षमता रहित (व) अज्ञात अवस्था मेंऽऽऽ न करना जो पर अहितऽऽऽ
उससे भी श्रेष्ठ ज्ञात अवस्था मेंऽऽऽ न करना स्व-पर अहितऽऽऽ

सीपुर, दिनांक 17.05.2017, प्रातः 8.50
(यह कविता नितिन के कारण बनी)

संदर्भ-

आत्मस्थिरता की आवश्यकता

परः परस्ततो दुःखमात्मैवात्मा ततः सुखं।
अत एव महात्मानस्तन्निमित्तं कृतोद्यमाः।। (45)

The not-self are suely never the self, only sorrow accures to the soul from them; the self ever remains it self; it is therefore the cause of happiness; because of this, great persanages have exerted themselves for the realigation of the self!

पर देह धनादि पर ही है। उसे कभी भी आत्मा का, स्वयं का नहीं कर सकते हैं। इसलिए उसमें आत्मा का आरोपण करना दुःखों को निमंत्रण देना है। क्योंकि वे पर द्रव्य दुःखों के द्वार है, दुःखों के निमित्त है। उसी प्रकार आत्मा आत्मा का ही है। उसे कभी भी देहादि रूप में परिणमन नहीं कर सकते हैं अथवा आत्मा देहादि का उपादान नहीं है। इसलिए आत्मा से सुख है; दुःख के निमित्त उसके अविषय है। इसके लिए ही तीर्थंकरादि महात्मा आत्मा के निमित्त तपानुष्ठान रूपी उद्योग किया है।

समीक्षा-आचार्यश्री ने इस श्लोक में सुख का आधार तथा उसे प्राप्त करने का संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित उपाय बताया है। उन्होंने यह बताया कि दुःख आत्मा का स्वरूप नहीं है तथा सुख दूसरों से प्राप्त नहीं होता है वरन् दुःख पर का स्वभाव है तथा सुख स्व-स्वभाव है। जो सुख के लिए दूसरों को/अनात्म स्वरूप को अपनाता है वह सुख के परिवर्तन में दुःखों को गले लगाता है। इसके विपरीत जो पर संयोग को त्याग करके आत्मा का ही आश्रय लेता है आलंबन लेता है वह सुख को प्राप्त करता है। इसका रहस्य यह है कि शुद्ध, स्वतंत्र आत्मा का स्वरूप ही अक्षय अनंत सुख स्वरूप है तथा शरीरादि पौद्गलिक द्रव्य है, जिसमें सुख का सर्वथा अभाव है। उसको स्वीकार रूप में जो मोह, राग है वह दुःख के निमित्त है। क्योंकि उसके कारण जो कर्म बंध होता है, उससे आत्मा परतंत्र हो जाता है और सुखादि गुण भी दुःख रूप में

परिणमन कर लेते हैं परन्तु भेद विज्ञान तथा भेद क्रिया रूप वीतराग चारित्र से पर संबंध रूप बंधन कट जाता है। तब आत्मा के सुखादि गुण प्रगट हो जाते हैं। इसे ही स्वतंत्रता/निःसंगत्व/स्वाधीन मोक्ष कहते है। कहा भी है-

पक्खीणघादिकम्मो अणंतवरवीरिओ अधिकतेजो।

जादो अणिंदिओ सो णाणं सोक्खं च परिणमदि।। (19)

He develops knowledge and happiness after heving exhausted the destructive karmas, being endowed with excellent infinite strength and excessive lustre and after becoming supersensuous.

इस व्याख्यान में यह कहा है कि आत्मा यद्यपि निश्चय से अनंतज्ञान और अनंतसुख के स्वभाव को रखने वाला है तो भी व्यवहार से संसार की अवस्था में पड़ा हुआ है, जब इसका केवलज्ञान और अनंतसुख स्वभाव कर्मों से ढ़का हुआ है, तब तक पाँच इन्द्रियों के आधार से कुछ अल्पज्ञान व कुछ अल्पसुख में परिणमन करता है। फिर जब कभी विकल्प रहित स्वसंवेदन या निश्चय आत्मानुभव के बल से कर्मों का अभाव होता है, तब क्षयोपशम ज्ञान के अभाव होने पर इन्द्रियों के व्यापार नहीं होते हैं, उस समय अपने ही अतीन्द्रिय ज्ञान और सुख को अनुभव करता है, क्योंकि स्वभाव के प्रगट होने में पर की अपेक्षा नहीं है, ऐसा अभिप्राय है।

स्वभावतः प्रत्येक जीव अनंतज्ञान, अनंतसुख, अनंतवीर्यादि, अनंतगुणों का अखण्ड पिण्ड है तथापि कर्मों के आवरण के कारण वे गुण आत्मा में ही गुप्त रूप में छिपे हुए हैं। कुंदकुंद देव ने समयसार में कहा भी है-

सो सव्वणाणदरसी कम्मरयेण णियेणवच्छण्णो।

संसारसमावण्णो णवि जाणदि सव्वदो सव्वं।। (67)

वह सर्वज्ञ, सर्वदर्शी जीव कर्मरज से आवृत्त होकर संसार में पतित हुआ है और सर्वदा सबको नहीं जानता है परन्तु जब वही कर्मरज रूपी आवरण हट जाता है तब वह सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, अनंतसुख एवं अनंतवीर्य सम्पन्न बन जाता है इसलिए वस्तुतः ज्ञान या सुख, पर से प्राप्त नहीं होता है परन्तु सहज आत्मोत्थ है।

प्रशान्तमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम्।

उपैति शान्तरजसं ब्रह्मभूतमकल्मषम्।। (27 गीता पृ. 76)

जिसका मन भलीभाँति शांत हुआ है, जिसके विकार शांत हो गये है, ऐसा ब्रह्ममय हुआ निष्पाप योगी अवश्य उत्तम सुख प्राप्त करता है।

युञ्जत्रेवं सदात्मानं योगी विगतकलमषः।
सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तं सुखमश्नुते।। (28)

आत्मा के साथ निरन्तर अनुसंधान करते हुए पाप-रहित हुआ यह योगी सरलता से ब्रह्मप्राप्ति-रूप अनंत सुख का अनुभव करता है।

सामग्रीविशेष विश्लेषिताखिलावरणमतीन्द्रियमशेषतो मुख्यम्। (11)

(प्रमेयरत्नमाला पृ. 83)

सामग्री की विशेषता से दूर हो गये है समस्त आवरण जिसके, ऐसे अतीन्द्रिय और पूर्णतया विशद ज्ञान को मुख्य प्रत्यक्ष कहते है।

ऐश्वर्यमप्रतिहतं सहजो विरागस्तृप्तिर्निसर्गजनिता वशितेन्द्रियेषु।
आत्यान्तिकं सुखमनावरणा च शक्तिर्ज्ञानं च सर्वविषयं भगवंस्तथैवा।।

(पृ.102)

तथा संन्यासियों के गुरु अवधूत के भी वचन उसके विषय में इस प्रकार है-

हे भगवान्! आपका ऐश्वर्य अप्रतिहत (अखण्ड) है, वैराग्य स्वाभाविक है, तृप्ति नैसर्गिक है, इन्द्रियों में वशिता है अर्थात् आप जितेन्द्रिय हैं, आपका सुख आत्यन्तिक अर्थात् चरम सीमा को प्राप्त है, शक्ति आवरण रहित है और सर्व विषयों को साक्षात् करने वाला ज्ञान भी आपका ही है।

क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः।

(पतञ्जली योगदर्शन 24 पृ.174)

अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष तथा अभिनिवेशरूप क्लेशों से, शुभाशुभकृतियों से जन्य पुण्य-पाप रूप कर्मों से, पुण्य-पाप के फल-जाति, आयु तथा भोग प्रतिनिधि सुख दुःख रूप विपाक से और सुख-दुःखात्मक भोग से जन्य विविध वासनाओं से अस्पृष्ट, जीवरूप अन्य पुरुषों से विशिष्ट, चेतन ईश्वर है।

सत्वपुरुषान्यताख्यातिमात्रस्य सर्वभावाधिष्ठातृत्वं सर्वज्ञातृत्वं च। (49)

पुरुष (आत्मा) एवं प्रकृति (कर्म) के भेदज्ञान से सम्पन्न योगी को संपूर्ण पदार्थों के अधिष्ठातृत्व का (अर्थात् संपूर्ण पदार्थों को नियंत्रित करने के सामर्थ्य का)

और समस्त पदार्थों के ज्ञातृत्व का (अर्थात् संपूर्ण पदार्थों को ठीक-ठाक जान लेने की शक्ति का) लाभ होता है।

तद्वैराग्यादपि दोषबीजक्षये कैवल्यम्। (50)

विवेक ख्याति की निष्ठा द्वारा, विवेक ख्यातिजन्य सिद्धिविषयक परम वैराग्य की प्राप्ति हो जाने से, पर वैराग्यजन्य असम्प्रज्ञात समाधि द्वारा, रागादि दोषों के मूल कारण अविद्या के समाप्त हो जाने पर पुरुष को कैवल्य भी प्राप्त हो जाता है।

सत्त्वपुरुषयोः शुद्धिसाम्ये कैवल्यम। (55) पृ. 424

बुद्धि एवं पुरुष की शुद्धि के समान रूप से हो जाने पर मोक्ष हो जाता है।

जिघच्छापरमारोगा, संखारा परमा दुखा।

एतं ञत्वा यथाभूतं निब्बानं परमं सुखं।। (धम्मपद नं.पृ. 65)

भूख सबसे बड़ा रोग है, संस्कार सबसे बड़े दुःख हैं, इसे यथार्थ (रूप से) जानकर निर्वाण सबसे बड़ा सुख है।

ज्ञान गंगा

व्रते विवादं विमत्ति विवेके, सत्येऽतिशंका विनये विकारम्।

गुणेऽवमानं कुशले निषेधं, धर्म विरोध न करोति साधु।।

किसी के द्वारा गृहीत व्रत पर विवाद करना, विवेकपूर्ण बात से विपरीत परामर्श देना, सत्य पर अत्यधिक शंका करना, किसी के विश्वासपूर्ण व्यवहार को विकृत बताना, गुण का अपमान करना, कुशल व्यक्ति का निषेध करना, धर्म का निरोध करना, इतनी बातें साधु पुरुष नहीं करता। **-क्षेमेन्द्र**

सफलता के नशे से बचें

सफलता सबसे बड़ी शिक्षक होती है और इसमें एक तरह का नशा भी होता है। तभी तो यह कभी-कभी स्मार्ट लोगों को यह अहसास भी देती है कि वे कभी असफल नहीं हो सकते। वहीं पर उनसे गलती हो जाती है और फिर सफलता उनसे दूर जाने लगती है। **-बिल गेट्स**

लगातार तनाव से दिमाग की बनावट भी बदल जाती है

तनाव कोई नहीं चाहता। ये बहुत बुरा एहसास तो देता ही है, शरीर और दिमाग पर इसके कई साइड इफेक्ट भी होते हैं। जो आगे चलकर बड़ी मुश्किल पैदा कर सकते हैं। सभी यह चाहते हैं कि तनाव की स्थिति से कैसे निकले यह सीख लें। हालाँकि तनाव हमेशा नकारात्मक असर करता हो, ऐसा भी नहीं है। कई बार यह उपयोगी भी साबित हो सकता है। जैसे जब कोई किसी खेल कंपीटिशन में हो या स्टेज पर जाना हो तो थोड़ा तनाव ऊर्जा देता है और अति-आत्मविश्वास में होने वाली गलतियाँ रोकता है। लेकिन ज्यादा और लगातार तनाव से दिमाग की बनावट बदल सकती है। दरअसल जब हम तनाव में होते हैं तो दिमाग में कोर्टिसोल हार्मोन रिलीज होता है, जो तनाव से लड़ने में मददगार होता है। लेकिन जब लंबे समय तक तनाव बना रहता है और लगातार कोर्टिसोल रिलीज होता है तो इससे दिमाग और शरीर पर नकारात्मक असर होता है। इससे तनाव से लड़ने की क्षमता तो धीरे-धीरे कम होती ही है इम्यून सिस्टम भी कमजोर होता है। याददाश्त और लर्निंग की क्षमता कम हो जतीी है। दिमाग में जो हिस्से काम करते हैं उनमें एक्टिविटी कम हो जाती है। जज करने, निर्णय करने की क्षमता भी कम होने लगती है। सामाजिक व्यवहार भी बदल सकता है। लेकिन जब आप एक्सरसाइज और मेडिटेशन करते हैं तो यह प्रक्रिया बदल जाती है और दिमाग पर सकारात्मक असर होता है। इसलिए जब तनाव ज्यादा हो तो दौड़ने जा सकते हैं, एक्सरसाइज कर सकते हैं और फिर कुछ मेडिटेशन कर सकते हैं। इससे तनाव के बुरे असर रुक जाते हैं।

महामारी का रूप ले रहा है डिप्रेशन

डिप्रेशन एक शांत महामारी जो तेज गति से हमारे देश पर हावी हो रही है। आज हर पाँच में से एक महिला व 10 में से एक पुरुष इस महामारी का हिस्सा बनता जा रहा है। किन्तु एक रोग के तौर पर डिप्रेशन की पहचान करने से लोग कतराते हैं। 90 प्रतिशत तक रोगी मनोचिकित्सक तक पहुँचते ही नहीं व बिना उपचार के ही जीवन गुजार देते हैं। आज हर उम्र, हर तबका व पृष्ठभूमि के लोग इसकी चपेट में

आ रहे हैं। चाहे वो चकाचौंध में जीने वाले फिल्म स्टार हों या बड़े व्यवसायी या अच्छे मेडिकल कॉलेज अथवा आई.आई.टी. में दाखिले की आस लिए प्रतिभाशाली छात्र हो या उधारी व सूखे की मार खा रहा किसान। बढ़ते शहरीकरण और बिखरे परिवार ने एकाकीपन को बढ़ाया है जिससे मानसिक समस्याएँ तेजी से बढ़ी है।

मानसिक स्वास्थ्य उपेक्षित-भारत जैसे खुशमिजाज देश के लिए यह सचमुच खतरे की घंटी है। एक तरफ जब हर मानक हमारी आर्थिक तरक्की को इंगित कर रहा है, ऐसे में अवसाद की महामारी चिंता की बात है। किन्तु यदि गहराई में जाये तो शायद मानसिक स्वास्थ्य के प्रति हमारी अनदेखी भी इसका एक बड़ा कारण है। आज भी मानसिक स्वास्थ्य ना हमारी प्राथमिकता है व ना ही नीति निर्धारकों की। आम भारतीय अपने मानसिक स्वास्थ्य को ठीक रखने का कोई प्रयत्न नहीं करता व इस दिशा में सरकारी प्रयास भी नगण्य है। हालाँकि सरकार व राजनैतिक दल बढ़ती आत्महत्याओं पर अपनी चिंता जरूर दर्शाते हैं किन्तु अवसाद की रोकथाम का कोई गंभीर प्रयास दिखाई नहीं देता। सरकारों की प्राथमिकता में मानसिक स्वास्थ्य नहीं है।

सबसे बड़ी समस्या-प्रतिस्पर्धा के इस दौर में खुद के लिए समय निकालना, दिनचर्या को सुचारू रखना व मनोरंजन के लिए जतन करना कुछ लोग ही कर पाते हैं। डिप्रेशन की गंभीरता को देखते हुए ये प्रयास जरूरी हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन का अनुमान है डिप्रेशन 2020 तक (हृदय रोगों बाद) दूसरी सबसे बड़ी समस्या होगी।

20 प्रतिशत महिला, 10 प्रतिशत पुरुष इस महामारी का हिस्सा बनते जा रहे हैं, 90 प्रतिशत तक रोगी मनोचिकित्सक तक पहुँचते ही नहीं।

इसे डिप्रेशन मानिये-यूँ तो जीवन के उतार-चढ़ाव व उथल-पुथल व्यक्ति को कभी भी निराश कर सकती है किन्तु हर निराशा डिप्रेशन नहीं होती। जब व्यक्ति में निम्न लक्षण लगातार दो-तीन हफ्ते तक बने रहे तो हम डिप्रेशन के तौर पर पहचान करते हैं।

हर समय उदासी या खालीपन महसूस होना, जीवन में हर कार्य में दिलचस्पी का अभाव, एकाग्रचित्त होने या किसी भी निर्णय लेने में कठिनाई, भूख कम लगना या अधिक लगना, नींद कम या अधिक आना, हर समय थकान या कमजोरी महसूस करना या हर समय कोई ना कोई शारीरिक शिकायत का होना, हर घटना में नकारात्मक

भाव देखना, हर दुर्भाग्यपूर्ण घटना के लिए खुद को दोषी ठहराना, जीवन बेकार समझना व आत्मघाती विचार आना।

लाइलाज नहीं डिप्रेशन-डिप्रेशन (अवसाद) एक गंभीर बीमारी है किन्तु लाइलाज नहीं है। मनोचिकित्सक की सलाह से 'एंटी डिप्रेसंट' दवाएँ लेने से डिप्रेशन को ठीक किया जा सकता है। ये दवाएँ 6 से 12 माह तक दी जाती है। इसके बाद रोगी की स्थिति के अनुसार इन्हें धीरे-धीरे बंद करते हैं। जिन्हें बार-बार डिप्रेशन होता है उन्हें अधिक समय तक इन दवाओं को लेना होता है। दवाओं के अलावा साइकोथैरेपी द्वारा भी रोगी का उपचार किया जाता है। प्रशिक्षित मनोचिकित्सक या मनोवैज्ञानिक रोगी के साथ बैठकर व्यक्तित्व में उस कमी को दूर करने का प्रयास करता है जिसके चलते रोगी का नजरिया नकारात्मक हो जाता है।

सकारात्मक सोच-जीवनशैली में बदलाव जैसे नियमित दिनचर्या, स्वच्छ व पौष्टिक भोजन, नशे की आदत से दूरी, नित्य व्यायाम और सकारात्मक सोच भी व्यक्ति को डिप्रेशन से दूर रखती है।

दुखद पहलू है कि लोग इसकी उपस्थिति को छुपाते हैं किन्तु सत्य बिल्कुल विपरीत है। डिप्रेशन भी ठीक उसी प्रकार का रोग है जैसे कि डायबिटीज, हृदय रोग या किसी हड्डी का टूटना। अतः शर्म का पर्दा हटाइये व मनोचिकित्सक तक पहुँच अपने जीवन को अर्थ व गुणवत्ता दीजिये। -डॉ. ललित बत्रा

मेरी साधना : नवकोटि से बनूँ सरल-सहज-पावन

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : आत्मशक्ति.....)

मन-वचन-काय व कृत-कारित/(अनुमत) से, सरल-सहज मैं रहूँ पावन।
इसकी सतत साधना मैं करूँ, जिससे पाऊँ मैं परिनिर्वाण।। (1)

शुभाशुभ परिणति से बंधते कर्म, नवकोटि होते है इनके भेद।
पुण्य-पाप भी इनसे बंधते, नवकोटि से अतः मैं बनूँ पावन।। (2)

स्व-पर-विश्वहित हेतु ही सोचूँ, वचन से भी हित हेतु ही बोलूँ।
यथायोग्य भी काय से मैं करूँ, करूँ-कराऊँ व अनुमत करूँ।। (3)

सर्वजीव में मैं मित्रता करूँ, गुणीजन से करूँ प्रमोद भाव।
दुःखी जीव से करूँ करुणा भाव, विपरीत वालों से भी माध्यस्थ भाव।। (4)

इससे मुझे न होते राग-द्वेष-मोह, ईर्ष्या-घृणा व वैर-विरोध।
परनिंदा-अपमान-हानि न होते, समता-शांति का करूँ अनुभव।। (5)

इससे मेरी भी बढ़ती शक्ति, आध्यात्मिक साधनों में होती वृद्धि।
ध्यान-अध्ययन व शोध-बोध बढ़े, लेखन-अध्यापन में भी होती वृद्धि।। (6)

शत्रु-मित्र का भेद-भाव न होता, मिटता है अपना-पराया भाव।
निस्पृह-निराडंबर-निर्द्वंद्व बढ़े, कोई भक्त आये या न आने पर।। (8)

गुण-गुणी-प्रशंसा भी मैं करूँ, दुर्गुणी-पापी का भी न करूँ अनादर।
आदर्श का तो मैं अनुकरण करूँ, प्रतिक्रिया से न करूँ अयोग्य भाव/(काम)।। (9)

पर संचालित अशुभ भाव/(काम) न करूँ, स्व-संचालित ही (मैं) करूँ शुभ काम/(भाव)।
सरल-सहज-पावन ही मैं रहूँ, पर संचालित (भी) न इन्हें करूँ त्याग।। (10)

इस हेतु त्यागूँ (मैं) ख्याति पूजा लाभ, दबाव-प्रलोभन-वर्चस्व भय।
मौन-एकांत व वीतरागी बनूँ, 'कनक' शुद्ध-बुद्ध-आनंद बनूँ।। (11)

सीपुर, दिनांक 18.05.2017, रात्रि 9.32
(यह कविता नितिन (सीपुर) के कारण बनी)

सरलता ही सफलता है...

आइडिया-सीधी लाइन खींचना, सबसे टेढ़ा काम है और टेढ़ी रेखा खींचना, सबसे सरल। ठीक इसी तरह जटिल आदमी बनना, सबसे सरल काम है और सरल आदमी बनना, सबसे जटिल है। जानिये कैसे सरलता से सफलता हासिल की जा सकती है...

सरलता का अर्थ सीधेपन से बिलकुल नहीं है। सरलता का मतलब है वैचारिक स्पष्टता। अपने बारे में स्पष्टता, जिसमें द्वंद्व न हो...

बचपन में हम सभी सरल होते हैं। निर्मल और पारदर्शी होते हैं। लेकिन जैसे

ही बड़े होते हैं घर, परिवार और समाज हमसे अपेक्षा करता है कि सरलता छोड़कर, दुनियादारी सीखें। स्मार्ट बनें, तेज बनें। रणनीतियाँ सीखें ताकि हम लोगों से आगे निकल सकें। जब हम इस दौड़ का हिस्सा बन जाते हैं तो प्रवचन शुरू हो जाते हैं कि अंधी दौड़ से बचें। जिंदगी को थोड़ा सरल बनायें। पिछले दो दशकों में तकनीकी विकास और सूचना क्रांति ने भी हमारी जिंदगी पर गहरा असर डाला है। हम बिना सोचे-समझे किसी भी आइडिया के पीछे दौड़ते रहते हैं। फलस्वरूप हम सभी जटिलता का शिकार हो रहे हैं। कई दफा मजबूरियाँ भी हमें इस रास्ते पर चलने के लिए विवश करती है। जब जिंदगी में कोई बाधा आ जाती है। हम उधेड़बुन में रहते हैं और अंदर ही अंदर संघर्ष चलता रहता है। इस दौड़ में हमारा मूल स्वभाव कहीं खो जाता है। ऐसे माहौल में सरल बने रहना भी किसी चुनौती से कम नहीं है। सरलता ताकतवर होती है। कंफ्यूशियस दुनिया के महान् दार्शनिक थे। उनकी जिंदगी का निचोड़ था 'जीवन बेहद सरल है लेकिन हम इसे जटिल बनाने पर तुले रहते हैं।' इसे समझने के लिए जरूरी है कि पहले सरलता को जान लिया जायें।

सरलता का अर्थ है स्पष्टता। यानी जिसे जानना-समझना आसान हो। पारदर्शी हो, जैसे बच्चे सरल होते हैं, निर्मल होते हैं। इसी गुण की वजह से हम उन्हें भगवान् का रूप भी कह देते हैं। यहाँ सरलता का अर्थ सीधेपन से बिलकुल नहीं है। सरलता का मतलब है वैचारिक स्पष्टता। अपने बारे में स्पष्टता, जिसमें द्वंद्व न हों। कोई दुविधा न हो। दिल, दिमाग और वाणी में कोई अंतर न हो। इन्हीं गुणों की वजह से सरल लोग आत्मविश्वासी और विश्वसनीय होते हैं। लोग उन पर भरोसा करते हैं और उनके साथ सुरक्षित महसूस करते हैं। सरल लोग ही मौलिक होते हैं। वे समाज या लोगों की अपेक्षाओं के अनुसार स्वयं को नहीं बदलते। बल्कि अपनी सरलता की वजह से समाज की सोच बदल देते हैं। सरल लोग अपने कोरेपन और साफगोई के लिए भी मशहूर होते हैं।

जीव में प्रमाद जनित अनेक दोष पाये जाते हैं। वे दोष प्रतिक्रमण करने से क्षय को प्राप्त होते है। इसलिये अनेक भवों में संचित हुए विचित्र कर्मरूप दोषों की विशुद्धि के लिए मैं प्रतिक्रमण को कहूँगा।

पापिष्ठेन दुरात्मना जडधिया मायाविना लोभिना।

रागद्वेष मलीमसेन मनसा दुष्कर्म यन्निर्मितम्।।

त्रैलोक्याधिपते जिनेन्द्र भवतः भीपादमूलेऽधुना।

निंदा पूर्वमहं जहामि सततं वर्वर्तिषुः सत्पथे।। (2)

हे तीन लोक के अधिपति जिनेन्द्रदेव! अत्यंत पापी दुरात्मा, जड़बुद्धि, मायावी, लोभी और राग-द्वेष से मलीन मेरे मन ने जो दुष्कर्म उपार्जित किया है, उसका निरंतर सन्मार्ग में चलने की इच्छा रखता हुआ, आज मैं आपके चरण-कमलों में अपनी निंदापूर्वक त्याग करता हूँ।

खम्मामि सव्वजीवाणं सव्वे जीवा खमंतु मे।

मित्ती मे सव्व भूदेसु वैरं मज्झ ण केणवि।। (3)

मैं सब जीवों से क्षमा की याचना करता हूँ, सब जीव मुझे क्षमा प्रदान करे, मेरा सब जीवों से मैत्री भाव है, किसी के भी साथ मेरा वैर-भाव नहीं है।

रागबंधपदोसं च हरिसं दीणभावयं।

उस्सुगत्तं भयं सोगं रदिमरदिं च वोस्सरे।। (4)

राग परिणाम से होने वाले कर्मबंध और द्वेष, हर्ष, दीनभाव, उत्सुकता, भय, शोक, रति और अरति का परित्याग करता हूँ।

राग-इष्ट प्राप्ति में होने वाले परिणाम। **द्वेष**-अनिष्ट संयोग, इष्ट वियोग जनित परिणाम। **दीनता**-विषय प्राप्ति के परिणाम। **हर्ष**-मदोन्मत्तता अर्थात् अभिमान से उत्पन्न परिणाम। **भय**-इहलोक-परलोक संबंधी भय। **शोक**-इष्ट वियोग जनित परिणाम। **रति**-पर वस्तु की आकांक्षा रूप मनोविकार। **अरति**-पर वस्तु की अनाकांक्षा रूप परिणाम।

हा दुट्ठ-कयं हा दुट्ठ चिंतियं भासियं च हा दुट्ठं।

अंतो अंतो डज्झमि पच्छत्तावेण वेयंतो।। (5)

हाय! हाय मैंने दुष्टकर्म किये, हाय! हाय मैंने दुष्ट कर्मों का चिंतन किया और हाय! हाय! मैंने दुष्ट मर्मभेदी वचन कहे, अब मुझे अपने द्वारा किये कुत्सित कर्मों से बहुत पश्चात्ताप होता है, मेरा अन्तःकरण अत्यंत क्लेशित हो रहा है। अर्थात् मैं मन-

वचन-काय- से किये कुकृत कर्मों का पश्चात्ताप करता हूँ, भीतर ही भीतर खेद का अनुभव करता हूँ।

दव्वे खेत्ते काले भावे य कदाऽवराह-सोहणयं।

णिंदण-गरहण-जुत्तो मण-वय-कायेण पडिक्कमणं।। (6)

द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के निमित्त से की गई किसी जीव की विराधना या प्राणपीड़ा या आत्मनिंदा या गर्हापूर्वक (दोषों के चिंतनपूर्वक ग्लानि का होना) मन, वचन, काय की शुद्धि से परित्याग करना पडिक्कमण अर्थात् प्रतिक्रमण है।

एइंदिया बेइंदिया तेइंदिया चउरिंदिया पंचिंदिया पुढविकाइया आउकाइया तेउकाइया वाउकाइया-वणप्फदिकाइया तसकाइया एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

एकेन्द्रिय, दोइन्द्रिय, तीनइन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय, पृथ्वीकायिक, जलकायिक, तेजकायिक, वायुकायिक, वनस्पतिकायिक और त्रसकायिक इन जीवों को स्वयं वियोग रूप मारण किया हो, कराया हो, अनुमोदना की हो। इन्हीं जीवों का परितापन अर्थात् संताप किया हो, कराया हो, अनुमोदना की हो। इन्हीं जीवों का विराधन अर्थात् पीड़ा दी हो, दुःखी किया हो, कराया हो, अनुमोदना की हो तथा उपघात अर्थात् जीवों को एकदेश या सर्वदेश प्राण रहित किया हो, कराया हो, अनुमोदना की हो वह सब मेरा दुष्कृत्य मिथ्या हो, निरर्थक हो।

जीवन को सरल बनाने से मिलेगी सक्सेस

अगर आप अपने जीवन में सफलता प्राप्त करना चाहते हैं तो आपको जटिलता के बजाय सरलता को महत्व देना चाहिए।

आज के दौर में हर व्यक्ति सफलता चाहता है, पर वह समझ नहीं पाता कि सफलता कैसे प्राप्त की जाये। दरअसल आपको सफलता प्राप्त करने के लिए जीवन की जटिलताओं को कम करना होगा। जीवन जितना ज्यादा सरल होगा, सफलता मिलाने के चांस भी उतने ही ज्यादा होंगे। ज्यादा उलझने के बजाय कॉन्सेप्ट क्लीयर रखने चाहिए कि आप लाइफ में क्या

करना चाहते हैं और टारगेट हासिल करने का क्या प्लान है।

टेक्स्ट बंद करें-यह हिदायत नये जमाने को ध्यान में रखकर दी जाती है। हमारा ज्यादातर कम्यूनिकेशन बॉडी लैंग्वेज की मदद से पूरा होता है, ऐसे में हम व्हाट्सएप मैसेज से अपने मन की पूरी बात कैसे कह सकते हैं। हमें लोगों से मिलकर अपनी बात रखनी चाहिए। लोगों से सीधे मिलना एक अच्छी आदत है। टेक्स्ट मैसेज से बात रखना अच्छी आदत नहीं है।

गुस्से पर करें काबू-काम के दौरान कई लोग ज्यादा गुस्सा करते है। गुस्से के कारण काम बनने के बजाय बिगड़ने लगते हैं। काम को बिगड़ने से बचाने के लिए शांति से काम लेना चाहिए। आपको हर व्यक्ति की बात को ध्यान से सुनना चाहिए और धैर्य के साथ आगे बढ़ना चाहिए। गुस्से के बजाय सबसे प्रेम से बात करेंगे तो लोग खुशी से काम पूरे करेंगे।

जल्दीबाजी से बचें-जो व्यक्ति जीवन में जितनी जल्दबाजी दिखाता है, वह उतना ही परेशान होता है। सफलता प्राप्त करने के लिए आपको जल्दबाजी से नहीं, बल्कि सावधानी से काम करना होगा। जल्दबाजी के कारण अक्सर व्यक्ति गलत कदम उठा लेता है और बाद में परेशान होता है। इसलिए आपको हर काम में पूरी सावधानी के साथ करना चाहिए।

समय के पाबंद बनें-आपको जीवन को सरल बनाने के लिए समय का पाबंद बनना चाहिए। जो व्यक्ति समय का पाबंद नहीं होता है, वह उलझा हुआ रहता है और कम समय में ज्यादा काम पूरे करना चाहता है। समय का पाबंद बनने से आपका जीवन बिना जटिलता के चलता रहता है।

जरूरत से ज्यादा वायदे न करें-अगर किसी से कोई ऐसा वायदा कर बैठते हैं, जिसे आप पूरा ही नहीं कर सकते तो परेशान होंगे। लोग हर रोज कुछ न कुछ नये कार्यों के लिए निवेदन करते हैं और आप इनके लिए हामी भरते जाते हैं तो दिक्कतें होती हैं। आप सिर्फ वही काम कर सकते हैं, जिसे आप करना जानते हैं। अगर गलत कामों में उलझ जायेंगे, तो समय बर्बाद होगा।

अनुशासन से मिलती है मदद-अगर आप अनुशासित रहते हैं तो आपके जीवन में ज्यादा परेशानियाँ नहीं आती हैं। अगर आप जीवन को सरल बनाना चाहते

हैं तो जीवन में अनुशासन को महत्व दें। हो सकता है कि आपके पास नये आइडियाज हों, पर इसका मतलब यह नहीं है कि आप अनुशासन का मजाक बनायें।

सुने पर नहीं, देखे पर करें यकीन-अगर तनावमुक्त रहना चाहते हैं और जीवन को अच्छा बनाना चाहते हैं तो आपको दूसरों के सुने पर यकीन करने के बजाय खुद के देखे पर यकीन करना चाहिए। कई लोग आपको नई-नई बातें बताकर भ्रमित कर सकते हैं, पर आपकी आँखें आपको सच्चाई से जरूर रूबरू करवायेंगी।

मल्टीटॉस्किंग से बचें-जीवन को आसान बनाये रखने के लिए मल्टीटॉस्किंग से बचना चाहिए। मल्टीटॉस्किंग से काफी ऊर्जा खर्च होती है और काम की क्वालिटी खराब होने लगती है। इससे आप जल्दी फ्री हो जायेंगे, पर आपको पूरे दिनभर में चिंता बनी रहेगी कि काम सही भी हुआ है या नहीं।

जिंदगी का भरोसा संवेदनशीलता

बाजार के आधिपत्य वाले इस समय में अक्सर भावुक या संवेदनशील होने को इंसानी फितरत की कमजोरी के तौर पर देखा जाता है। माना जाता है कि भावुक इंसान जिंदगी के काँटों भरे सफर को पूरी जिम्मेदारी से तय नहीं कर पाता। वह या तो खुद से हार मान लेता है या फिर निर्मम चालबाजों की भीड़ में कोई न कोई उसे मात दे देता है। लेकिन इसे पूरी तरह से सही नहीं माना जा सकता। हम आपको बताते हैं कि भावुकता किस तरह हमारे अंदर मानवीय मूल्यों को कायम रखने में मदद करती है।

संवेदना-वह संवेदना ही है जो हमें पशुओं से अलग करती है। यह सोच-समझकर सच के पक्ष में खड़ा होने की ताकत देती है। कोई व्यक्ति जितना अधिक संवेदनशील होगा उतना ही दूसरों के दुःख-दर्द को समझेगा, उसमें शामिल होगा। संवेदनशील व्यक्ति ही सही मायने में इंसान है।

बारीक पकड़-ज्यादा संवेदनशील होने का एक फायदा यह है कि हमें बिटविन दि लाइंस पढ़ने का अनुभव हो जाता है। यानी हम चीजों को इतनी बारीकी से देखते हैं कि वो बातें भी समझ में आ जाती हैं जो दरअसल अनकहे ढंग से कहीं

जाती हैं। सही निष्कर्षों तक पहुँचने में हमें इसका फायदा मिलता है। संवेदनशील इंसान ही अनकही बातों को समझ पाता है।

भावनात्मकता जागरूकता-एक संवेदनशील मनुष्य अपनी आंतरिक भावनाओं को लेकर भी अधिक सजग-सचेत रहता है। यही वजह है कि किसी भी लेखक, संगीतकार, अदाकार या अन्य कलाकारों में संवेदनशीलता कूट-कूटकर भरी होती है। इतना ही नहीं वे अपने स्वास्थ्य इत्यादि का भी अधिक खयाल रख सकते हैं क्योंकि उनको दर्द या किसी भी तरह की अन्य परेशानी का अहसास औरों से जल्दी हो जाता है। वह अधिक भावुक होते हैं।

रचनात्मकता-हाल ही में एक शोध से यह पता चला है कि अत्यधिक संवेदनशील लोगों में से 20 फीसदी लोग तथा अंतर्मुखी स्वभाव के लोगों में से 70 फीसदी लोग रचनात्मकता पर बहुत जोर देते हैं। ऐसे लोगों के कला और संस्कृति के क्षेत्र में नाम रोशन करने की संभावना से जुड़े किस्से आये दिन पढ़ने-सुनने को मिलते रहते हैं।

ऐसा नहीं कि संवेदनशीलता केवल खुशियों का खजाना ही खोलती हैं। बल्कि इसके साथ कई परेशानियाँ भी जुड़ी होती हैं, जिनसे या तो हमें तत्काल निपट लेना चाहिए या फिर उनके साथ जीवन बिताने की तरकीब सीख लेनी चाहिए। आइये देखते हैं क्या है वे परेशानियाँ।

अतिशय भावुकता-संवेदनशील लोगों के लिए सबसे बड़ी चुनौती होती है अपनी अतिभावुकता पर काबू पाना। ऐसे लोग जल्दी ही भावनाओं में बह जाते हैं जिसका चतुर लोग फायदा उठा लेते हैं।

दूसरों से प्रभावित होना-संवेदनशील लोग दूसरों की सुनी-सुनाई बातों में बहुत जल्दी आ जाते हैं और बिना आगा-पीछा सोचे उस पर प्रतिक्रिया दे डालते हैं जो उनको पछताने पर मजबूर कर सकती है।

बेशक भावुक होना जिंदगी जीने का वह नजरिया देता हैं जो सब लोगों के पास नहीं होता लेकिन साथ ही हमें यह जरूरी सावधानी भी बरतनी चाहिए कि भावुकता के जोर में कहीं हम चीजों को देखने का तार्किक नजरिया न गँवा बैठें।

अपनी पीठ खुद थपथपाना सीख लें

-डॉ. उज्वल पाटनी

प्रोत्साहन जीवन बदल सकता है। सफलता और प्रोत्साहन एक-दूसरे से जुड़े हुए पहलू हैं। आपके काम को प्रोत्साहन न मिलने पर उदास होने की बजाय खुद को प्रोत्साहित करने की कोशिश करें।

कुछ लोगों को हम अक्सर यह कहते हुए सुनते हैं कि उन्हें कोई देने वाला नहीं मिला, माता-पिता ने कभी आगे नहीं बढ़ाया, कभी पीठ नहीं थपथपाई। इन्हीं सब वजह से हम तरक्की नहीं कर पाये। गौर करे तो प्रोत्साहन एक संजीवनी की तरह काम करता है। सफल लोगों पर निगाह डालेंगे, तो पता लगेगा कि कइयों को प्रोत्साहन नसीब नहीं हुआ, पर वे लगे रहे और सफल हुए। उन्होंने खुद को ही प्रोत्साहित किया। इसी तरह क्या आपने खुद को खुश किया है? खुद को उत्साह से भरा है? अगर आपका जवाब ना है तो गौर कीजिये कि आपको खुद को भी प्रोत्साहित करना है, क्योंकि दूसरों के प्रोत्साहन के इंतजार में कहीं आप अपना समय तो नहीं गँवा रहे हैं। आपको चाहिए कि खुद को हर मौके पर प्रोत्साहित करें। अपने हर टारगेट के पूरा होने पर खुद को तोहफा देना न भूलें। याद रखे कि आप खुद खुश रहेंगे, तभी आप दूसरों को भी खुश रख सकेंगे।

एक खुशी अपने लिए-आप खुश तो जग खुश के आधार पर जिये। आपको खुशी में शिरकत करने वाला अगर कोई नहीं है, तो उठिये और अकेले जश्न मनाइये। कोई भी ऐसा काम कीजिये, जो आपकी खुशी दोगुनी कर देता हो। उस दिन कहीं बाहर जाकर अपनी पसंद के मुताबिक कुछ खायें, घूमने जाये, फिल्म देखें, कुल मिलाकर सार यही है कि अपनी उपलब्धि पर उस दिन खुद को स्पेशल फील करायें। इससे आप तो खुश होंगे ही, साथ ही अवसाद से भी बचे रहेंगे। काम और घर के बीच कई बार आप खुद को समय ही नहीं दे पाते, लेकिन जिस दिन आपका कोई भी काम पूरा हो उस दिन अपनी खुशी का दिन मनायें। अपने दिल और दिमाग को सकून देने वाले काम को करें। अपने काम के बारे में कभी भी नकारात्मक भाव न लायें। अपने टारगेट को उसी खुशी और उत्साह से करे जितने उत्साह से शुरू किया था।

आज खुद से करे बातें-आप खुद को ज्यादा वक्त नहीं दे पाते हैं, तो सबसे आसान उपाय है खुद से बातें कीजिये। अपने आप को खुश रखने का यह सबसे सरल तरीका है। खुद से अच्छी बातें ही करें। किसी काम को करने की ठान चुके हैं, तो फिर पीछे हटने के बारे में न सोचें। हमेशा उस काम की बेहतरी के लिए ही सोचें। अपनी मेहनत के बाद सफलता को खुली आँखों से देखने का प्रयास करे, उसके बारे में नकारात्मक भाव न लायें। हमेशा खुद से कहे कि मैं इसे कर सकता हूँ और सिर्फ मैं ही इसे कर सकता हूँ। अपनी क्षमताओं पर यकीन करे और इनका इस्तेमाल करें। काम को लगन से पूरा करे और अपनी खुशी के बारे में भी जरूर सोचें। काम अपनी जगह महत्वपूर्ण है, लेकिन इन सबके बीच आपकी खुशी भी जरूरी है। काम और खुशी के बीच तालमेल बिठायें।

उत्सुकलाल विचार!

-अजीत

एक विचार बीज की तरह होता है। इस पर मेहनत की जाये, तो ये एक मजबूत पेड़ बन सकता है...

कुछ नया सूझता है, तो उस पर गंभीरता से सोचने के बजाय हम उसे छोड़कर आगे बढ़ जाते हैं। उस विचार की अहमियत शून्य में आँकते हैं। जबकि उस विचार के परिणाम बेहतर हो सकते हैं।

लक्ष्य अहम है-विचार सभी के मन में आते हैं, लेकिन उन्हें मंजिल तक पहुँचाने का दम हर एक में नहीं होता। जब भी कोई आइडिया आये, तो उसकी सतहों को खंगालकर देखें। शायद ये एक नया आइडिया कॅरिअर में आपकी मदद कर जाये। ऐसे ही कुछ सुझावों पर नजर डालते हैं, जो विचार आने के बाद ध्यान रखने चाहिए।

आइडिये की ताकत-हम अक्सर दिमाग में उपजे विचार को फिजूल करार देते हैं। जबकि उस एक विचार में सैकड़ों संभावनाएँ छुपी होती हैं। उसकी तहों को जानकर कुछ अलग किया जा सकता है जैसे कई वैज्ञानिकों ने एक आइडिये पर अद्भुत आविष्कार किये हैं।

उत्सुकता बरकरार रखें-अपने विचार को लेकर हमेशा उत्सुकता और लचीला रुख अपनायें। उससे संबंधित बार-बार सवाल करें और जवाब ढूंढ़ें उदाहरण के लिए यदि कोई व्यक्ति कोई नया हुनर सीखना चाहता है, तो उसे वो कैसे सीख सकता है? उसका भविष्य में क्या लाभ होगा आदि सवालों की तरह। ये सवाल सही मुकाम तय करेंगे।

एक से दो भले-जितने ज्यादा लोग होंगे, उतने बेहतर विचार सामने आयेंगे। आप चाहे तो अपने इस काम में अपने दोस्तों को भी जोड़ सकते हैं। धीरे-धीरे अच्छे सुझाव निकलकर आयेंगे और आत्मविश्वास भी बढ़ेगा।

सोच और शोध जरूरी-कोई भी विषय सही दिशा के साथ-साथ शोध की भी माँग करता है। आपके पास निर्धारित आइडिया पर सारी जानकारी मौजूद होगी, तो आप सभी एंगल साफ-साफ देख पायेंगे। इससे घाटे की संभावना शून्य हो जाती है।

बाहें खोले रखें-किसी दायरे में बंधकर न रहें। हर क्षेत्र और लोगों से मिलें। उनके काम और नजरिये को जानें। यह रवैया आपको रचनात्मकता और खुला ज्ञान प्रदान करेगा। हो सकता है आपको अपने विचार के लिए कोई बेहतर विकल्प मिल जायें।

महत्वपूर्ण चरण-कोई नया विचार जेहन में आये, तो उसे तुरंत कहीं लिख लें। आइडिये पर सोच-विचार कर उससे संबंधित आँकड़े इकट्ठा करना शुरू कर दें। उस कार्य को अंजाम तक पहुँचाने के लिए एक खाका तैयार कर लें। जब कार्य शुरू हो जाये, तो पूरी तरह से खुद पर विश्वास रखें।

खुशमिजाजी दे लंबा जीवन

वैज्ञानिकों का कहना है कि उम्रदराज लोगों में जीवन को लेकर नजरिया अधिक सकारात्मक रहता है। अध्ययन में देखा गया कि ज्यादातर लोगों को बाहर घूमना-फिरना पसंद था, वे आशावादी और उत्साह से भरपूर थे। समाज में उनके परिचय का दायरा काफी लंबा था और हँसना उन्हें बेहद पसंद था।

खुशियों को बाहर नहीं खोजा जा सकता है, वे हमारे भीतर ही

मौजूद होती हैं। -अरस्तू

जिस तरह एक दीपक की मदद से हजारों दीपक जलाये जा सकते हैं, ठीक उसी तरह खुशियाँ बाँटने से कम होने के बजाय बढ़ती हैं।-गौतम बुद्ध

यह बात सच है कि खुशियाँ पैसे से खरीदी नहीं जा सकती हैं। लेकिन खुशियाँ हमें कुछ अनमोल चीजें दे जरूर सकती हैं। जी हाँ, लंबी उम्र एक ऐसी नेमत है जिसका खुशियों के साथ सीधा संबंध है। अल्बर्ट आइंस्टीन कॉलेज ऑफ मेडिसिन तथा येशिवा विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों का कहना है कि आशावादी, हँसी-मजाक से भरपूर तथा घुमक्कड़ स्वभाव के लोगों के लंबा जीवन जीने की संभावना अधिक होती है। यह कहा जाये तो गलत नहीं होगा कि खुशमिजाजी और लंबी उम्र एक-दूसरे के पर्याय हैं।

वैज्ञानिकों ने अपने अध्ययन में पूर्वी यूरोप में रहने वाले 95 वर्ष से अधिक आयु के 500 यहूदी लोगों और उनके 700 बच्चों को शामिल किया। पूर्वी यूरोप के यहूदी समुदाय के लोगों का चयन इसलिये किया गया क्योंकि उनका बाहरी समाज से बहुत अधिक संपर्क नहीं है और इसलिये अध्ययन के दौरान उनके तथा दूसरे समुदाय के लोगों की जीन संरचना में अंतर को आसानी से परखा जा सकता था।

अध्ययन में शामिल प्रमुख वैज्ञानिक डॉ. नीर बार्जिलाई के मुताबिक जब इन लोगों के व्यवहार का अध्ययन किया गया तो पाया कि जो लोग अधिक उम्रदराज थे, जीवन को लेकर उनका नजरिया उतना ही सकारात्मक था। उनमें से ज्यादातर लोगों को बाहर घूमना-फिरना पसंद था, वे आशावादी और उत्साह से भरपूर थे। समाज में उनके परिचय का दायरा काफी लंबा था और हँसना उन्हें बेहद पसंद था।

वैज्ञानिकों को ऐसे प्रमाण भी मिले कि 70 से 100 की उम्र के बीच के लोगों के स्वभाव में कई दफा काफी बदलाव भी देखने को मिलते हैं। इस शोध में यह पता नहीं चल पाया कि ये तमाम लोग पहले से ही इतने हँसमुख स्वभाव के थे या उम्र के इस पड़ाव पर उनके स्वभाव में कुछ तब्दीली आई।

बहरहाल डॉ. बार्जिलाई के मुताबिक इससे यह तो स्पष्ट हो गया कि किसी इंसान का व्यक्तित्व उसके लंबे जीवन और अच्छे स्वास्थ्य दोनों ही लिहाज से अहम होता है। अध्ययन के निष्कर्ष बताते हैं कि लंबे जीवन का आनंद भी वही व्यक्ति ले

सकता है जो सकारात्मक, आशावादी होने के साथ-साथ खुशमिजाज और घुमक्कड़ी स्वभाव का होता है।

दगाबाजी से दुखता है दिल

लड़कों के मुकाबले अधिक संवेदनशीलता लड़कियों को बनाती है गुस्सैल। नये शोध में देखा गया है कि दोस्तों की दगाबाजी से लड़कियाँ ज्यादा आहत होती हैं।

दोस्तों की दगाबाजी यूँ तो किसी को भी हताश कर सकती है, लेकिन ऐसी किसी भी घटना से लड़कों के मुकाबले लड़कियों के मन को ज्यादा ठेस पहुँचती है। ड्यूक विश्वविद्यालय के शोधकर्त्ताओं का मानना है कि जब भी दोस्तों में किसीतरह की दगाबाजी देखने को मिलती है तब लड़कों की तुलना में लड़कियों को इस झटके से उबरने में अधिक मशक्कत करनी पड़ती है। इतना ही नहीं दोस्तों के धोखा देने पर उनको गुस्सा भी लड़कों की तुलना में ज्यादा आता है।

दरअसल किसी भी रिश्ते में लड़कियाँ भावनात्मक रूप से अधिक गहराई से जुड़ जाती हैं। ऐसे में अगर कोई उनके भेद दूसरों पर खोलता है या औरों के साथ मिलकर उनका मजाक बनाता है, तो उनको यह बात बहुत नागवार गुजरती है। ऐसी बातों पर उन्हें दुःख तो होता ही है साथ ही गुस्सा भी खूब आता है। ऐसे में उनको लगता है कि उनका दोस्त उनका खयाल नहीं रखता है या फिर यह कि वह किसी न किसी तरह उन पर नियंत्रण स्थापित करने की कोशिश कर रहा है।

शोधकर्त्ता जूली मैकइवॉय तथा स्टीवन एशर ने 267 बच्चों पर अध्ययन किया। इसमें इन बच्चों को ऐसी काल्पनिक कहानियाँ सुनाईं, जिनमें किसी दोस्त ने दूसरे दोस्त के साथ धोखा किया या वह दूसरे दोस्त द्वारा दी गई किसी जिम्मेदारी को निभा पाने में असमर्थ रहा था।

कहानियाँ सुनाने के बाद उन्होंने पाया कि लड़के जहाँ ऐसी गलतियाँ करने वाले दोस्तों को आमतौर पर माफ करने के मूड में थे, वहीं लड़कियों के साथ ऐसा नहीं था। उन्होंने दोस्तों की ऐसी हरकतों पर दुःख और गुस्से का इजहार किया।

शोध में शामिल बच्चे अपने दोस्तों को खुद के जितना ज्यादा करीब मानते थे,

उनके द्वारा गलत व्यवहार करने पर उनको उतना ही ज्यादा गुस्सा आया और उन्होंने अपने रिश्ते को संभालने की उतनी ही कम इच्छा दिखाई। वहीं अगर दोस्त उनके बहुत करीब नहीं था तो उनको उस पर उतना अधिक गुस्सा भी नहीं आया।

शोधकर्त्ता एशर ने कहा, हमारी शोध के परिणाम इसलिये रोचक हैं क्योंकि अब तक हुए शोधों के परिणामस्वरूप यही माना जाता रहा है कि दोस्ती के दौरान किसी तरह की समस्या आने पर लड़के अधिक नकारात्मक भूमिका में आ जाते हैं। लेकिन इस शोध ने साबित किया है कि रिश्तों को लेकर लड़कियाँ अधिक संवेदनशील होती हैं।

अनजानी उपेक्षाएँ भी बुरी लगती हैं

अगर कोई परिचित हमें अनदेखा करके निकल जाये तो हमें बुरा लगता है लेकिन शोधकर्त्ताओं की माने तो अजनबियों द्वारा नजरंअंदाज किया जाना भी हमें उतना ही खलता है। पर्डू और ओहियो विश्वविद्यालयों के शोधकर्त्ताओं ने इस संबंध में एक शोध किया है जिसके परिणाम चौंकाने वाले साबित हुए हैं।

शोध की प्रक्रिया-विश्वविद्यालय के शोधकर्त्ताओं ने एक शोध सहायक को राह चलते लोगों से आई कॉन्टैक्ट बनाने को कहा। शोध सहायक को कहा गया कि उसके सामने जितने भी लोग आते हैं उनमें से कुछ को वह देखें और मुस्कराएँ जबकि बाकी लोगों को वह देखे लेकिन अपने चेहरे पर पहचान का कोई संकेत लाये बिना निकल जाये। ठीक ऐसे जैसे उन लोगों का कोई अस्तित्व ही न हो। इसके बाद एक दूसरे शोधकर्त्ता ने उन सभी लोगों को रोककर बात की जिनसे पहले शोधकर्त्ता ने आई कॉन्टैक्ट बनाया था या उनकी अनदेखी की थी। शोधकर्त्ताओं ने पाया कि जिन लोगों के साथ पहले शोधकर्त्ता ने अपनी भाव-भंगिमा से संपर्क नहीं बनाया था वे अन्य लोगों के मुकाबले कुछ असहज और अजीब-सा महसूस कर रहे थे।

शोधकर्त्ता एरिक डी वेसलमैन का कहना है कि नजरअंदाज किया जाना किसी को रास नहीं आता है फिर चाहे वह गैर हो या अपना। यह शोध सामाजिक संपर्क का एक नया आयाम हमारे सामने पेश करता है। हम इन रोचक संबंधों के बारे में और जानकारी हासिल कर सकते हैं।

भावनात्मक रूप से आप जितने मजबूत होंगे, आपको बीमारियाँ उतनी ही कम होंगी। आपसे स्ट्रेस कोसों दूर रहेगा।

अच्छे स्वास्थ्य के लिए बने इमोशनली स्ट्रॉन्ग

हो सकता है कि आप शारीरिक रूप से पूरी तरह से फिट हों, पर यदि आप इमोशनली फिट नहीं हैं तो पूर्ण रूप से स्वस्थ नहीं कहे जा सकते। पूर्ण स्वास्थ्य का मतलब है-शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य का सही समन्वय। शोध बताते हैं कि इंसान को ज्यादातर बीमारियाँ शारीरिक गड़बड़ी से नहीं, बल्कि मानसिक गड़बड़ी के कारण होती है। मानसिक गड़बड़ियों को दूर करने के लिए आपको मन में चल रहे खयालों पर काबू पाना होगा और अच्छे स्वास्थ्य की कामना करनी होगी। अगर आप रोजमर्रा के जीवन में कुछ आदतों को अपना लेंगे तो इमोशनली काफी मजबूत बन सकते हैं।

आत्मसम्मान का महत्व-आपको खुद का और दूसरों का सम्मान करना चाहिए। इससे आपको अच्छा महसूस होता है। अगर आप खुद को कमजोर और सताया हुआ इंसान समझते है तो आप डिप्रेशन के शिकार हो सकते हैं। इससे आपका शारीरिक और मानसिक विकास रुक जाता है। आपको ऐसे दोस्त खोजने चाहिए जो आपकी तरक्की में मदद करे और आपके आत्मसम्मान को बढ़ाने में मदद करें। आपको सबकी मदद के लिए तैयार रहना चाहिए। इससे आपके अंदर एक नई ऊर्जा का संचार होगा।

नियमित व्यायाम करें-आपको अपने व्यायाम का शेड्यूल तैयार करना चाहिए। आपको वजन कम करने को लेकर भी सचेत रहना चाहिए। ब्लड प्रेशर, कोलेस्ट्रोल आदि समस्याओं पर काबू पाने के लिए नियमित एक्सरसाइज करना जरूरी है। इससे आप डिप्रेशन से भी बचे रहते हैं। जरूरी नहीं कि आप भारी-भरकम व्यायाम ही करें, आप सुबह की सैर पर जा सकते हैं, योग और प्राणायाम कर सकते हैं। पूरे दिन में आधा घंटे की गई एक्सरसाइज भी आपको स्वस्थ रख सकती है। एक्सरसाइज करने से आपके मस्तिष्क को एक नई ऊर्जा मिलती है, जो आपकी भावनाओं को सही दिशा प्रदान करती है। कई ताजा शोधों के अनुसार जो व्यक्ति नियमित रूप से व्यायाम करता है वह न करने वाले की तुलना में कहीं ज्यादा स्वस्थ

और दीर्घायु प्राप्त करता है। कम ही सही थोड़ा समय अपने लिए जरूर निकालें।

बहस से बचें-अगर आप मानसिक रूप से मजबूत रहना चाहते हैं तो अपने निजी रिश्तों में बहस से बचना चाहिए। बहस के दौरान व्यक्ति खुद को समझदार साबित करने की कोशिश करता है, पर वह यह भूल जाता है कि इससे पछतावे के सिवाय कुछ हासिल नहीं होता। जिस व्यक्ति में बहस करने की आदत होती है, उसका दिमाग कभी भी शांत नहीं रहता। बहस से बचने के लिए जरूरी है कि कोई प्रतिक्रिया करने से पहले आप पूरी बात सुनें। आपको बातचीत से समस्याओं का हल निकालना चाहिए।

हर इंसान अच्छी सेहत चाहता है। सेहत के लिए कोई जिम जाता है तो कोई अपना खान-पान बदलता हैं, पर क्या आपको पता है कि अच्छी सेहत के लिए इमोशनली फिट रहना भी बहुत जरूरी है। आप भावनात्मक रूप से जितने ज्यादा मजबूत होंगे, आपको बीमारियाँ उतनी ही कम होंगी।

न्यूट्रिशियल सप्लीमेंट्स का खयाल-मानसिक रूप से स्वस्थ रहने के लिए जरूरी है कि भोजन में हर तरह के पोषक तत्त्व सही मात्रा में हों। आपके भोजन में फैटी एसिड, विटामिन बी, कैल्शियम, मैगनीशियम आदि जरूर होने चाहिए। अगर आप जंक फूड खाते रहेंगे तो आपके शरीर को जरूरी पोषक तत्त्व नहीं मिल पायेंगे। आपको तला हुआ और बासी खाना भी नहीं खाना चाहिए। इससे आपका मानसिक विकास भी अवरुद्ध होगा।

बुरी आदतों से रहे दूर-शराब, धूम्रपान और ड्रग्स का सेवन करने से आपका खुद पर काबू कम हो जाता है और आप ज्यादा गुस्सा करने लगते हैं। इनसे आप चिड़चिड़े हो जाते हैं और इससे आपकी सोचने-समझने की क्षमता पर भी बुरा असर पड़ता है। जो व्यक्ति नशा करता है, वह अपने जीवन में कभी भी सही फैसला लेने लायक नहीं रहता। वह कभी गुस्सा करता है और कभी भावुक हो जाता है। इमोशंस को संभालने के लिए जरूरी है कि जीवन में बुरी आदतों से दूर रहा जायें।

खूबियों पर करे गौर-आपको खुद को पॉजिटिव इंसान बनाने की कोशिश करनी चाहिए। इसके लिए आपको अपनी खूबियों पर गौर करना चाहिए। आपको अपनी कमियों को लेकर अफसोस नहीं करना चाहिए। आपको कमियों को दूर करना

चाहिए। अपनी प्रगति को लेकर संतोष प्रकट करना चाहिए। आपको पॉजिटिव सोच के साथ अपने सपनों को पूरा करने का प्रयास करना चाहिए। आपको मन ही मन में इस बात को दोहराना चाहिए कि मैं एक प्यारा इंसान हूँ। मैं पूरी तरह से स्वस्थ हूँ। स्वास्थ्य पर मेरा पूरा हक है। अगर आपके दिमाग में हर समय खुशी और जोश का संचार होता रहेगा तो हर तरह की मानसिक समस्या दूर हो सकती है।

ईश्वर में करे विश्वास-दुनिया में कोई तो ऐसी पारालौकिक शक्ति है, जो इस दुनिया को चला रही है। हमारे साथ हमेशा ईश्वर का साथ है। यह एहसास हर कोई व्यक्ति मन में रखे तो वह कहीं अधिक आत्मविश्वास के साथ अपना जीवन जी सकता है। आत्मविश्वास इनर हैल्थ का सबसे बड़ा घटक कहा जा सकता है।

तनाव को रखे काबू में-भागदौड़ भरी जिंदगी में हर किसी को काफी तनाव है, पर तनाव को मैनेज करना भी एक कला है। तनाव से घबराने वाला इंसान मानसिक रूप से परेशान हो जाता है। उसे लगता है कि दुनिया में सिर्फ परेशानियाँ ही परेशानियाँ हैं। आपको अपने तनाव को प्रेम में परिवर्तित करना चाहिए। इसके लिए आपको अपनी सोच में बदलाव लाना होगा। आपको संघर्ष के बजाय साथ को महत्व देना होगा। आपको हमेशा बदला लेने की भावना के बजाय क्षमा करना चाहिए। आपको जीवन में आगे के बारे में विचार करना चाहिए। गुजरे समय को लेकर दुःखी होने से मानसिक सेहद बिगड़ती है।

शब्दों पर रखें काबू-मुँह से बोले गये शब्द वापस नहीं आते। इनसे जो जख्म मिलते हैं, वे कभी नहीं भरे जा सकते। आपको अपने गुस्से को इस तरह व्यक्त करना चाहिए कि किसी को नुकसान न पहुँचे। जब भी आपको गुस्सा आये तो किसी पर चिल्लाने के बजाय एक्सरसाइज शुरू कर दें। जरूरत पड़ने पर ही संवाद करना चाहिए। बिना सोचे कुछ भी बोल देने से आपकी सोच के बारे में पता लगता है। अपनी सोच को बेहतर बनाने के लिए जरूरी है कि बोलने से पहले पूरी तरह से विचार कर लिया जायें।

बैलेंस्ड डाइट लें-आपको अपने भोजन में सब्जियाँ, दालें और फलों का भरपूर सेवन करना चाहिए। अगर आप बैलेंस्ड डाइट नहीं लेते हैं तो आपका मूड खराब रहता है। आपको भरपूर मात्रा में पानी पीना चाहिए। आपको चीनी, चॉकलेट,

कैफीन आदि का ज्यादा सेवन करने से भी बचना चाहिए। आपको लंबे समय तक भूखे पेट नहीं रहना चाहिए। पूरे दिनभर आपको टुकड़ों-टुकड़ों में कुछ न कुछ खाते रहना चाहिए। जो इंसान हैल्दी डाइट लेता है, वह मानसिक रूप से स्वस्थ रहता है।

हालात को धन्यवाद-आपके जीवन में कितना भी बुरा क्यों न हुआ हो आपको मौजूदा स्थिति के लिए धन्यवाद देना चाहिए। अतीत पर रोना खुद की सेहत बिगाड़ना ही है। अगर आप हार नहीं मानते और खुद को खुश रखते हैं तो आप इमोशनली हैल्दी रह सकते हैं। मानसिक स्वास्थ्य एक ऐसा खजाना है, जिसे लगातार अभ्यास के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है। इसलिए जीवन के प्रति सकारात्मक नजरिये के साथ आगे बढ़े और स्वस्थ रहे क्योंकि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क का निवास रहता है।

क्रोध के कारण जब समझदारी खो दें

एक हुनर है गुस्सा काबू में करना-गुस्से की शुरुआत दिमाग में मौजूद बादाम जैसी दो रचनाओं एमायग्डाला में होती है। यह हमारे लिए खतरे की पहचान कर खतरे के संकेत भेजता है। यह इतना माहिर है कि माथे के ठीक पीछे पाये जाने वाला प्रि-फ्रंटल कॉरटेक्स यह तय भी नहीं कर पाता कि हमारी प्रतिक्रिया सही है या नहीं। यानी हमारी रचना ही ऐसी है कि हम हमारी हरकतों के नतीजे पर विचार करने के पहले ही आक्रामकता दिखा चुके होते हैं। पर यह गुस्से का बहाना नहीं हो सकता। इसका मतलब है कि गुस्से को काबू करना कौशल है, जिसे सीखना पड़ता है।

आक्रमकता के लिए जिम्मेदार है हार्मोन-जब एमायग्डाला खतरे के संकेत भेजता है तो किडनी के ऊपर मौजूद एड्रिनल ग्रंथियाँ एड्रनलिन हार्मोन छोड़ती है। इससे दिल की धड़कन बढ़ जाती है, मस्तिष्क और मांसपेशियों में खून का प्रवाह बढ़ जाता है। फिर शरीर में टेस्टोस्टेरॉन हार्मोन निकलता है, जो आक्रामकता और बढ़ाता है। माँसपेशियाँ सख्त होने लगती हैं। फिर कैटेकोलामाइन जैसे न्यूरोट्रांसमीटर निकलते हैं, जिससे ऊर्जा का विस्फोट-सा होता है, जो कई मिनट मौजूद रहता है और आप तत्काल लड़ने की मुद्रा में आ जाते हैं।

आप सोच भी नहीं सकते इतना होता है नुकसान–गुस्से से स्ट्रेस हार्मोन कार्टिसोल निकलता है, जो ऊर्जा का विस्फोट-सा करता है, लेकिन लंबे समय में यह ब्लड शुगर का संतुलन बिगाड़ता है। हड्डियाँ और रोग प्रतिरोधक शक्ति कमजोर होती है। दिमाग की सोचने की क्षमता प्रभावित होती है और ब्लड प्रेशर बढ़ जाता है। खून का थक्का जम सकता है, जो दिल या दिमाग में जाकर हार्ट अटैक या लकवे का कारण बन सकता है। गले व दिमाग की माँसपेशियों में कड़ेपन से सिरदर्द, माइग्रेन और नींद न आने की शिकायत हो जाती है। पेट में एसिड निकलने से अल्सर का खतरा बढ़ता है।

शांत बने रहने के लिए जानिये दो नुस्खे–आपकी बाइक के आगे अचानक कार आ जाती है। आपको गुस्सा आता है फिर देखते हैं अरे ड्राइवर तो आपका दोस्त है। ऑक्सीटोसिन हार्मोन निकलता है। गुस्सा गायब। भाईचारे की भावना रखकर ऑक्सीटोसिन के जरिये गुस्सा काबू में रख सकते हैं। फिल्म में किसी को रोते देखते है तो वही भाव आपके चेहरे पर आ जाते हैं। यह मिरर न्यूरॉन करते हैं। क्रोध में आये व्यक्ति को शांत मुद्रा में समझाये उसका गुस्सा ठंडा पड़ जायेगा, क्योंकि उसके मिरर न्यूरॉन आपकी शांत मुद्रा की नकल करते हैं।

जैसी जरूरत वैसी ही बन जाती है सोच

आपने मृग मरीचिका के बारे में तो जरूर सुना होगा। जब कोई इंसान रेगिस्तान में चारों तरफ रेत के टीलों में प्यासा घिर जाता है तो उसे दूर चमकती रेत को देखकर दरिया का अहसास होता है और वह पानी की तलाश में उसकीओर भागता है। अब शोधकर्त्ताओं ने भी कह दिया है कि हमारे संवेदी अंगों पर हमारी मनोदशा का सीधा असर होता है।

फ्रांस के नाइस सोफिया एंटीपोलिस विश्वविद्यालय के शोधकर्त्ताओं ने पाया है कि भूखे लोग खाने-पीने की चीजों की पहचान आसानी से कर लेते हैं बनिस्पत उन लोगों के जिन्होंने तुरंत खाना खाया हो। इसे इस तरह भी समझ सकते हैं कि भूखे लोगों के संवेदी तंत्र खाये-पिये लोगों की तुलना में ज्यादा सक्रिय हो जाते हैं, खासतौर पर तब जब मामला खाने-पीने की चीजों से ताल्लुक रखता हो।

एक बहुत पुरानी कहावत है कि आँखें वही देखती हैं जो हमारा मन हमें दिखलाना चाहता है। शोधकर्त्ता भी पिछले कई दशकों से यह बात जानते रहे हैं कि हमारे मस्तिष्क में जो कुछ चलता है वह हमारे संवेदी तंतुओं पर असर डालता है। मसलन आपको यह जानकर बहुत आश्चर्य होगा कि गरीब बच्चे जो अक्सर धन के अभाव से जूझते रहते हैं उनको सिक्के अपने वास्तविक आकार से बड़े दिखाई देते हैं।

इसी तरह भूखे लोगों को खाने-पीने की चीजों की तस्वीरें आकार से ज्यादा बड़ी नजर आती हैं। इसकी वजह साफ है। ये चीजें हमेशा उनके दिमाग में चलती रहती हैं और वे बड़ी आसानी से उनकी पहचान कर लेते हैं।

शोध की प्रक्रिया–शोध में साधारण कद-काठी के 42 बच्चों को शामिल किया। परीक्षण में शामिल आधे लोगों से कहा गया कि वे जब परीक्षण के लिए पहुँचे तो उन्होंने कम से कम 4-5 घंटे से कुछ न खाया हो। इस तरह आधे लोग वहाँ खाना खाकर परीक्षण के लिए पहुँचे जबकि बाकी आधे भूखे। पहले परीक्षण में प्रतिभागियों से एक कंप्यूटर स्क्रीन की ओर देखने को कहा गया। स्क्रीन पर एक के बाद एक 80 शब्द प्रदर्शित किये गये। इनमें से एक चौथाई शब्द खाने से संबंधित थे। शोधकर्त्ताओं ने पाया कि भूखे लोगों को खाने-पीने से जुड़े शब्द अधिक बड़े और चमकदार नजर आये। शोधकर्त्ता राडेल ने कहा-मेरे लिए यह बात चकित करने वाली है कि हमारी मनोदशा हमारे मस्तिष्क पर इतना अधिक असर डाल सकती है। हमारे मन में कुछ ऐसा है जो सूचनाओं को हमारे लिए सुगम और सहज बनाता है।

सीधे क्यों सफल नहीं होते?

(सीधे अधिक सफल होते हैं निम्नोक्त 10 गुणों से युक्त)

सीधे-सादे लोगों के बारे में कहा जाता है कि ये कभी किसी का बुरा नहीं चाहते लेकिन ये अपने समकक्षों से अक्सर पीछे रह जाते हैं। ये बड़े भावुक और संवेदनशील होते हैं। दिमाग से ज्यादा दिल की सुनते हैं।

हमारे आसपास मौजूद लोगों में से कुछ ऐसे होते हैं जो सफल होना तो चाहते हैं लेकिन उनके व्यक्तित्व का भोलापन और व्यवहार की सहजता उन्हें ऐसा करने से

रोकती है। ऐसे लोग भोले और सीधे कहलाते हैं। इनके बारे में कहा जाता है कि ये कभी किसी का बुरा नहीं चाहते लेकिन ये अपने समकक्षों से अक्सर पीछे रह जाते हैं। ये बड़े भावुक और संवेदनशील होते हैं और दिमाग से ज्यादा दिल की सुनते हैं।

दस कारण जो सीधे और भोले-भाले की असफलता के साथ सीधे-सीधे जुड़े हैं। यदि आप भी ऐसे हैं तो ये दस कदम चले, आप सीधे रहकर भी सफल बन सकते हैं।

पहला कदम खुद पर भरोसा–खुद पर भरोसा या अपने ऊपर विश्वास एक ऐसी मनोभावना है जो आपके हर काम में आपको सबसे पहला साथी होती है। किसी काम की सफलता के लिए जी-तोड़ मेहनत से पहले आपको खुद पर भरोसा होना चाहिए कि आप काम को अंजाम तक पहुँचा सकेंगे। यदि ऐसा नहीं होगा तो आप भोले बनकर उसी भीड़ का हिस्सा बने रहेंगे जो खुद की योग्यता पर कम और दूसरों की सलाहों पर ज्यादा भरोसा करती है।

दूसरा कदम योग्यता–आपकी योग्यता आपका सबसे बड़ा हथियार है। एक सफल और असफल व्यक्ति में योग्यता का अंतर ही सबसे प्रमुख अंतर होता है। आप मेहनत तो बहुत करते हैं लेकिन योग्यता के सवाल को हमेशा टाल जाते हैं तो आपकी सफलता हमेशा अधूरा रास्ता तय करेगी। आपको सीधे रहकर सफल बनना है तो अपनी योग्यता को अपने समकक्षों से बेहतर बनाने के प्रयास करने होंगे। योग्यता की पूँजी हमेशा बढ़ती है इसलिए ज्ञान इकट्ठा कीजिये और उसे दूसरों में बाँटिये।

तीसरा कदम योजना–यदि आपको खुद पर भरोसा है और आप योग्य भी है लेकिन काम का तरीका व्यवस्थित नहीं है तो न तो जिंदगी व्यवस्थित होगी और न ही दिनचर्या। अधिकांश सीधे लोगों की यही परेशानी रहती है कि वे योजना बनाने का गुर नहीं जानते और इसके अभाव में दूसरों पर निर्भर रहते हैं। जब उनके आसपास के लोग योजना बनाकर अपना हित सिद्ध कर लेते हैं तो सीधे-सादे कहते सुने जाते हैं कि, भलों का तो जमाना ही नहीं रहा। लेकिन, ऐसा नहीं है यदि आप खुद को सफल बनाने के लिए आवश्यक योजना और बैकअप तैयार रखे तो सफल जरूर बन सकते हैं।

चौथा कदम बदलाव-'जमा पानी सड़ जाता है और बहता पानी निर्मल बना रहता है', सफल लोगों की जिंदगी का भी यही दर्शन होता है कि वे बदलाव को सहजता से लेते है। आपका सरल और सहज होना विशिष्ट गुण बन जायेगा यदि उसके साथ कोई सकारात्मक बदलाव जुड़ जाये। आप अच्छे बने रहे, लेकिन एक जगह न बने रहे। बदलाव समय की ही नहीं, व्यक्तित्व की भी माँग है। यदि आप नहीं बदलेंगे तो समय तथा आसपास के लोग बदल जायेंगे और आप फिर पीछे रह जायेंगे, एक पश्चाताप के साथ कि हम क्यों नहीं बदले?

पाँचवाँ कदम स्व-संघर्ष-अधिकतर लोग केवल इसी उधेड़बुन में पीछे रह जाते हैं कि वे खुद से ही लड़ते रहते हैं। लड़ने की वजह एक अंतर्द्वंद्व होता है जिसमें एक मन कहता है कि दूसरों जैसे बन जाओ और एक कहता है जैसे हो बने रहो। कुछ लोग तो जिंदगीभर यही लड़ाई लड़ते रहते हैं और खुद को ही भुला बैठते हैं। यह भावुक मन की अति संवेदनशील मनोवैज्ञानिक स्थिति होती है जो किसी को भी असहाय बना सकती है। यदि आप ऐसा नहीं चाहते तो खुद को अंदर से मजबूत और स्व को स्व-प्रेरणा से सहयोगी बनाइये।

छठा कदम चुनौती-आपका किया हर एक काम और आपको मिला हर मौका एक चुनौती की तरह होता है। जो लोग इस बात को समझकर व्यवहार करते हैं उनकी सफलता की संभावना दूसरों के मुकाबले कई गुना अधिक बढ़ जाती है। चुनौती मन और शरीर को लक्ष्य की दिशा में साधकर हमें लक्ष्य केंद्रित बनाती है। जो लोग चुनौती लेने से घबराते हैं, सफलता भी उनसे उतना ही घबराती है। स्वभाव की सहजता कई बार चुनौती लेने से रोकती है लेकिन यदि सहजता को व्यक्तित्व व चुनौती को सफलता का मंत्र माना जाये तो आपकी बात बन सकती है।

सातवाँ कदम टीम वर्क-माना कि आप बड़े सहज, समझदार और योग्य व्यक्ति हैं लेकिन यदि टीम के महत्व को भूलकर कोई काम करने में विश्वास रखते हैं तो आपकी सफलता एकाकी हो जायेगी। एकाकी से तात्पर्य यह कि न तो आप मान सकेंगे कि आप सफल हैं और न ही दूसरों को जता सकेंगे। इसके विपरीत यदि आप टीम वर्क और साझेदारी से कोई काम करते हैं तो न सिर्फ आप सफल होते हैं बल्कि आपको प्रतियोगिता के कारण अपने गुणों को निखारने का अच्छा अवसर भी मिलता

है। टीम में अपनी सहज वृत्ति के कारण आपको सम्मान भी मिलता है और सफलता भी।

आठवाँ कदम भावुकता से बचाव-काम कैसा भी हो उसमें आपकी भावुकता आपको ऐसा सब करने पर मजबूर कर देती है जिसे समझौता नाम दिया जा सकता है। कई काम ऐसे होते है जो आपको साफ-सुथरी सफलता दिला सकते हैं लेकिन आप सिर्फ इसलिये नहीं करते कि आपका मन आपके बस में नहीं होता। दिमाग जोर डालता है कि आपको ऐसा करना चाहिए लेकिन दिल कहता है कि नहीं, ऐसा नहीं करना चाहिए। बेशक, आप ऐसा कुछ न करे जिससे दूसरों का नुकसान हो लेकिन दिमाग की सुनकर वो जरूर करे जिससे खुद को फायदा हो।

नौवाँ कदम सहयोगी सोच-व्यवहार-सीधे लोग अपने व्यवहार की भावुक कमजोरी के कारण ही अक्सर धोखा खाते हैं। ऐसे लोग करना तो भला चाहते हैं लेकिन हो उसका उल्टा जाता है। इस स्थिति को सोच और व्यवहार में सामंजस्य बनाकर आप अपना नैसर्गिक व्यवहार बनाये रख सकते हैं और सफल भी हो सकते हैं। आपका व्यवहार ही सफलता की गारंटी देता है लेकिन व्यवहार ऐसा होना चाहिए कि वह आपका सहयोगी बने और दूसरों को भी बनाये। यदि आपका व्यवहार कमजोर और दब्बू प्रवृत्ति का रहा तो बजाय सफलता पाने के आप शोषण का शिकार हो सकते हैं।

दसवाँ कदम डर निवारण-अधिकांश सीधे लोग किसी काम को शुरू किये बिना ही भयग्रस्त हो जाते हैं। ये भय असफलता का कम और सोच का ज्यादा होता है। इसे अनुभव और आत्मविश्वास की कमी भी कहा जा सकता है। अधिकांश लोग डर की कल्पना से ही इतने प्रभावित हो जाते हैं कि किसी काम को हाथ में लेने से पहले ही हार मान लेते हैं। उन्हें लगता है कि वे कोई काम कर ही नहीं सकते और यदि करेंगे तो सफल नहीं होंगे। वे इसी सोच से डरे रहते हैं और उनके सामने समकक्ष लोग बिना डरे सफल बन जाते हैं। सफल लोग किसी खास किस्म के नहीं होते और न ही इन्हें ईश्वर द्वारा कोई शक्ति मिलती है। वे तो बस प्रयास करने में विश्वास रखते हैं, डरने में नहीं।

सफलता की एबीसीडी

-विकास मलकानी

इस संसार में प्राप्त करने योग्य चीजों को जिन्होंने पाया है उन्होंने तब काम किया जब अन्य लोगों ने आराम किया, जब अन्य लोग निराश होकर हार मानकर बैठ गये तो वे निरंतर अपने काम में जुटे रहे। ये वे लोग थे जिन्होंने परिश्रम और एक उद्देश्य की अमूल्य आदत को जीया।

A for Awareness यानी जागरुकता, B for Belief यानी विश्वास, C for Choice यानी पसंद, D for Detachment यानी त्याग, E for Enjoyment यानी आनंद।

कर्म की वर्णमाला

A-Affirm : दृढ़ता से कहे मैं सफल होने में सक्षम हूँ। B-Believe : विश्वास करे कि आप सबसे ऊँचा लक्ष्य पा सकते हैं। C-Commit : अपने सपने को पूरा करने का संकल्प लें। D-Dare : कोशिश, संकल्प लेने और जोखिम लेने का साहस करें। E-Educate : खुद को शिक्षित करें। ज्ञान शक्ति है, प्रयोग करे पर शॉर्टकट से बचें। F-Find : प्रतिभा, संभावनाएँ, धन, समय और तरीका खोजें। G-Give : दाता बनें। कुछ मिले, इसके पहले कुछ देना होगा। H-Hope : पूरी आशा के साथ प्रार्थना करे और डटे रहें। I-Imagine : जीत की कल्पना करें कि आप विजय-रेखा पार कर रहे हैं। J-Junk : दिमाग में भरे नकारात्मक व हीनता के विचार फेंक दें। K-Knock : उदासी और निराशा को बाहर धकेलें। L-Laugh : खुद पर हँसना सीखे लेकिन दूसरों पर नहीं। M-Make it happen : जुट जाये पूरी ऊर्जा के साथ काम करें। N-Negotiate : समझौते में शर्म न करें। कुछ फेरबदल कर लें। O-Overlook : समस्याओं में उलझने के बजाय उन्हें जीतें। P-Persevere : डटे रहे, हार न मानें। मुश्किलें हमेशा हारती हैं, संघर्ष करने वाले हमेशा जीतते हैं। Q-Quit : यह शिकायत करना छोड़ दें। R-Reorganize : चाहे आप असफल हो या सफल, आपको जीवन के किसी ने किसी हिस्से को हमेशा व्यवस्थित करना चाहिए। S-Share : सफलता के बिंदु पर प्रशंसा और श्रेय बाँटना न भूलें। T-Trade-off : अदला-बदली करने से न हिचकें। U-Unlock : आस्था, आशा और प्रेम जैसे मूल्यों

का ताला खोलें। V-Visualize : अपने सपने की तस्वीर सामने रखें। आप खुद को जैसा देखते हैं, वैसे ही बनते हैं। W-Work : मेहनत करने का कोई विकल्प नहीं है। X-X-Ray : जरा रुकें। लक्ष्य का एक्स-रे करे, फिर आगे बढ़ें। Y-Yield : अपना जीवन और समस्याएँ ईश्वर को सौंप दीजिये। खुद प्रयास करने के बाद ईश्वर को अपना काम करने दीजिये। Z-Zip it up : अगर आप आत्मविश्वास के सहारे जीते हैं, अपने उद्देश्यों का एक्स-रे करते हैं और खुद को ईश्वर को सौंप देते हैं तो निश्चित रहिये आपका उत्साह आपको सफल बनायेगा।

('टफ टाइम्स नेवर लास्ट, बट टफ पीपुल डू' में रॉबर्ट एच. शुलर)

जब लक्ष्य हासिल करने में विफलता मिले

नाकामियाँ स्वीकारें प्रयासों को नया रूप दें-असफलता या नाकामी एक ऐसी अवस्था है, जिसमें तय लक्ष्य प्राप्त नहीं होता। विफलता व्यक्ति को इतनी तकलीफ इसलिए देती है, क्योंकि यह स्वीकारना बहुत कठिन होता है कि हमने गलतियाँ की हैं। विफलता स्वीकारने का मतलब है कि आप प्रयासों को नया रूप देंगे, जिसके सफल होने की ज्यादा संभावना होगी। जो सार्वजनिक रूप से नाकाम होते हैं और उसे गरिमा के साथ स्वीकार करते हैं, उन्हें लोग सम्मान देते हैं, क्योंकि उन्हें लगता है कि यह व्यक्ति भी हमारे जैसा ही गलतियाँ करने वाला व्यक्ति है। इससे उस व्यक्ति का भी आत्मविश्वास कायम रहता है।

असफलता छुपाये नहीं, फख्र से बतायें-हमारा दिमाग एक दिशा में काम नहीं करता। वह भ्रमित होता है, फिर अनुमान लगाता है। फिर अटकल पर काम करता है और अनुमान लगाता है। नाकाम होता है। फिर पीछे जाता है, दोहराता है। दिमाग प्रिडिक्शन इंजन और पेटर्न रिकग्नाइजिंग मशीन है। हम अनुभव से अनुमान लगाते हैं और राह निकालकर आगे बढ़ते हैं। दिमाग में विफलता से सीखने की अनूठी काबिलियत होती है। यानी विफलता कोई दाग नहीं है बल्कि हमारे सीखने के तरीके का प्रोजेक्शन है। सिलिकॉन वैली की एक विफल स्टार्टअप कंपनी की प्रमुख कैसेंड्रा फिलिप्स ने विफल कंपनियों की कॉन्फ्रेंस फैलकॉन शुरू की। हर साल 500 से ज्यादा कंपनियाँ आती और विफलता की चर्चा करती। सभी को कुछ न कुछ

सीखने को मिलता। इससे सिलिकॉन वैली में माहौल बदल दिया। अब विफलता वहाँ छिपाने की नहीं, दिखाने की, फख्र की बात हो गई है।

अन्य लोगों से तुलना मत कीजिये-विफलता का भय यानी चिंता का भविष्य में प्रक्षेपण और भूतकाल पर निर्भरता है। खुद को वर्तमान में लायें। जो इस पल कर रहे हैं, उस पर केंद्रित रहें। इससे आपकी रचनात्मकता और इनोवेशन की प्रेरणा फलेगी-फूलेगी। किसी भी काम को संपूर्णता से करना यानी परफेक्ट होना अच्छा है, लेकिन यह गुण यदि आपको पीछे खींच रहा हो तो इस पर काबू पायें। हमेशा परफेक्ट होने की चाह, निराशा के बीज बोने जैसा है। प्रयोग करने के बाद विफल होना बेहतर मानवीय प्रवृत्ति है। दूसरों से या कामयाब लोगों से तुलना न करें। रातोंरात सफलता दुर्लभ होती है। आमतौर पर सफलता के पीछे कठोर मेहनत और काफी प्रयास होते हैं।

गलतियों को रोज डायरी में लिखें-विफलता स्वीकार कर उसे पहचानना ही उससे पार पाने का मंत्र है। इसके लिए अपनी गलतियों को एक डायरी में दर्ज करना शुरू कर दीजिये कार्यस्थल पर, घर पर या दोस्तों के साथ कौनसी गलतियाँ हुईं। सब लिख डालिये। फिर देखे कि क्या आपने इंट्यूशन यानी अपनी सहज वृत्ति नजरअंदाज कर सुरक्षित रास्ता अपनाया और बाद में पछतायें? या आपने ऐसी जोखिम ली, जिसका प्लान ठीक नहीं था? गलतियाँ दर्ज करते रहने से आपको गलतियों का पैटर्न नजर आने लगेगा। यह देखे कि कौनसी गलतियाँ आप दोहरा रहे हैं और उनसे आपने क्या सीखा।

संवाद-अभिनय युक्त कविता

मेरी भाव कहानी

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : माँ मुझे अपने आँचल में छिपा लें.....)

माँ जिनवाणी बताओ..मेरी भाव कहानी...मम सच्ची कहानी...

जिनेन्द्र देव से है जो सुनी...(ध्रुव)...

जिनवाणी माँ द्वारा समाधान-

जिनवाणी बता रही..भाव की कहानी...अशुभ-शुभ व शुद्ध बखानी...
इनके भेद-प्रभेद अनेक बखानी...संख्य-असंख्य-अनंत बखानी...
तेरी सच्ची कहानी...जिनेन्द्र देव से है जो सुनी...माँ...(1)...

अशुभ में होते राग-द्वेष-मोह...ईर्ष्या-घृणा-तृष्णा व अष्टमद...
हिंसा-झूठ-चोरी-कुशील-संग्रह...अन्याय-अत्याचार व पापाचार...
तेरी सच्ची कहानी...जिनेन्द्र देव से है जो सुनी...माँ...(2)...

इसी से ही पापबंध होता प्रचुर...जिससे होता भ्रमण संसार...
सभी दुःखों का मूल कारण यह...अन्य सभी होते हैं उप-कारण...
तेरी सच्ची कहानी...जिनेन्द्र देव से है जो सुनी...माँ...(3)...

अशुभ त्याग से होता है शुभ...अशुभ त्याग से ही धर्म प्रारंभ...
अन्यथा धर्म पालन होता पाखण्ड...भले पालन हो क्रियाकाण्ड...
तेरी सच्ची कहानी...जिनेन्द्र देव से है जो सुनी...माँ...(4)...

शुभ भाव को ही कहते पुण्य...पुनाति आत्मनमिति सो पुण्य...
दया दान सेवा होता है पुण्य...श्रावक व श्रमण व्रत होता है पुण्य...
तेरी सच्ची कहानी...जिनेन्द्र देव से है जो सुनी...माँ...(5)...

इससे परे होता है शुद्ध स्वभाव...राग-द्वेष-मोह परे आत्म स्वभाव...
शुद्ध-बुद्ध-आनंद निज स्वभाव...अनंत ज्ञान-दर्शन-वीर्य स्वभाव...
तेरी सच्ची कहानी...जिनेन्द्र देव से है जो सुनी...माँ...(6)...

अशुभ से अनंत दुःख मिले है...शुभ से सांसारिक सुख मिले है...
शुद्ध से अनंत आत्मिक सुख...अतः 'कनक' तू पाओ आत्मिक सुख...
तेरी सच्ची कहानी...जिनेन्द्र देव से है जो सुनी...माँ...(7)...

सीपुर, दिनांक 31.05.2017, रात्रि 10.49

संदर्भ-

पुण्य एवं पाप के स्वरूप एवं प्रभेद

सुहअसुहभावजुत्ता पुण्णं पावं हवंति खलु जीवा।

सादं सुहाउणामं गोदं पुण्णं पराणि पावं च।। (38)

The Jivas consist of Punya and Papa surely having auspicious and inauspicious Bhavas (respectively). Punya is Satavedaniya, auspisious life, name and class, While Papa is (exactly) the opposite (of these).

शुभ तथा अशुभ परिणामों से युक्त जीव पुण्य और पाप रूप होते हैं। सातावेदनी, शुभ आयु, शुभ नाम तथा उच्च गोत्र नामक कर्मों की जो प्रकृतियाँ हैं, वे तो पुण्य प्रकृतियाँ हैं और शेष सब पाप प्रकृतियाँ हैं।

इस गाथा में आचार्यश्री ने आस्रव एवं बंध के उत्तर भेद स्वरूप पुण्य-पाप का स्वरूप एवं उसके भेद-प्रभेद का कथन किया है। 'सुहअसुहभावजुत्ता पुण्णं पांवहवति खलु जीवा' अर्थात् शुभ एवं अशुभ भावों से युक्त होकर जीव निश्चय से पुण्य-पाप रूप में परिणमन करता है यह प्रतिपादन करके आचार्यश्री ने भाव पुण्य एवं भाव पाप का प्रतिपादन किया है। अर्थात् जो शुभोपयोग से युक्त जीव है वह पुण्य जीव है और जो अशुभोपयोग से युक्त जीव है वह पाप जीव है। शुभोपयोग का आरंभ वस्तुतः सम्यग्दर्शन होने के बाद अर्थात् चतुर्थ गुणस्थान में होता है। मिथ्यात्व गुणस्थान में शुभोपयोग नहीं हो सकता है। क्योंकि सम्यग्दर्शन के बिना शुभोपयोग संभव नहीं है। गोम्मट्टसार में कहा भी है-

जीवा पुण्णा हु सम्मगुणसहिदा।

वदसहिदा वि य पावा, तव्विरीया हवंति त्ति।। (622)

जीव के दो भेद हैं-एक पुण्य और दूसरा पाप। जो सम्यक्त्व गुण से या व्रत से युक्त है उनको पुण्य जीव कहते हैं और इससे जो विपरीत हैं उसको पाप कहते हैं।

'मिच्छाइट्ठी पावा' - मिथ्यादृष्टि पाप जीव है।

इससे सिद्ध होता है कि वैभवशाली राजा, महाराजा, देव भी मिथ्यात्व से सहित है तो पापी जीव है परंतु सम्यग्दर्शन से सहित पशु, नारकी, गरीब मनुष्य भी पुण्यात्मा जीव है। वस्तुतः भाव पुण्य ही पुण्य है और भाव पुण्य के कारण जो कर्म परमाणु द्रव्य रूप में परिणमन करता है वह द्रव्य पुण्य है। ऐसे भाव पुण्य करने के लिए हमारे पूर्वाचार्य भी उपदेश करते हैं एवं प्रेरित करते हैं।

उद्यम मिथ्यात्वविषं भावय दृष्टिं च कुरु परां भक्तिम्।

भावनमस्काररतो ज्ञाने युक्तो भव सदापि।। (1) वृहद्द्रव्य संग्रहः पृ. 124

मिथ्यात्व रूपी विष का वमन कर दो, सम्यग्दर्शन की भावना करो, उत्कृष्ट भक्ति को करो और भाव नमस्कार में तत्पर होकर सदा ज्ञान में लगे रहो।

पंचमहाव्रतरक्षां कोपचतुष्कस्य निग्रहं परमम्।
दुर्दान्तेन्द्रियविजयं तपः सिद्धिविधौ कुरूद्योगम्।। (2)

पाँच महाव्रतों की रक्षा करो, क्रोध आदि चार कषायों का पूर्ण रूप निग्रह करो, दुर्दांत प्रबल इन्द्रिय रूप शत्रुओं पर विजय करो तथा बाह्य और अभ्यंतर भेद से दो प्रकार का जो तप है उसको सिद्ध करने में उद्योग करो। इस प्रकार दोनों आर्याच्छंदों से कहे हुए लक्षण सहित शुभ उपयोग रूप भाव परिणाम से तथा उसके विपरीत अशुभ उपयोग रूप परिणाम से युक्त परिणत जो जीव है वे पुण्य-पाप को धारण करते हैं अथवा स्वयं पुण्य पाप रूप हो जाते हैं

तत्त्वार्थ सूत्र में कहा भी है-

शुभः पुण्यास्याशुभः पापस्य। (3)

Asrva of 2 kinds : शुभ or good which is the inlet of virtue or meritorious karms अशुभ of bad which is the inlet of vice or demeritorious karmas.

शुभोपयोग पुण्य का और अशुभयोग पाप का आस्रव है।

शुभयोग पुण्य और अशुभ योग पापस्रव का कारण है। हिंसा, असत्य भाषण, वध आदि की चिन्ता रूप अपध्यान अशुभ योग है। हिंसा, दूसरे की बिना दी हुई वस्तु को ग्रहण चोरी, मैथुन-प्रयोग आदि अशुभ काययोग है। असत्य भाषण, कठोर मर्मभेदी वचन बोलना आदि अशुभ वचन योग है। हिंसक परिणाम, ईर्ष्या, असूया आदि रूप मानसिक परिणाम अशुभ मनोयोग है।

अशुभ योग से भिन्न अनंत विषय विकल्प वाला शुभ योग है। जैसे-अहिंसा, अचौर्य, ब्रह्मचर्य पालन आदि शुभ काययोग है। अर्हंत भक्ति तप की रुचि, श्रुत का विनय आदि विचार शुभ मनोयोग है। सत्य, हित-मित वचन बोलना शुभ वाग्योग है।

शुभ परिणामपूर्वक होने वाला योग शुभयोग है और अशुभ परिणामों से होने वाला योग अशुभ योग कहलाता है। '**पुनात्यात्मानं पूयतेऽनेनेति वा पुण्यम्।**

कर्मणः स्वतंत्र्य विवक्षायां पुनात्यात्मानं प्रीणयतीति पुण्यम्।'

पारतन्त्र्यविवक्षायां करणत्वोपपत्तेः पूयतेऽनेनेति।

वा पुण्यम् तत्सद्वैद्यादि। तत्त्वार्थवार्तिके।।

जो आत्मा को पवित्र करे या जिससे आत्मा पवित्र किया जाता है, वह पुण्य कहलाता है। अथवा जिसके द्वारा आत्मा सुखसाता अनुभव करे, वह सातावेदनीय आदि कर्म पुण्य है। स्वतंत्र विवक्षा में जो आत्मा को पवित्र करता है, प्रसन्न करता है वह पुण्य है एवं कर्तृवाच्य से निष्पन्न पुण्य शब्द है। परातन्त्र्य विवक्षा में कारण साधन से पुण्य शब्द निष्पन्न होता है जैसे जिसके द्वारा आत्मा पवित्र एवं प्रसन्न किया जाता है, वह पुण्य है।

''तत्प्रतिद्वन्द्विरूपं पापम्। तस्यप्रतिद्वन्द्विरूपं पापमिति विज्ञायते। पाति रक्षत्यात्मानम् अस्माच्छुभपरिणामादिति पुण्यस्य पापभिधानमा तदसद्वेद्यादि।'' तत्त्वार्थवार्तिके

पुण्य का प्रतिद्वंद्वी (विपरीत) पाप है। जो आत्मा को शुभ से रक्षा करे अर्थात् आत्मा में शुभ परिणाम न होने दे वह पाप कहलाता है, वह असातावेदनीय आदि पापकर्म है।

प्रश्न–जैसे सोने की बेड़ी और लोहे की बेड़ी दोनों ही का अविशेषता से तुल्य (समान) फल है प्राणी का परतंत्र करना, वैसे ही पुण्य-पाप दोनों ही आत्मा को परतंत्र करने में निमित्त कारण है। इन पुण्य और पाप में कोई भेद नहीं है, यह पुण्य (शुभ) है, यह अशुभ है, पाप है, यह तो केवल संकल्प मात्र भेद है।

उत्तर–पुण्य-पाप को सर्वथा एक रूप कहना उपयुक्त नहीं है क्योंकि सोने या लोहे की बेड़ी की तरह दोनों ही आत्मा की परतंत्रता में कारण है तथापि इष्ट फल और अनिष्ट फल के निमित्त से पुण्य और पाप में भेद है। जो इष्ट गति, जाति, शरीर, इन्द्रिय विषय आदि का निवर्तक है, वह पुण्य है तथा जो अनिष्ट गति जाति, शरीर, इन्द्रियों के विषय आदि का कारण है वह पाप है। इस प्रकार पुण्य कर्म और पाप कर्म में भेद है। इनमें शुभ योग पुण्यास्रव का कारण है और अशुभ योग पापस्रव का।

शंका–सम्यग्दृष्टि जीव के तो पुण्य तथा पाप ये दोनों ही हेय (त्याज्य) है फिर वह पुण्य संपादन कैसे करता है?

समाधान-सम्यग्दृष्टि जीव भी निज शुद्ध आत्मा को ही भाता है। परन्तु जब चारित्र मोह के उदय से उस निज शुद्ध आत्मा की भावना में असमर्थ होता है, तब दोष रहित परमात्म स्वरूप जो अर्हंत सिद्ध हैं तथा उनके आराधक जो आचार्य, उपाध्याय और साधु हैं उनकी परमात्मा रूप पद की प्राप्ति के निमित्त और विषय तथा कषायों को दूर करने के लिए दान, पूजा आदि से अथवा गुणों की स्तुति आदि से परम भक्ति को करता है और भोगों की वांछा आदि निदानों से रहित जो परिणाम हैं उससे कुटुंबियों के पलाल के समान निरिच्छकपने से विशिष्ठ पुण्य का आस्रव करता है, अर्थात् जैसे किसान जब धान की खेती करता है तब उसका मुख्य उद्देश्य चावल उत्पन्न करने का रहता है और धान का जो पलाल (घास) उसमें उसकी वांछा नहीं रहती है तथापि उसको बहुत-सा पलाल मिल ही जाता है। इसी प्रकार मोक्ष को चाहने वाले जीवों की वांछा बिना भी भक्ति करने से पुण्य का आस्रव होता है और उस पुण्य से स्वर्ग में इन्द्र, लोकांतिक देव आदि की विभूति को प्राप्त होकर स्वर्ग संबंधी जो विमान तथा देव-देवियों का परिवार है, उसको जीर्ण तृण के समान गिनता हुआ पंच महाविदेहों में जाकर देखता है। क्या देखता है? ऐसा प्रश्न करो तो उत्तर यह है कि, वह यह समवसरण है, ये वही श्री वीतराग सर्वज्ञ भगवान् हैं, ये वे ही भेद तथा अभेद रूप रत्नत्रय की आराधना करने वाले गणधर देव आदि हैं, जो कि पहले सुने जाते थे, वे आज प्रत्यक्ष में देखे ऐसा मानकर अधिकता से धर्म में दृढ़ बुद्धि को करके चतुर्थ गुणस्थान के योग्य जो अपनी अविरत अवस्था है (भाव है) उनको नहीं छोड़ता हुआ भोगों का सेवन होने पर भी धर्मध्यान से देव आयु के काल को पूर्णकर स्वर्ग से आकर तीर्थंकर आदि पद को प्राप्त होता है और तीर्थंकर आदि पद को प्राप्त होने पर भी पूर्वजन्म में भावित की हुई जो विशिष्ट भेदज्ञान की वासना है उसके बल से मोह को नहीं करता है और मोह रहित होने से जिनेन्द्र की दीक्षा को धारण करता पुण्य तथा पाप से रहित जो निज परमात्मा का ध्यान है उसके द्वारा मोक्ष को जाता है और जो मिथ्यादृष्टि है वह तो तीव्र निदान बंध के पुण्य से चक्रवर्ती, नारायण तथा रावण आदि प्रतिनारायणों के समान भोगों को प्राप्त होकर नरक को जाता है।

कुंदकुंद देव ने कहा भी है-

जीवो परिणमदि जदा सुहेण असुहेण वा सुहो असुहो।

सुद्धेण तदा सुद्धो हवदि हि परिणाम सब्भावो।। (9) (प्र.सा. पृ.सं. 19)

जब यह आत्मा शुभ या अशुभ राग भाव से परिणत होता है, तब जपा कुसुम या तमाल पुष्प के लाल या काले रंग रूप परिणत स्फटिक की भाँति परिणाम स्वभाव वाला होता हुआ स्वयं शुभ या अशुभ होता है और जब यह शुद्ध अराग (वीतराग) भाव से परिणत होता है, शुद्ध होता है तब शुद्ध अराग वीतराग स्फटिक की भाँति परिणाम स्वभाव शुद्ध होता है उस समय आत्मा स्वयं ही शुद्ध होता है।

इस प्रकार जीव के शुभत्व, अशुभत्व और शुद्धत्व सिद्ध होते हैं। तात्पर्य यह है कि वह अपरिणमन स्वभाव कूटस्थ नहीं है।

देवदजदिगुरुपूजासु चेव दाणम्मि वा सुसीलेसु।
उववासादिसु रत्तो सुहोवओगप्पगो अप्पा।। (69) (पृ. 158)

देव, यति और गुरु की पूजा में तथा दान में तथा सुशील में और उपवासादिकों में लीन आत्मा शुभोपयोगात्मक है।

उवओगो जदि हि सुहो पुण्णं जीवस्स संचय जादि।
असुहो वा तध पावं तेसिमभावे ण चयमत्थि।। (156) (पृ. 352)

उपयोग यदि शुभ हो तो जीव पुण्य संचय को प्राप्त होता है और यदि अशुभ हो तो पाप संचय होता है। उन दोनों के अभाव में संचय नहीं होता।

जो जाणदि जिणिंदे पेच्छदि सिद्धे तहेव अणगारे।
जीवेसु साणुकंपो उवओगो सो सुहोतस्स।। (157)

जो अर्हन्तों, सिद्धों तथा अनगारों को जानता है और श्रद्धा करता है, और जीवों के प्रति अनुकम्पा युक्त है, उसका वह उपयोग शुभ है।

कुन्दकुन्द स्वामी के समयसार एवं प्रवचन सार के टीकाकार आचार्य अमृतचंद्र ने तत्त्वार्थसार में पुण्यास्त्राव का कारण बताते हुए कहा है-

दया दानं तपः शीलं सत्यं शौचं दमः क्षमा।
वैयावृत्यं विनीतिश्च जिनपूजार्जवं तथा।। (25)
सरागसंयमश्चैव संयमासंयमस्तथा।
भूतव्रत्यनुकम्पा च सद्वेद्यास्त्रवहेतवः।। (26) तत्त्वार्थसार

दया, दान, तप, शील, सत्य, शौच, इन्द्रिय दमन, क्षमा, वैयावृत्य, विनय, जिन

पूजा, सरलता, सरागसंयम, संयमा-संयम, भूतानुकम्पा और व्रत्यनुकम्पा ये सातावेदनीय आस्रव के हेतु हैं।

पापास्रव के कारणभूत अशुभ योग का स्वरूप कुंदकुंद ने प्रवचनसार में निम्न प्रकार से किया है-

विसयकसाओगाढो दुस्सुदिदुच्चितदुट्ठगोट्ठिजुदो।
उग्गो उम्मग्गपरो उवओगो जस्स सो असुहो।। (158)

जिसका उपयोग विषय कषाय में अवगाढ़ (मग्न) है, कुश्रुति, कुविचार और कुसंगति में लगा हुआ है, कषायों की तीव्रता में अथवा पापों में उद्यत है तथा उन्मार्ग में लगा हुआ है, उसका वह उपयोग अशुभ है।

शुभोपयोग के अनेक भेद, प्रभेद होने से उनकी बंधने वाली प्रकृतियाँ भी अनेक हैं तथा अशुभोपयोग के भेद, प्रभेद अनेक होने के कारण उनके बंधने वाली प्रकृतियाँ भी अनेक हैं गोम्मट्टसार कर्मकांड में पुण्य एवं पाप प्रकृतियों का वर्णन निम्न प्रकार से किया गया है-

कोई मनुष्य तो 'राग आदि हेय है मेरे नहीं है' इस प्रकार के भेदविज्ञान को नहीं जानता है वह तो कर्मों से बंधता ही है और दूसरा मनुष्य भेदविज्ञान के उत्पन्न होने पर भी जितने अंशों से रागादिक का अनुभव करता है अपने अंशों से वह भेदविज्ञानी पुरुष भी बाँधता ही है और उसके रागादि भेदविज्ञान का फल भी नहीं है और जो जीव राग आदिक में भेदविज्ञान होने पर राग आदि का त्याग करता है यह उसके भेदविज्ञान का फल है यह जानना चाहिए। सो ही कहा है-'नेत्रों से देखने का फल सर्प आदि के दोषों से मार्ग में बचना ही है, और जो नेत्र द्वारा सर्प आदि को देखकर भी सर्प के बिल में पैर धरता है उसके नेत्रों का होना व्यर्थ है।'

मोक्ष की परिभाषा एवं भेद

सव्वस्स कम्मणो जो खयहेदू अप्पणो हु परिणामो।
णेयो स भाव मोक्खो दव्वविमुक्खो य कम्मपुहभावो।। (37)

That modification of the soul which is the cause of the destruction of all Karmas, is surely to be known as Bhavamoksha and (actual) sepration of the Karmas (is) Dravyamoksha.

सब कर्मों के नाश का कारण जो आत्मा का परिणाम है उसको भाव मोक्ष जानना चाहिए और कर्मों की जो आत्मा से सर्वथा भिन्नता है वह द्रव्य मोक्ष है।

अभेद रत्नत्रय रूप स्वशुद्ध परिणाम या परम यथाख्यात चारित्र को भाव मोक्ष कहते हैं। क्योंकि इसके द्वारा ही समस्त द्रव्य कर्मों का क्षय होता है। इस भाव मोक्ष द्वारा जो समस्त द्रव्य कर्मों का समग्र रूप से आत्मा से पृथक्करण होता है उसे द्रव्य मोक्ष कहते हैं। मोक्ष तत्त्व का वर्णन करते हुए आचार्य उमास्वामी ने कहा भी है-

बन्धहेत्वभावनिर्जराभ्यां कृत्स्नकर्म विप्रमोक्षो मोक्षः। (2)

Liberation (is) the freedom from all karmic matter, owing to the non-existence of the cause of bondage to the sheding (of all the karmas).

बंध हेतुओं के अभाव और निर्जरा से सब कर्मों का आत्यांतिक क्षय होना ही मोक्ष है।

मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग रूप बंध के कारणों का निरोध/अभाव हो जाने का नूतन कर्मों का आना (आस्रव) रुक जाता है क्योंकि कारण के अभाव में कार्य का अभाव होता ही है।

तप आदि निर्जरा के कारणों का सन्निधान (निकटता) होने पर पूर्व अर्जित संचित कर्मों का विनाश हो जाता है।

प्रश्न-कर्मबंध संतान जब अनादि है तो उसका अंत नहीं होना चाहिए? क्योंकि जो अनादि होता है उसका अंत नहीं होता तथा दृष्ट विपरीत (प्रत्यक्ष से विपरीत) की कल्पना करने का प्रमाण का अभाव होता है।

उत्तर-अनादि होने से अंत नहीं होता ऐसा नहीं है क्योंकि जैसे बीज और अंकुर की संतान अनादि होने पर भी अग्नि से अंतिम बीज के जला देने पर उससे अंकुर उत्पन्न नहीं होते है, उसी प्रकार ध्यानाग्नि के द्वारा अनादिकालीन मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय आदि कर्मबंध के कारणों को भस्म कर देने पर भवांकुर का उत्पाद नहीं होता अर्थात् भवांकुर नष्ट हो जाता है यही मोक्ष है। इस दृष्ट बात का लोप नहीं कर सकते। कहा भी है जैसे-

दग्धे बीजे यथाऽत्यन्तं प्रादुर्भवति नांकुरः।
कर्मबीजे तथा दग्धे न रोहति भवांकुर।।

'बीज के जल जाने पर अंकुर उत्पन्न नहीं होता, उसी प्रकार कर्म बीज के जल जाने पर भवांकुर उत्पन्न नहीं होता है।'

कृत्स्न (संपूर्ण) कर्म का कर्म अवस्था रूप से क्षय हो जाना कर्मक्षय है, क्योंकि 'सत्' द्रव्य का द्रव्यत्व रूप से विनाश नहीं है किन्तु पर्याय रूप से उत्पत्तिमान होने से उनका विनाश होता है तथा पर्याय, द्रव्य को छोड़कर नहीं है अतः पर्याय की अपेक्षा द्रव्य भी व्यय को प्राप्त है, ऐसा कह दिया जाता है। क्योंकि पर्यायें उत्पन्न और विनष्ट होती है अतः पर्याय रूप से द्रव्य होता है। अतः कारणवशात् कर्मत्वपर्याय को प्राप्त पुद्गल द्रव्य का कर्मबंध के प्रत्यनीक (सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र रूप) कारणों के सन्निधान होने पर उस कर्मत्व पर्याय की निवृत्ति होने पर उसका क्षय हो जाता है उस समय वह पुद्गल द्रव्य अकर्म पर्याय से परिणत हो जाता है। इसलिये कृत्स्न कर्मक्षय को मुक्ति कहना युक्त ही है।

हेदुमभावे णियगा जायदि णाणिस्स आसवणिरोधो।
आसवभावेण विणा जायदि कम्मस्स दु णिरोधो।। (50)
कम्मस्साभावेण य सव्वण्हू सव्वलोगदरिसी य।
पावदि इन्दियरहिदं अव्वाबाहंसुहमणंतं।। (51) पंचास्तिकाय प्राभृत

कर्मों के आवरण में प्राप्त संसारी जीव का जो क्षायोपशमिक विकल्प रूप भाव है वह अनादिकाल से मोह के उदय के वश राग-द्वेष-मोह रूप परिणमता हुआ अशुद्ध हो रहा है यही भाव है। अब इस भाव से मुक्त होना कैसे होता है सो कहते हैं। जब यह जीव आगम की भाषा से काल आदि लब्धि को प्राप्त करता है तथा अध्यात्म भाषा से शुद्ध आत्मा के सन्मुख परिणाम रूप स्वसंवेदन ज्ञान को पाता है तब पहले मिथ्यात्व आदि सात प्रकृतियों के उपशम होने पर फिर उनका क्षयोपशम होने पर सराग सम्यग्दृष्टि हो जाता है। तब अर्हंत् आदि पंचपरमेष्ठी की भक्ति आदि के द्वारा पर के आश्रित धर्मध्यान रूप बाहरी सहकारी कारण के द्वारा मैं अनंत ज्ञानादि स्वरूप हूँ इत्यादि भावना स्वरूप आत्मा के आश्रित धर्मध्यान को पाकर आगम में कहे हुए क्रम से असंयत सम्यग्दृष्टि को आदि लेकर अप्रमत्त संयत पर्यंत चार गुणस्थानों के मध्य में से किसी भी एक गुणस्थान में दर्शनमोह को क्षयकर क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो जाता है। फिर मुनि अवस्था में अपूर्वकरण आदि गुणस्थानों में चढ़कर आत्मा सर्व कर्म प्रकृति

आदि से भिन्न है ऐसे निर्मल विवेकमई ज्योतिरूप प्रथम शुक्लध्यान का अनुभव करता है। फिर राग-द्वेष रूप चारित्र मोह के उदय के अभाव होने पर निर्विकार शुद्धात्मानुभव रूप वीतराग चारित्र को प्राप्त कर लेता है जो चारित्र मोह के नाश करने में समर्थ है। इस वीतराग चारित्र के द्वारा मोहकर्म का क्षय कर देता है-मोह के क्षय के पीछे क्षीण कषाय नाम बारहवें गुणस्थान में अंतर्मुहूर्त काल ठहरकर दूसरे शुक्लध्यान को ध्याता है। इस ध्यान से ज्ञानावरण, दर्शनावरण व अन्तराय इन तीन घातिया कर्मों को एक साथ इस गुणस्थान के अन्त में जड़-मूल से दूरकर केवलज्ञान आदि अनंत चतुष्टय स्वरूप भाव मोक्ष को प्राप्त कर लेता है।

दंसणणाणसमग्गं झाणं णो अण्णदव्वसंजुत्तं।
जायदि णिज्जरहेदू सभावसहिदस्स साधुस्स।। (152)

इस प्रकार वास्तव में इन (पूर्वोक्त) भावयुक्त (भाव मोक्ष वाले) भगवान् केवली को जिन्हें स्वरूप तृप्तपने के कारण कर्मविपाक कृत सुख, दुःख रूप विक्रिया नष्ट हो गई है उन्हें-आवरण के प्रक्षीणपने के कारण, अनंत ज्ञानदर्शन से सम्पूर्ण शुद्धज्ञान चेतनामयपने के कारण तथा अतीन्द्रियपने के कारण जो अन्य द्रव्य के संयोग से रहित है और शुद्ध स्वरूप में अविचलित चैतन्यवृत्ति रूप होने के कारण जो कथंचित् 'ध्यान' नाम के योग्य है ऐसा आत्मा का स्वरूप (आत्मा की निज दशा) पूर्वसंचित कर्मों की शक्ति का शातन (क्षीणता) अथवा उनका पतन (नाश) देखकर, निर्जरा के हेतुरूप से वर्णन किया जाता है।

जो संवरेण जुत्तो णिज्जरमाणोध सव्वकम्माणि।
ववगदवेदाउस्सो मुयदि भवं तेण सो मोक्खो।। (153)

वास्तव में केवली भगवान् को, भावमोक्ष होने पर, परम संवर सिद्ध होने के कारण उत्तर कर्म संतति निरोध को प्राप्त होकर और परम निर्जरा का कारणभूत ध्यान सिद्ध होने के कारण पूर्व कर्म संतति कि जिसकी स्थिति कदाचित् स्वभाव से ही आयुकर्म के जितनी होती है और कदाचित् समुद्घात विधान से आयुकर्म के जितनी होती है-आयुकर्म के अनुसार ही निर्जरित होती हुई अपुनर्भव (सिद्धगति) के लिए भव छूटने के समय होने वाला जो वेदनीय-आयु-नाम-गोत्ररूप कर्मपुद्गलों का जीव के साथ अत्यन्त विश्लेष (वियोग) है वह द्रव्यमोक्ष है।

ज्ञानावरणी-दर्शनावरणीय, मोहनीय और अन्तराय ये चार घातिया कर्मों के क्षय से अरहंत केवली बनते हैं। तीर्थंकर केवली समोवशरण की विभूति के साथ उपदेश करके भव्य जीवों को मोक्षमार्ग का स्वरूप बताते हैं और सामान्य केवली गंध कुटी में विराजमान होकर भव्य जीवों को उपदेश देते हैं तीर्थंकर केवली नियम से जघन्य रूप से नौ वर्ष एवं उत्कृष्ट रूप से अंतर्मुहूर्त अधिक 8 वर्ष कम, एक पूर्व कोटी वर्ष तक उपदेश करते हैं। अंत में समवशरण या गंध कुटी का विसर्जन होता है-दिव्यध्वनि के द्वारा उपदेश देना भी संकोच हो जाता है और केवली योग निरोध करते हैं। जो मुनिश्वर 6 महीना आयु शेष रहते केवल ज्ञान प्राप्त करते हैं और उनके नाम गोत्र एवं वेदनीय कर्म की स्थिति अधिक होती है वे केवली समुद्घात भी करते हैं। अंत में ''अ इ उ ऋ लृ'' इन पाँच लघु अक्षर के उच्चारण काल प्रमाण अयोगी गुणस्थान (14वें) में जीव रहता है। उपान्त (द्विचरम, अंतिम समय के पहले 1 समय) समय में 72 प्रकृतियों का एवं अंतिम समय में 13 प्रकृतियों का नाश करके जीव सिद्ध, बुद्ध-नित्य निरंजन बन जाता है।

गोम्मट्टसार में कहा भी है-

सीलेसिं संपत्तो, णिरूद्धणिस्सेसआसवो जीवो।
कम्मरयविप्पमुक्को, गय जोगो केवली होदि।। (65)

जो अठारह हजार शील के भेदों का स्वामी हो चुका है और जिसके कर्मों के आने का द्वार रूप आस्रव सर्वथा बंद हो गया है तथा सत्त्व और उदय रूप अवस्था को प्राप्त कर्मरूप रज की सर्वथा निर्जरा होने से जो उस कर्म से सर्वथा मुक्त होने के सम्मुख है, उस योग रहित केवली को चौदहवें गुणस्थानवर्ती अयोग केवली कहते है।

अट्ठविहकम्मवियला, सीदीभूदा णिरंजणा णिच्चा।
अट्ठगुणा किदकिच्चा, लोयग्गणिवासिणो सिद्धा।। (68)

जो ज्ञानावरणादि अष्ट कर्मों से रहित है, अनंतसुखरूपी अमृत के अनुभव करने वाले शांतिमय है, नवीन कर्मबंध के कारणभूत मिथ्यादर्शनादि भावकर्मरूपी अंजन से रहित है, सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य, अव्याबाध, अवगाहन, सूक्ष्मत्व, अगुरुलघु, ये आठ मुख्य गुण जिनके प्रगट हो चुके हैं, कृतकत्य हैं-जिनको कोई कार्य करना बाकी न रहा है, लोक के अग्रभाग में निवास करने वाले हैं, उनको सिद्ध

कहते हैं।

स्व-पर गुण-दोष ज्ञान से स्व-सुधार करूँ!

(स्व-पर दोष भूलने से स्व-सुधार नहीं!)

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : मन रे! तू काहे न धीर धरे....., सायोनारा.....)

आत्मन्! स्व-पर गुण-दोष जानोऽऽऽ
जिससे गुण विकास करऽऽऽ दोष परिहार करऽऽऽ आत्मन्!...(ध्रुव)...

हित ग्रहण अहित त्याग हीऽऽऽ होता है सही विवेकऽऽऽ
गुण-दोष परिज्ञान से हीऽऽऽ संभव होता सही विवेकऽऽऽ
स्व-पर प्रकाशी सुज्ञानऽऽऽ...(1)...

सर्वज्ञ जानते दोष सभी के भीऽऽऽ तथापि न करते दोष ग्रहणऽऽऽ
राग-द्वेष-मोह से रहित होकरऽऽऽ स्व-आत्म गुणों में करते रमणऽऽऽ
न त्यागते स्व-शुद्धात्मा गुणऽऽऽ...(2)...

पर-दोष ज्ञात से भी न होते दोषीऽऽऽ राग-द्वेष-मोह रहित सेऽऽऽ
ज्ञायक होना जीवों का स्वभावऽऽऽ स्वभाव न होता अवगुणऽऽऽ
राग-द्वेष-मोह/(निंदा) विभाव अवगुणऽऽऽ...(3)...

स्व-पर गुण-दोष अज्ञात होने सेऽऽऽ न होगा गुण ग्रहण दोष त्यागऽऽऽ
स्व-पर गुण-दोष स्मरण बिनऽऽऽ न होगा गुण ग्रहण दोष त्यागऽऽऽ
स्मरण में/(से) न कर विभाव परिणामऽऽऽ स्मरण में/(से) कर सकता परिणामऽऽऽ...(4)...

प्रतिक्रमण व प्रायश्चित्त ग्रहणऽऽऽ दण्ड प्रक्रिया का सही पालनऽऽऽ
आत्म विश्लेषण/(डायरी) व शुद्धिकरणऽऽऽ संभव नहीं दोष विस्मरण सेऽऽऽ
इस हेतु विधेय दोष स्मरणऽऽऽ...(5)...

तीर्थंकर से लेकर श्रमण तकऽऽऽ बुद्ध से लेकर साधु-संतऽऽऽ
स्व-पर गुण-दोषों के कारणऽऽऽ होते ज्ञान-वैराग्य संपन्नऽऽऽ
दुःखमा-सुखमा काल उदाहरणऽऽऽ...(6)...

अनुभव हुए तेरे भी हजारोंऽऽऽ गुण-दोष ज्ञान से स्व-सुधारऽऽऽ
अग्नि दग्ध बिन शिक्षा ग्रहणीयऽऽऽ स्व-पर गुण-दोष से स्व-सुधारऽऽऽ
दर्पण से यथा स्व-अवलोकन/(स्व-परिमार्जन)ऽऽऽ...(7)...

लोग कहते हैं दोष भूल जाओऽऽऽ केवल लौकिक रूढ़ि-रिवाजऽऽऽ
अन्य के गुण भले होते विस्मरणऽऽऽ पर-दोष न प्रायः विस्मरणऽऽऽ
राग-द्वेष-मोह-निंदादि कारणऽऽऽ...(8)...

बिन जानते दोष-गुणन कोऽऽऽ कैसे त्यजिये व गहियेऽऽऽ
अतः ज्ञान कर स्व-सुधार करोऽऽऽ वैज्ञानिक भी करते यथायोग्य/(प्रकार)ऽऽऽ
'कनक' तू आत्म-विकास करऽऽऽ...(9)...

सीपुर, दिनांक 01.06.2017, रात्रि 9.38

सब बातें इस बात पर जोर देती हैं कि जिंदगी को जीने का नजरिया होना चाहिए, लेकिन उसे विकसित किस तरह किया जाये। जीवन के प्रति अपने नजरिये को विकसित करने का सबसे कारगर हथियार है आशावाद। आशावाद को सकारात्मकता से जोड़कर देखा जाता है। यह कोई रहस्य नहीं है कि सकारात्मकता और खुशी आपस में जुड़े हुए हैं, लेकिन एक शोध में स्पष्ट हुआ है कि सकारात्मक सोच रखने वाले लोग बुरी से बुरी परिस्थितियों में भी अच्छे पहलू खोज ही निकालते हैं और नई सोच विकसित करने में माहिर हो जाते हैं। यही सकारात्मक सोच सफलता, अच्छी सेहत, जीवन संतुष्टि और जीवन से जुड़े अन्य अच्छे पहलुओं की ओर ले जाती है। अपने मस्तिष्क में सकारात्मकता की खाद डालिये और खुशियों की फसल काटते रहिये। यही वह रास्ता है, जब आप खुशियों को अपनी शर्तों पर पा सकते हैं। आप सकारातमक हैं या नहीं या फिर आप किस हद तक आशावादी हैं। यह जानने के लिए बहुत सारे मनोवैज्ञानिक परीक्षण उपलब्ध है। बस आपकोअपने अंदर आशावाद का संचार करना है और खुशियाँ तथा उत्सव बारह महीने आपके घर के दरवाजे पर खड़ी रहेंगी। आशावादी लोग अपने अंदर नियंत्रण का एक बिंदु विकसित कर लेते हैं। ज्यादातर उनमें यह विश्वास प्रबल होता है कि वे अपने भाग्य निर्माता स्वयं है और परिस्थितियाँ उन्हें कभी अपना गुलाम नहीं बना सकती। जीवन में जब कभी समस्याएँ

सर उठाती हैं, उनके अंदर का आशावाद उन्हें ज्यादा बेहतर उपाय सुझाता है।

खुशी कहीं नहीं जाती, वह तो हमारे साथ है। उत्सव और रोशनी भी हमारे अंतस की ही उपज हैं और हममें ही वह शक्ति है कि हम जब चाहे जश्न मना लें। ईश्वर ने जीवन दिया है ताकि हम उत्साह से इसे रोज सुबह उत्सव की तरह मना सकें। खुशी इस बात की लो एक दिन हमने सूरज उगा दिया, लो एक और दिन अंधेरा हारा है। रोज शाम आती है और अपने साथ नये सुबह की आगाज का पैगाम भी लाती है। बकलम गुलजार-

खुशी की रात है, जलते चिराग गुल कर दो।
जश्न की बज्म में क्या काम जलने वालों का।।

संदर्भ-

रात्रिक/(दैवसिक) प्रतिक्रमण

प्रतिज्ञा सूत्र

जीवे प्रमाद-जनिताः प्रचुराः प्रदोषाः,
यस्मात् प्रतिक्रमणतः प्रलयं प्रयान्ति।
तस्मात्-तदर्थ-ममलं, मुनि बोधनार्थं,
वक्ष्ये विचित्र-भव-कर्म-विशोधनार्थम्।। (1)

भावार्थ-जिस प्रतिक्रमण से, जीव के द्वारा प्रमाद से उत्पन्न होने वाले अनेक दोष क्षय को प्राप्त होते है तथा अनेक भवों में उपार्जित कर्मों का क्षण-मात्र में नाश होता है। इसलिये मुनियों को संबोधन के लिए, मैं ऐसे मल रहित निर्मल प्रतिक्रमण को कहूँगा। (यह प्रतिक्रमण के रचयिता श्री गौतम स्वामी का प्रतिज्ञा सूत्र है।)

''भूतकालीन दोषों का निराकरण करना प्रतिक्रमण है।''

उद्देश्य सूत्र

पापिष्ठेन दुरात्मना जडधिया मायाविना-लोभिना,
रागद्वेष-मलीमसेन मनसा दुष्कर्म यन्-निर्मितम्।
त्रैलोक्याधिपते जिनेन्द्र! भवतः श्री-पाद-मूलेऽधुना,

निंदा-पूर्वमहं जहामि सततं वर्वर्तिषुः सत्पथे।। (2)

भावार्थ-हे तीन लोक के अधिपति जिनेन्द्रदेव! मुझ पापी, दुष्ट, अज्ञानी, मायाचारी, लोभी के द्वारा राग-द्वेष रूपी मल से मलीन मन के द्वारा जिन पाप-कर्मों का उपार्जन किया गया है, उन पाप कर्मों को मैं अनंत चतुष्टय रूप लक्ष्मी से सम्पन्न आपके चरण-कमलों में निंदापूर्वक छोड़ता हूँ तथा अब इस समय निरंतर सन्मार्ग में प्रवृत्ति करने की इच्छा करता हूँ। (जिनेन्द्र की साक्षीपूर्वक पाप-कर्मों का त्याग करता हूँ। इस प्रकार यह संकल्प सूत्र है।)

संकल्प सूत्र

खम्मामि सव्व-जीवाणं सव्वे जीवा खमंतु मे।

मित्ती मे सव्व-भूदेसु वैरं मज्झं ण केण वि।। (3)

भावार्थ-मैं संसार के समस्त प्राणियों के प्रति क्षमा भाव धारण करता हूँ। समस्त प्राणी भी मुझ पर क्षमा भाव धारण करें। संसार के सभी जीवों में मेरा मैत्री भाव है तथा किसी भी जीव के साथ मेरा वैर-विरोध नहीं हैं।

राग परित्याग सूत्र

राग-बंध-पदोसं च हरिसं दीण-भाववयं।

उस्सुगत्तं भयं सोगं रदि-मरदिं च वोस्सरे।। (4)

भावार्थ-हे जिनेन्द्र! मैं आपकी साक्षीपूर्वक राग-द्वेष-बंध, हर्ष, दैन्य प्रवृत्ति/भावना, पञ्चेन्द्रिय विषयों की वासना का आकर्षण, लोलुपता, आसक्ति, भय, शोक, रति और अरति का त्याग करता हूँ।

पश्चात्ताप सूत्र

हा! दुट्ठ-कयं हा! दुट्ठ-चिंतियं भासियं च हा!

दुट्ठं अंतो-अंतो डज्झमि पच्छत्तावेण वेदंतो।। (5)

भावार्थ-1. हाँ! यदि मैंने काय से कोई दुष्ट कार्य किया हो। 2. हाँ! यदि मैंने मन से कोई दुष्ट चिन्तन किया हो और 3. हाँ! यदि मैंने कोई दुष्ट वचन बोला हो तो मैं उन मन-वचन-काय की दुष्ट क्रियाओं को दुष्कृत-अशुभ समझता हुआ, पश्चात्ताप

से भीतर ही भीतर पीड़ित हुआ जल रहा हूँ अर्थात् अपने दुष्कृत्यों से मेरा अन्तःकरण जल रहा है अतः हे जिनेन्द्र! आपकी साक्षीपूर्वक इनका त्याग करता हूँ।

दव्वे खेत्ते काले भावे य कदावराह-सोहणयं।
णिंदण-गरहण-जुत्तोमण-वच-कायेण पडिक्कमणं।। (6)

डायरी लिखिये सेहतमंद रहिये

डायरी लिखना किसी थेरेपी से कम नहीं। इससे कैंसर तक के मरीजों में सुधार देखने को मिला है। बता रही है अंशु हर्ष।

बीती हुई बातें यादें बन जाती हैं/यादों को शब्द दे दो जिंदगी की किताब बन जाती है। हर इंसान जीवन में होने वाली घटनाओं का लेखा-जोखा रखता है। चाहे वो लेखक हो या साधारण इंसान, सभी को अपने अनुभवों को शब्द देना पसंद होता है, जिसे हम साधारण भाषा में डायरी लिखना कह देते हैं। डायरी बहुत अच्छी मित्र होती है जिसमें हम अपने अच्छे-बुरे सभी मनोभाव प्रकट कर सकते हैं।

प्रसिद्ध डायरी लेखक-आज भी सबसे लोकप्रिय और सशक्त डायरी तेरह वर्षीय एनी फ्रेंक की मानी जाती है 'द डायरी ऑफ ए यंग गर्ल' नाम से प्रकाशित इस पुस्तक की सबसे अधिक कॉपियाँ बिकी हैं। मीनाकुमारी एक बहुत ही सफल अदाकार थी लेकिन उनका व्यक्तिगत जीवन काफी उदास था। वसीयत के मुताबिक प्रसिद्ध फिल्मकार गुलजार को मीनाकुमारी की 25 निजी डायरियाँ प्राप्त हुईं। महात्मा गाँधी और जवाहरलाल नेहरू भी अपने अनुभव डायरी में लिखते थे।

डायरी की जगह ब्लॉग-आजकल लोग पेन और पेपर कम ही इस्तेमाल करते हैं। डायरी की जगह ब्लॉग ने ले ली है। फिर भी डायरी एक ऐसा दोस्त है जो हमारी अंतरंगता को पहचान कर उसे अपने तक रखती है। व्यस्त रहने वाले अमिताभ बच्चन रोजाना अपना ब्लॉग अपडेट करते हैं।

विशेषज्ञों की राय-लेखन से तनाव कम होता है। इसे एक्सप्रेसिव राइटिंग थेरेपी कहा जाता है। इसमें मरीजों को पेन और पेपर देकर उनके मन में चल रहे हर तरह के विचारों को लिखने के लिए कहा जाता है।

हॉवर्ड यूनिवर्सिटी के शोधकर्त्ताओं का कहना है कि डायरी लिखने की इस

थेरेपी से कैंसर तक के मरीजों में सुधार देखने को मिला है।

सकारात्मक पहलू-जब हम डायरी में अपने जीवन में आने वाले प्रेरणादायक व्यक्तियों की प्रेरणा को शब्दों में बाँधकर रख लेते हैं तो हो सकता है आने वाले समय में वे बातें हमारे काम आये। हमेशा ऐसी बातें लिखे जो आपको प्रेरणादायक लगी हो और दूसरों को भी प्रेरणा दें।

पछतावे से शीघ्र मुक्ति

शर्म एक ऐसा शब्द जिसका जिक्र आते ही अतीत में जाने-अनजाने की गई तमाम गलतियाँ और उनसे जुड़ा अपराध बोध तथा पश्चात्ताप मन में कौंध जाता है। गैरजरूरी शर्म न केवल हमारा अमूल्य समय लेती है बल्कि उसकी बदौलत हम समस्याओं से निजात भी नहीं पा पाते।

शर्म और पछतावे के इस परस्पर संबंध से निकलकर जिंदगी को आसान बनाने के कुछ तरीके इस तरह है-

वर्तमान पर ध्यान-हमारे जीवन में कोई भी बदलाव तभी संभव है जब हम आज पर ध्यान केंद्रित करें। सुधार का मतलब अतीत से मुँह मोड़ना नहीं बल्कि अतीत की गलतियों को पहचान कर उनमें सुधार लाना है।

ईमानदार मूल्यांकन-अपने बारे में सही मूल्यांकन करना आसान नहीं होता है। अपना सही मूल्यांकन करके ही हम अतीत की गलतियों से निजात पा सकते हैं।

गलतियों को हावी न होने दें-हरेक इंसान की जिंदगी में एक या दो गलत फैसले हो सकते है। इसका यह मतलब कतई नहीं है कि हम खुद को दोषी मानकर सोचते रहे कि मैं कभी कोई बेहतर काम नहीं कर सकता। खुद को समझाये और नई ऊर्जा के साथ बिगड़े काम सँवारें।

सकारात्मक सोच-चीजों को सकारात्मक ढंग से देखें। एक या दो बार असफलता हाथ लगने पर भी निराश होने की जरूरत नहीं है। सकारात्मक सोच के साथ किये गये प्रयासों में सफलता अवश्य हाथ लगेगी।

असफलताएँ जीवन का सौंदर्य हैं

-अमृत साधना

अगर आपने कोई नया बिजनेस या कोई नया प्रोजेक्ट शुरू किया और कुछ समय बाद वह चल नहीं सका, आप असफल हो गये, आपको कंपनी बंद करनी पड़ी तो निराश होने की जरूरत नहीं है। इसका मतलब यह नहीं है कि आप लायक नहीं हैं, या आप जिंदगी भर असफल ही रहेंगे। जिंदगी एक लंबी पाठशाला है, इसमें आप आखिर तक कुछ न कुछ सीखते रहते हैं।

अब जमाना बदल गया है, सकारात्मक सोच, एक नई लहर बिजनेस में आई है। अब नये विचारों के बिजनेसमैन असफलता को एक उपलब्धि मानते हैं। सफल उद्योगपति कहते हैं जो छोटे व्यवसायी बिजनेस में असफल हुए उनके पास बेशकीमती अनुभव इकट्ठा हुआ है, हारने का अनुभव। वह अनुभव किसी भी 'बी स्कूल' या हार्वर्ड यूनिवर्सिटी की डिग्री से ज्यादा महत्वपूर्ण है। युवा छोटी कंपनियाँ शुरू करते हैं लेकिन अनुभव नहीं होता इसलिए अक्सर कंपनियाँ फेल हो जाती हैं। ऐसी छोटी कंपनियों को अमरीका के एरिक राइस 'लीन स्टार्ट अप' कंपनी कहते हैं। वे सिलिकॉन वैली के बुद्धिमान सॉफ्टवेयर इंजीनियर हैं जिन्होंने सन् 2003 में अपनी कंपनी खोली लेकिन कुछ सालों के बाद दिवाला निकल गया क्योंकि उनके अनुमान गलत साबित हुए, वे बाजार को समझ नहीं पाये। फिर भी राइस का आत्मविश्वास गजब का था। उन्होंने हिम्मत नहीं हारी और नये प्रयोग करते रहे। उन्होंने कंपनी को चलाने के लिए जो संघर्ष किया उससे बहुत कुछ सीखा जो कोई यूनिवर्सिटी नहीं सिखा सकती थी। जैसे स्थापित कंपनियों के साथ प्रतिस्पर्धा करना, असुरक्षा में जीना, अज्ञात में छलाँग लगाने का साहस, लोगों की उपेक्षा सहना और उससे हताश न होना, खुद पर भरोसा रखना, गलत निर्णय लेना और उनकी सजा भुगतना, फिर उनसे सीखकर दुबारा उठ खड़े होना, ये बातें क्लासरूम में नहीं सीखी जा सकतीं।

जब आप समाज में छोटे होते हैं, तो लोग आपको कैसे अपमानित करते हैं इसे अनुभव करना बहुत कीमती है, यह आदमी की रीढ़ मजबूत करता है।सबसे बड़ा भय होता है बदनामी का, असफलता का। मगर एक बार इससे गुजर गये तो कोई घटना आपको विचलित नहीं कर सकती। उल्टे आप कुंदन की तरह निखरकर

बाहर आते हैं। शायद इसीलिए 'लीन स्टार्ट अप' अब एक दर्शन बनता जा रहा है और लोग बेझिझक अपनी सी.वी. में लिखते हैं कि वे कितनी कंपनियों में असफल हुए।

परतंत्रता त्यागकर स्वकेन्द्रित बनूँ

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : मन रे! तू काहे न धीर....., सायोनारा.....)

आत्मन्! तू स्वकेन्द्रित बनऽऽऽ
स्व में निहित अनंत शक्तियाँऽऽऽ उसे तू प्राप्त करऽऽऽ...(ध्रुव)

तू तो चैतन्य अनंत गुणमय...सच्चिदानंदमय तू हो!ऽऽऽ
अनंत ज्ञान दर्शन सुख वीर्यमय...स्वयंभू-स्वंयपूर्ण-शाश्वत्ऽऽऽ
शुद्ध-बुद्ध तू आनंदऽऽऽ...आत्मन्...(1)

इसे प्राप्त हेतु ही करो पुरुषार्थ...त्यागो हे! परकेन्द्रित भाव/(काम)ऽऽऽ
राग द्वेष मोह ईर्ष्या तृष्णा घृणा...वैर-विरोध-विद्रोहऽऽऽ
परनिंदा-अपमान-द्वंद्वऽऽऽ...आत्मन्...(2)

अन्य के आकर्षण-विकर्षण त्यागो...संकल्प-विकल्प-संक्लेशऽऽऽ
परावलंबन-परनियंत्रण भी त्यागो...स्वावलंबी-स्वानुशासी बनोऽऽऽ
स्व-कर्त्ता-भोक्ता-विधाता बनोऽऽऽ...आत्मन्...(3)

सत्ता-संपत्ति-प्रसिद्धि-डिग्री...जाति-पंथ-मत-यशकीर्तिऽऽऽ
अपना-पराया-शत्रु-मित्र भाव...दबाव-प्रलोभन-वर्चस्व-दंभऽऽऽ
त्यागकर सभी सीमा बंधनऽऽऽ...आत्मन्...(4)

पर-प्रतिस्पर्द्धा अंधानुकरण...पर-अप्रभावी से करो प्रयाणऽऽऽ
आत्मविश्वास ज्ञान चारित्र युक्त...आत्म सुधार से करो विकासऽऽऽ
आत्म विकास ही तेरा सर्वस्वऽऽऽ...आत्मन्...(5)

मैत्री-प्रमोद-कारुण्य-माध्यस्थ...सरल-सहज-क्षमा-धैर्य सहितऽऽऽ
भाव से तू बनो परम स्वतंत्र...नवकोटि से तदनुकूल प्रवृत्तऽऽऽ

प्राप्त होगा परम स्वातंत्रऽऽऽ...आत्मन्...(6)

स्वयं में ही स्वयं को तू करो स्वतंत्र...समता-शांति निस्पृह चित्तऽऽऽ
इससे बाह्य प्रभाव होंगे निष्प्रभ...प्रकाश से यथा तम निष्प्रभऽऽऽ
'कनक' स्व-स्वभाव में करो निवासऽऽऽ...आत्मन्...(7)

सीपुर, दिनांक 27.05.2017, प्रातः 8.42

संदर्भ-

सिद्धात का केंद्र

सही सिद्धांतों पर अपना जीवन केंद्रित करके हम चारों जीवन-समर्थक तत्त्वों के विकास के लिए ठोस नींव तैयार करते हैं।

हमें सुरक्षा यह जानने से मिलती है कि व्यक्तियों और वस्तुओं पर आधारित अन्य केंद्र तो अक्सर तथा तुरंत परिवर्तन के शिकार हो जाते हैं, परंतु सही सिद्धांत कभी नहीं बदलते। हम उन पर विश्वास कर सकते हैं।

सिद्धांत किसी चीज पर प्रतिक्रिया नहीं करते। वे कभी गुस्सा नहीं होते। हमारे प्रति उनका व्यवहार बदलता नहीं है। वे हमें तलाक नहीं देते या हमारे सबसे अच्छे दोस्त के साथ भाग नहीं जाते। वे हमें बर्बाद करने की फिराक में नहीं रहते। वे हमारे लिए शॉर्टकट या क्विक फिक्स समाधानों के रास्ते नहीं बनाते। वे अपनी प्रामाणिकता के लिए दूसरों के व्यवहार, परिवेश या वर्तमान फैशन पर निर्भर नहीं होते। सिद्धांत कभी नहीं मरते। ऐसा नहीं होता कि वे एक दिन रहे और दूसरे दिन चले जायें। उन्हें आग, भूकंप या चोरी द्वारा नष्ट नहीं किया जा सकता।

सिद्धांत गहरी मूलभूत सच्चाइयाँ हैं। वे अमर हैं और व्यापक सामान्य मानक हैं। वे जीवन के भीतर कसकर बुने गये धागे हैं, जो जीवन के वस्त्र को त्रुटिहीनता, स्थायित्व, सुंदरता और मजबूती प्रदान करते हैं।

हम इन सिद्धांतों को अनदेखा करने वाले लोगों या परिस्थितियों के बीच में भी सुरक्षित रह सकते हैं, क्योंकि हम जानते हैं कि सिद्धांत लोगों या परिस्थितियों से बड़े होते हैं और हजारों साल के इतिहास में हमने सिद्धांतों को बार-बार जीतते देखा है। इससे भी ज्यादा महत्वपूर्ण बात यह है कि हम इस ज्ञानके साथ सुरक्षित हो सकते हैं

कि हम अपने जीवन में अपने खुद के अनुभव से आप अपने निर्णयों पर अमल कर करते हैं, तो ये अनुभव आपके पूरे जीवन के संदर्भ में गुणवत्ता और अर्थ ले लेते हैं।

चौथी बात, आप अपनी पत्नी और अपने बॉस तक अपनी भावनाएँ उन सशक्त नेटवर्क्स के माध्यम से पहुँचा सकते हैं, जिन्हें आपने परस्पर-निर्भर संबंधों में बनाया है। चूँकि आप आत्मनिर्भर हैं, इसलिये आप प्रभावकारी रूप से परस्पर-निर्भर बन सकते हैं। जिन कामों को सौंपा जा सकता है, उन्हें आप दूसरों को सौंपने का निर्णय ले सकते हैं और शेष काम करने के लिए आप अगले दिन सुबह जल्दी ऑफिस आ सकते हैं।

और अंततः आप अपने निर्णय के बारे में अच्छा महसूस करेंगे। चाहे आप कुछ भी करने का चुनाव करे, आप उस पर ध्यान केंद्रित कर सकते है और उसका आनंद ले सकते हैं।.

सिद्धांत केंद्रित व्यक्ति के रूप में आप चीजों को अलग तरीके से देखते हैं और चूँकि आप चीजों को अलग तरीके से देखते हैं, इसलिये आप अलग तरीके से सोचते और काम करते हैं। चूँकि आपके पास सुदृढ़ व अपरिवर्तनीय केंद्र से प्रवाहित होने वाली उच्च दर्जे की सुरक्षा, मार्गदर्शन, बुद्धि और शक्ति है, इसलिये आपके पास अति प्रोएक्टिव और अति प्रभावकारी जीवन की नींव होती है।

व्यक्तिगत मिशन स्टेटमेंट लिखना और उसका प्रयोग करना

जब हम अपने भीतर गहराई में जाते हैं, जब हम अपने मूलभूत पैरेडाइम्स को सही सिद्धांतों के सामंजस्य में लाने के लिए उन्हें समझते और व्यवस्थित करते हैं, तो हम एक प्रभावकारी तथा शक्तिदायक केंद्र की रचना तो करते ही हैं, एक स्पष्ट लेंस की रचना भी करते हैं, जिससे हम संसार को देख सकते हैं। फिर हम उस लेंस को इस बात पर फोकस कर सकते हैं कि हम अनूठे व्यक्ति के रूप में इस संसार से कैसे संबंध बनायेंगे।

फ्रैंकल कहते हैं कि हम जीवन में अपने लक्ष्यों का आविष्कार नहीं करते हैं, बल्कि उन्हें पहचानते हैं। मुझे शब्दों का यह चयन पसंद है। मैं सोचता हूँ कि हममें से प्रत्येक में एक अंदरूनी मॉनिटर या एहसास होता है, जिसे हम विवेक कहते हैं। यह

हमें अपने अनूठेपन की जागरूकता प्रदान करता है और यह बताता है कि हम कौनसे अनूठे योगदान दे सकते हैं। फ्रैंकल के शब्दों में, 'जीवन में प्रत्येक व्यक्ति का अपना विशिष्ट कर्त्तव्य या लक्ष्य होता है...। इसमें उसकी जगह कोई दूसरा नहीं ले सकता, न ही उसका जीवन दोहराया जा सकता है। इसे उनकी प्रामाणिकता सिद्ध कर सकते हैं।'

जाहिर है, हम सर्वज्ञाता नहीं हैं। हमारे सच्चे स्वभाव और हमारे चारों ओर की दुनिया के बारे में अगर हम जागरूक न हों, तो इससे सही सिद्धांतों का हमारा ज्ञान और समझ सीमित होती है। हमारी समझ उन फैशनेबल जीवनदर्शनों तथा अवधारणाओं की बाढ़ से भी सीमित होती है, जो सही सिद्धांतों के तालमेल में नहीं होते। इन विचारों का भी लोकप्रियता का अपना दौर रहेगा, परंतु उनके पहले आये इसी तरह के विचारों की तरह ही ये भी लंबे समय तक नहीं टिक पायेंगे, क्योंकि इन्हें झूठी नींव पर बनाया गया है।

हमारी सीमाएँ हैं, परंतु हम अपनी सीमाओं की रेखा को पीछे धकेल सकते हैं। हमारे अपने विकास के सिद्धांत की समझ हमें सही सिद्धांतों को इस विश्वास के साथ खोजने में समर्थ बनाती है कि हम जितना अधिक सीखते हैं, उतनी ही अधिक स्पष्टता से हम उस लेंस पर फोकस कर सकते हैं, जिसके माध्यम से हम दुनिया को देखते हैं। सिद्धांत कभी नहीं बदलते, उनके प्रति हमारी समझ बदलती है।

बुद्धि और मार्गदर्शन, जो सिद्धांत-केंद्रित जीवन से जुड़े होते हैं, सही नक्शे से मिलते है-उस तरीके से, जैसे चीजें वास्तव में हैं, थी और रहेंगी। सही नक्शे हमें स्पष्टता से यह देखने में समर्थ बनाते हैं कि हम कहाँ जाना चाहते हैं और वहाँ कैसे पहुँचा जाये। हम सही जानकारी का प्रयोग करके अपने निर्णय ले सकते हैं, जिन पर अमल करना संभव और सार्थक हो।

सिद्धांत केंद्रित जीवन से मिलने वाली व्यक्तिगत शक्ति आत्म-जागरूक, ज्ञानी और प्रोएक्टिव व्यक्ति की शक्ति है। ऐसे व्यक्ति दूसरों के दृष्टिकोणों, व्यवहार और कार्यों द्वारा सीमित नहीं होते। वे परिस्थितियों और परिवेश के प्रभावों द्वारा भी सीमित नहीं होते, जिनसे दूसरे लोग सीमित होते हैं।

शक्ति की एकमात्र वास्तविक सीमा सिद्धांतों के स्वाभाविक परिणाम हैं। हम

सही सिद्धांतों के ज्ञान के आधार पर अपने कार्य चुनने के लिए स्वतंत्र हैं, परंतु हम उन कार्यों के परिणामों को चुनने के लिए स्वतंत्र नहीं हैं। याद रखें, 'अगर आप छड़ी का एक सिरा उठाते हैं, तो आप दूसरा सिरा भी उठाते हैं।'

सिद्धांतों के साथ हमेशा उनके स्वाभाविक परिणाम जुड़े होते हैं। जब हम इन सिद्धांतों के सामंजस्य में जीते हैं, तो मिलने वाले परिणाम सकारात्मक होते हैं। जब हम उनकी अवहेलना करते हैं, तो मिलने वाले परिणाम नकारात्मक होते हैं। परंतु चूँकि ये सिद्धांत हर एक पर लागू होते हैं, चाहे वह इसके बारे में जागरूक हो या न हो, इसलिये परिणाम की यह सीमा शाश्वत है **और हम सही सिद्धांतों को जितना अधिक जान लेंगे, समझदारी से कार्य करने की हमारी व्यक्तिगत स्वतंत्रता उतनी ही अधिक होगी।**

अपने जीवन को शाश्वत और अपरिवर्तनशील सिद्धांतों पर केंद्रित करके हम प्रभावकारी जीवन का मूलभूत पैरेडाइम तैयार करते हैं। यही वह केंद्र है, जो बाकी सभी केंद्रों को सही स्थान पर रखता है।

याद रखे कि आपका पैरेडाइम ही वह स्रोत है, जिससे आपका व्यवहार और दृष्टिकोण उत्पन्न होते हैं। पैरेडाइम चश्मे की तरह है। यह आपके जीवन की हर उस चीज को प्रभावित करता है, जिसे आप देखते हैं। सही सिद्धांतों के पैरेडाइम से चीजों को देखने पर आप जीवन में जो देखेंगे, वह किसी अन्य वस्तु पर केंद्रित पैरेडाइम से नाटकीय रूप से भिन्न होगा।

मैंने इस पुस्तक के परिशिष्ट 'अ' में एक विस्तृत चार्ट दिया है। यह चार्ट बताता है कि हमने जिन केंद्रों पर चर्चा की है, उनमें से शायद हर केंद्र चीजों को देखने के आपके तरीके को प्रभावित कर सकता है। आपका केंद्र कितना अंतर पैदा कर सकता है, इसे तत्काल समझने के लिए आइये हम एक विशिष्ट समस्या को विभिन्न पैरेडाइम्स से देखें। जब आप पढ़े, तो हर चश्मे को लगाने की कोशिश करें। विभिन्न केंद्रों से प्रवाहित होने वाली प्रतिक्रिया को महसूस करने की कोशिश करें।

मान लीजिये आज रात आपने अपनी पत्नी के साथ किसी संगीत कार्यक्रम में जाने की योजना बनाई है। आपने टिकट खरीद लिये है और आपकी पत्नी कार्यक्रम में जाने को लेकर रोमांचित है। दोहपर के चार बजे हैं।

अचानक आपका बॉस आपको अपने कक्ष में बुलाता है और कहता है कि शाम को उसे आपकी मदद चाहिए, क्योंकि कल सुबह 9 बजे होने वाली एक महत्वपूर्ण मीटिंग की तैयारी करना है।

अगर आप जीवनसाथी-केंद्रित या परिवार-केंद्रित चश्मे से देख रहे हैं, तो आपकी मुख्य चिंता आपकी पत्नी होगी। हो सकता है आप बॉस को बता दे कि आप नहीं रुक सकते और इसके बाद आप पत्नी को खुश करने के लिए उसे संगीत कार्यक्रम में ले जायें। हो सकता है आप यह महसूस करे कि अपनी नौकरी बचाने की खातिर आपको रुकना पड़ेगा। बहरहाल, आप ऐसा अनिच्छा से करेंगे, पत्नी की प्रतिक्रिया के बारे में चिंतित रहेंगे, अपने निर्णय को उचित ठहराने की कोशिश करेंगे और पत्नी की निराशा या क्रोध से खुद को बचाने का प्रयास करेंगे।

अगर आप धन-केंद्रित चश्मे से देख रहे हैं, तो आपका मुख्य विचार काम करने के बदले में मिलने वाला ओवरटाइम होगा। या फिर देर रात तक रुकने के कारण भविष्य में वेतनवृद्धि मिलने की संभावना। आप अपनी पत्नी को फोन करके उसे सिर्फ इतना बता सकते हैं कि आपको ऑफिस में देर तक रुकना पड़ेगा। आप यह मान लेते हैं कि आपकी पत्नी इस बात को समझ जायेगी कि आर्थिक आवश्यकताएँ सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण होती हैं।

अगर आप कार्य-केंद्रित हैं, तो आप इसे अवसर के रूप में देख सकते हैं। आप काम के बारे में और अधिक सीख सकते हैं। आप अपने बॉस पर अच्छी छाप छोड़ सकते हैं और अपने कैरियर को आगे बढ़ा सकते हैं। आप अपेक्षित समय से अधिक देर तक काम करके खुद की पीठ थपथपा सकते हैं, क्योंकि यह इस बात का प्रमाण है कि आप कितने परिश्रमी हैं। आपकी पत्नी को आप पर गर्व होना चाहिए।

अगर आप स्वामित्व-केंद्रित हैं, तो आप उन चीजों के बारे में सोच सकते हैं, जिन्हें ओवरटाइम की आय से खरीदा जा सकता है। या आप इस बारे में विचार कर सकते हैं कि अगर आप रुकेंगे, तो इससे ऑफिस में आपकी प्रतिष्ठा कितनी बढ़ जायेगी। हर व्यक्ति अगले दिन यह जान लेगा कि आप कितने महान्, त्यागी और समर्पित हैं।

अगर आप आनंद-केंद्रित हैं, तो आप शायद काम छोड़कर संगीत कार्यक्रम में

जा सकते हैं, भले ही आपके देर तक ऑफिस में काम करने के लिए आपकी पत्नी खुशी-खुशी राजी हो जाये। आप रात बाहर गुजारने के हकदार हैं।

अगर आप मित्र-केंद्रित हैं, तो आपका निर्णय इस बात से प्रभावित होगा कि आपने संगीत कार्यक्रम में आने के लिए अपने मित्रों को आमंत्रित किया है या नहीं। या ऑफिस के आपके मित्र भी देर तक ऑफिस में रुक रहे हैं या नहीं।

अगर आप शत्रु-केंद्रित हैं, तो आप इसलिये देर तक रुक सकते हैं क्योंकि आप जानते हैं कि इससे ऑफिस के उस व्यक्ति की तुलना में आपका पलड़ा भारी हो जायेगा, जो सोचता है कि वह कंपनी का सबसे अच्छा कर्मचारी है। इसलिये जब आपका यह शत्रु बाहर मजे कर रहा होगा, तब आप काम करेंगे, गुलामी करेंगे, उसका तथा अपना काम निबटायेंगे और कंपनी के हित में अपने व्यक्तिगत आनंद का त्याग करेंगे। आप इस बात पर प्रसन्न होंगे कि आपके शत्रु ने इस अवसर को अनदेखा कर दिया है।

अगर आप चर्च-केंद्रित हैं, तो आप इस बात से प्रभावित हो सकते हैं कि चर्च के अन्य सदस्य संगीत कार्यक्रम में जा रहे हैं या नहीं, या चर्च के सदस्य आपके ऑफिस में काम करते हैं या नहीं, या संगीत कार्यक्रम कौनसा है-रॉक कंसर्ट की तुलना में आपके लिए हैंडेल का मसीहा अधिक महत्वपूर्ण होगा। आपका निर्णय इस बात से भी प्रभावित हो सकता है कि आपके विचार से 'चर्च के अच्छे सदस्य' को इस स्थिति में क्या करना चाहिए और आप इस अतिरिक्त कार्य को 'सेवा' के रूप में देखते हैं या 'धन के पीछे भागने' के रूप में।

अगर आप आत्म-केंद्रित हैं, तो आपका ध्यान इस बात पर केंद्रित होगा कि आपके लिए सबसे अच्छा क्या रहेगा। क्या रात को बाहर जाना आपके लिए बेहतर होगा? या फिर बॉस को खुश करना? आपकी मुख्य चिंता यह होगी कि विभिन्न विकल्प आपको किस तरह प्रभावित करेंगे।

जब हम एक ही घटना को कई केंद्रों से देखने के तरीकों पर विचार करते है तो क्या यह हैरानी की बात है कि हमारे आपसी व्यवहार में 'युवती/बूढ़ी महिला' की अनुभूति की समस्याएँ आ जाती हैं? क्या आप देख सकते हैं कि हमारे केंद्र हमें

कितने मूलभूत रूप से प्रभावित करते हैं? वे हमारी प्रेरणाओं, दैनिक निर्णयों, कार्यों (या अधिकांश मामलों में, हमारी प्रतिक्रियाओं) और घटनाओं की व्याख्या तक को प्रभावित करते हैं। यही कारण है कि अपने केंद्र को समझना इतना महत्वपूर्ण है और अगर यह केंद्र आपको प्रोएक्टिव व्यक्ति के रूप में सशक्त नहीं बनाता, तो आपकी प्रभावकारिता के लिए यह मूलभूत है कि आप अपने पैरेडाइम में आवश्यक परिवर्तन करके ऐसा केंद्र तैयार करें, जो यह काम करें।

सिद्धांत-केंद्रित व्यक्ति के रूप में आप स्थिति के भावावेग और स्वयं को प्रभावित करने वाले अन्य तत्त्वों से दूर हटकर खड़े होने की कोशिश करते हैं और विकल्पों का मूल्यांकन करते हैं। नौकरी की आवश्यकताओं, पारिवारिक आवश्यकताओं, अन्य उपस्थित आवश्यकताओं और विभिन्न वैकल्पिक निर्णयों के संभावित परिणामों आदि की संतुलित संपूर्णता को देखने के बाद आप सर्वश्रेष्ठ समाधान पर पहुँचने की कोशिश करेंगे और ऐसा सभी बातों पर विचार करने के बाद करेंगे।

आप संगीत कार्यक्रम में जायेंगे या ऑफिस में रुककर काम करेंगे, यह दरअसल प्रभावकारी निर्णय का एक बहुत छोटा हिस्सा है। आप कई अन्य केंद्रों से भी यह चुनाव कर सकते हैं। परंतु जब आप सिद्धांत-केंद्रित पैरेडाइम से निर्णय पर पहुँचते हैं, तो कई महत्वपूर्ण अंतर स्पष्ट दिखते हैं।

सबसे पहली बात, आप दूसरे लोगों या परिस्थितियों द्वारा संचालित नहीं हो रहे हैं। आप प्रोएक्टिव तरीके से यह चुन रहे हैं कि आपके लिए सर्वश्रेष्ठ विकल्प क्या है। आप अपने निर्णय को ज्ञान के आधार पर और सचेतन रूप से ले रहे हैं। दूसरी बात, आप जानते हैं कि आपका निर्णय सबसे प्रभावकारी है क्योंकि यह उन सिद्धांतों पर आधारित है, जिनके दीर्घकालीन परिणामों का पहले से ही अनुमान लगाया जा सकता है। तीसरी बात, आप जिस कार्य को करने का चुनाव करते हैं, वह जीवन में आपके चरम जीवन मूल्यों में योगदान देता है।

आई लव मी

क्या हम खुद को भी बिना किसी शर्त के प्यार करते है या सिर्फ प्यार

दूसरों पर ही लुटाते है? खुद को प्यार करना बहुत मुश्किल है। इसे पाना भी मुश्किल है। खुद से प्यार करने का मतलब है अपने ही सबसे अच्छे दोस्त होना। अपने प्रति दयालु होना। अपने प्रति कठोर शब्दों का इस्तेमाल न करना। खुद की आलोचना न करना। यदि हम खुद से प्यार करते है तो हम दूसरों से बेहतर तरीके से अपने प्यार को जाहिर कर सकते है।

हम सभी हकीकत में अपने आपको सबसे ज्यादा प्यार करते हैं। यह एक नैसर्गिक सत्य है। इसीलिए हमें खुद का प्रिय होना चाहिए। लेकिन कई लोगों के साथ ऐसा नहीं होता। वे अपने भीतर मौजूद खूबियों, गुणों को सराहने की बजाय खुद को नकार देते हैं। जिसकी सबसे बड़ी वजह है उनमें आत्मविश्वास की कमी। खुद पर विश्वास न कर पाने के कारण हम अपने भीतर की खूबियों को या तो पहचान नहीं पाते या उनसे अपना परिचय स्थापित नहीं कर पाते। खुद से संतुष्ट न हो पाने की स्थिति में हम बाहरी दुनिया से तारीफ, प्रशंसा और स्वीकृति पाने के लिए उनका मुँह देखते हैं और अपने भीतर की आवाज को दबाते हुए बाहरी दुनिया से अपने अच्छे होने का प्रमाण लेने की कोशिश करते हैं। जबकि हम अपने आपको जितना जानते हैं शायद हमें उतना कोई और नहीं जानता।

अपने भीतर की आवाज सुनें-हमारे भीतर की आवाज हमसे ज्यादा मुखर होते हुए हमसे परिचित होती है। यह अकेली ऐसी आवाज होती है जिसे बाहर की दुनिया नहीं सुन सकती। जो हमारे बेहद करीबी होते हैं। उनको भी इस आवाज की गूँज सुनायी नहीं देती। हमें अपने इर्द-गिर्द हर समय ऐसे लोग मिल जाते हैं जो हमेशा हमारे आत्मविश्वास को ठेस पहुँचाते हैं। लोगों के अंदर यह एक बुरी प्रवृत्ति देखी जाती है कि वे अपने भीतर की सहजता और प्राकृतिक गुणों को छोड़ दूसरों को अच्छी लगने वाली बातें करते हैं। कुछ लोग तो अपने वाणी से ही इस तरह का स्वांग रचते हैं जिसमें उनकी असलियत पूरी तरह छिप जाती है।

लोग हमें क्या कहते हैं इस बारे में सोचना छोड़ें? लोग हमारे बारे में क्या सोचेंगे इस विचार को दिमाग में कभी न आने दें? अपने प्रति हम खुद ही न्याय कर सकते हैं। खुद ही अपने आपसे दौड़ लगाकर खुद को हरा सकते हैं। अपना आइना हम खुद ही होते हैं। बशर्ते कि हम अपने आपको बड़े सपने देखने के लिए मानसिक

रूप से तैयार कर सकें। उस सपने को हासिल करने के लिए प्रयास करें। उस सपने को पाने के लिए तन-मन से जुट जायें। ऐसे में अपने भीतर की आवाज को जान, समझकर जो हमारे चेहरे पर एक नये किस्म का आत्मविश्वास झलकता है वह सभी हमें जीत की ओर ले जाता है। अब ऐसे में भला हमें हमारा खुद का ही पसंदीदा होने से कौन रोक सकता है?

अपने आप को मजबूत बनायें–लोग अपने को श्रेष्ठ समझते हुए हमेशा दूसरों को अपने से कमतर समझते हैं। हममें से हर दूसरा व्यक्ति इस दर्द से पीड़ित है कि उसे दूसरे लोग अपने बराबर नहीं समझते। यही पर शुरू होता है किसी के आत्मविश्वास खोने का अंतहीन सिलसिला। यहीं वह जगह है जहाँ से उसके खोये हुए आत्मविश्वास को पूर्ण हासिल करने की एक नयी कोशिश की जा सकती है। जहाँ खोये हुए आत्मविश्वास को हासिल करने के लिए केवल खुद की जरूरत होती है। जिसमें दूसरों की भूमिका नहीं होती। एक ऐसी स्थिति जहाँ हम अपने आपको दिशा-निर्देश देते हैं और अपने आपको कभी किसी ग़लत बात के लिए दोषी नहीं मानते और खुद को किसी अपराधबोध के भीतर डालकर अपने आपको कोसते नहीं यानी एक ऐसी स्थिति जिसमें हम अपने पर दोषारोपण न करे यानी हम अपने लिए सब कुछ खुद ही करें। यह स्थिति मुश्किल जरूर है लेकिन असंभव नहीं है। बस जरूरत है हमें अपने नैतिक और मानसिक बल को एकजुट करने की।

वैज्ञानिकों ने माना 'पैसे से सुख नहीं'

क्या पैसे से सुख खरीदा जा सकता है। इस विषय पर अध्ययन और शोध करने वाले वैज्ञानिकों का कहना है कि पैसे का सुख से कोई संबंध नहीं है। उल्टे अधिक पैसा लोगों को सामाजिक संबंधों व आनंद के पलों से भी महरूम कर देता है।

मनोचिकित्सकों के एक दल ने अपने ताजे अध्ययनों में पाया है कि पैसा तो पैसा, पैसे की सोच ही लोगों के जीवन को बदल देती है। अमरीका के मिनियपोलिस स्थित मिन्नेसोटा यूनिवर्सिटी में कार्यरत कैथलिन बोज और उनके सहयोगियों ने सैकड़ों छात्रों पर अध्ययन कर पाया कि अधिक पैसे मिलना शुरू होते ही लोगों का

सामाजिक व्यवहार बदल जाता है।

कार्नेल यूनिवर्सिटी, न्यूयॉर्क के मनोवैज्ञानिक टॉम गिलोविच के अनुसार पैसे से लोगों के दिमाग पर मादक किस्म का प्रभाव होता है। उदाहरण के तौर पर आप बच्चों को किसी काम को करने के लिए कुछ ईनाम देते है। ईनाम बच्चों में आत्मविश्वास को बढ़ाता है, लेकिन यह बच्चों में लालच भी पैदा करता है। साथ ही सहयोग की भावना को खत्म करता है।

स्वयं को सुखी और खुश मानने वाले लोगों पर किये गये वैज्ञानिक अध्ययनों में ऐसे आँकड़ों और बातों का पता चला जो इन लोगों में एक समान थी। निष्कर्षों में पाया गया कि स्वास्थ्य, धन, सौंदर्य और हैसियत जैसी चीजों का खुशी या संतुष्टि पर बहुत न्यूनतम प्रभाव पड़ता है। शोध के अनुसार अधिकतर लोगों के जीवन में असली संतुष्टि या खुशी पैसों या रुतबे से नहीं आती बल्कि वह बच्चों को बड़ा करने, आपसी प्यार, कार्य और आपसी संबंधों की चुनौतियों तथा संघर्षों का सामना करने और उससे उबरने पर आती है।

शोध के अनुसार चीन की तुलना में जापान के लोगों की आय लगभग नौ गुणा अधिक है। इसके बावजूद भी सर्वेक्षणों में जापान में जीवन से संतुष्टि का स्तर नीचा पाया गया है। यह भी पाया गया कि ढेर सारी दौलत और सुविधाओं की तरह अच्छी सेहत भी आमतौर पर खुशी का वाहक नहीं बनती है। नये शोधों से पता चलता है कि किसी चीज के प्रति कृतज्ञ या एहसानमंद होने पर उसके बारे में बात करना या लिखना भी खुशी प्रदान करता है।

'जिंदगी' से कंगाल हो रहे 'पैसे वाले'

एनसीआरबी रिपोर्ट-राज्य में प्रतिदिन 12 लोग करते हैं आत्महत्या, खुदकुशी करने वाले 4459 लोगों में 391 अमीर भी।

प्रदेश में अब गरीब ही नहीं, अमीर भी 'जिंदगी' से हार मानने लगे है। राज्य में प्रतिदिन 12 लोग आत्महत्या करते है, इनमें एक अमीर शामिल होता है।

आत्महत्या करने वालों की आर्थिक स्थिति पर हाल ही पहली बार जारी हुई नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) की रिपोर्ट में यह खुलासा हुआ है।

रिपोर्ट के मुताबिक आत्महत्या के मामलों में राजस्थान देश में 12वें स्थान पर है। राज्य में वर्ष 2014 के दौरान 391 अमीरों समेत 4459 लोगों ने आत्महत्या की। इनमें 3235 पुरुष और 1224 महिलाएँ हैं। सामूहिक आत्महत्या का पिछले वर्ष राज्य में सिर्फ एक ही मामला सामने आया।

एनसीआरबी ने आर्थिक स्थिति के आधार पर आत्महत्या करने वालों को चार समूहों में बाँटा। पहले समूह में बीपीएल यानी एक लाख रुपये से कम वार्षिक आय वालों और दूसरे समूह में पाँच लाख से कम आय वालों को शामिल किया गया। तीसरे समूह में पाँच लाख से अधिक और दस लाख से कम तथा चौथे समूह में दस लाख से अधिक वार्षिक आमदनी वालों को रखा गया।

1,31,666 लोगों ने की देश में आत्महत्या, 16,307 आत्महत्या के साथ महाराष्ट्र पहले स्थान पर, 200 छात्र-छात्राओं ने की राजस्थान में आत्महत्या, 2,379 अनपढ़ों ने की तमिलनाडु में सर्वाधिक आत्महत्या।

बीपीएल-1,671 पुरुष, 724 महिला, 5 लाख से कम-1,250 पुरुष, 423 महिला, 10 लाख से कम-279 पुरुष, 66 महिला, 10 लाख से अधिक-35 पुरुष, 11 महिलाओं ने आत्महत्या की।

फाँसी लगाने वालों में पुरुष ज्यादा-राज्य में सर्वाधिक आत्महत्या करने वाले 3211 विवाहित हैं। इनमें 2401 पुरुष और 810 महिलाएँ शामिल हैं। राज्य में 1099 पुरुषों ने फाँसी लगाकर जान दी, जबकि 384 महिलाओं ने यह तरीका चुना। राज्य में 100 पुरुषों ने आत्मदाह किया जबकि महिलाओं का आँकड़ा 101 रहा।

न्यायोचित युद्धकर्त्ता से भी अधिक पापी : गुण-गुणी निंदक

(चाल : आत्मशक्ति....., सायोनारा.....)

न्यायोचित युद्धकर्त्ता से भी, अधिक पापी होते निंदक।
आगम में इसका वर्णन, पाया जाता है बहुत अधिक।। (1)

श्रीराम-पांडव से (ले) तीर्थंकर, युद्ध करके भी गये स्वर्ग-मोक्ष।
देव-शास्त्र-गुरु व गुण-गुणी निंदक, दुःख पाते हैं अनेक।। (2)

श्रीपाल व अंजना सुंदरी-सगर चक्री के साठ हजार पुत्र।

निंदा व निंदा की अनुमोदना से, सात सौ भोगे दुःख-ताप।। (3)

सम्यक्दृष्टि से ले श्रावक तक, करते हैं न्यायोचित युद्ध।
भाव में न होते अज्ञानी-मोही, न्याय हेतु करते विरोधी हिंसा।। (4)

न्याय रक्षा से ले आत्म रक्षा हेतु, करते है विरोधी हिंसा।
मोह अनंतानुबंधी या अप्रत्याख्यान (कषाय) रहित करते विरोधी हिंसा।। (5)

अनावश्यक वे न करते अन्याय-अत्याचार व दुराचार/(पापाचार)।
ज्ञान-वैराग्य से सहित होकर, पालन करते वे सदाचार।। (6)

अतएव इन्हें नहीं बंधता है, घोरातिघोर मोहनीय/(मिथ्यात्व) कर्म।
कालांतर से वे श्रमण बनकर, यथायोग्य पाते स्वर्ग-मोक्ष।। (7)

इससे विपरीत जो निंदक होते, वे होते हैं मिथ्यादृष्टि।
ज्ञान-वैराग्य व नैतिक रहित, वे होते हैं मिथ्याचारी।। (8)

अनंतानुबंधी-अप्रत्याख्यान-प्रत्याख्यान व संज्वलन।
नव नो कषाय सहित होने से, निंदक बांधते हैं घातीकर्म।। (9)

इससे वे सत्य-असत्य न जानते, नहीं जानते हिताहित।
राग द्वेष मोह ईर्ष्या घृणा युक्त होते, निंदक अष्टमद युक्त।। (10)

जिससे वे भाव हिंसक होते, परिणाम होते नकारात्मक।
स्व-दोषों को तो नहीं सुधारते, गुण-गुणी के बनते निंदक।। (11)

द्रव्य हिंसा से भी महाहिंसक बनते, भाव हिंसा ही महाहिंसा।
भाव हिंसा रिक्त श्रमणों की, द्रव्य हिंसा से न होती सही (घोर) हिंसा।। (12)

देव-शास्त्र-गुरु गुण-गुणी की, प्रशंसा ही है यथार्थ पूजा।
प्रार्थना-वंदना-स्तुति-आराधना, यथार्थ से प्रशंसा रूपी पूजा।। (13)

निंदा इससे पूर्ण विपरीत, जिसे कहते हैं अवर्णवाद।
'पृष्ठ माँसभक्षी' सम होते है निंदक, यशवध ही यथार्थ वध।। (14)

निंदा से कलह-वाद-विवाद, वैर-विरोध संक्लेश होते।
इससे विपरीत गुण-प्रशंसा से, प्रशस्त भाव व पुण्य बंधते।। (15)

अतएव गुण-गुणी प्रशंसा, करणीय सदा नवकोटि से।
इसे ही 'वंदे तद् गुण लब्धये' कहते, 'कनक' मान्य नवकोटि से।। (16)

सीपुर, दिनांक 16.05.2017, मध्याह्न 1.17
(विशेष परिज्ञान हेतु कविकृत 'निंदा पुराण गीताञ्जली' पठनीय)

संदर्भ-

दोष कथक जिनधर्मी नहीं

आयरियाणं वीसत्थदाए भिक्खु कहेदि सगदोसे।
कोई पुण णिद्धम्मो अण्णेसिं कहेदि ते दोसे।। (490) भ.आ.

भिक्षु विश्वासपूर्वक अपने दोषों को आचार्यों से कहता है। कोई आचार्य जो जिन भगवान् के द्वारा कहे गये धर्म से भ्रष्ट होता है वह भिक्षु के द्वारा आलोचित दोषों को दूसरों से कह देता है कि इसने यह अपराध किया है अर्थात् ऐसा करने वाला आचार्य जिनधर्म से बाह्य होता है।

दोष कथन से मिथ्यात्व की आराधना

तेणं रहस्सं भिदंतएण साधु तदो य परिचत्तो।
अप्पा गणो य संघो मिच्छत्ताराधणा चेव।। (491)

उस आलोचित दोष को प्रकट करने वाले आचार्य ने ऐसा करके उस साधु का ही त्याग कर दिया। क्योंकि उसने अपने चित्त में यह विचार नहीं किया कि मेरे द्वारा इसके दोष प्रकट कर देने पर वह लज्जित होकर दुःखी होगा अथवा आत्मघात कर लेगा, या क्रुद्ध होकर रत्नत्रय को ही छोड़ देगा तथा उस आचार्य ने अपनी आत्मा का त्याग किया, गण का त्याग किया, संघ का त्याग किया। इतना ही नहीं उसके मिथ्यात्व की आराधना का दोष भी होता है।

दोष कथन से मिथ्यात्व की आराधना क्यों?

जदि धरिसणमेरिसयं करेदि सिस्सस्स चेव आयरिओ।
धिद्धि अपुट्ठधम्मो समणोत्ति भणेज्ज मिच्छजणो।। (496)

यदि आचार्य अपने शिष्यों को ही इस प्रकार दोष प्रकट करके दोषी करते हैं तो

इन अपुष्ट धर्म वाले श्रमणों को धिक्कार है ऐसा मिथ्यादृष्टि लोग कहेंगे।

इच्चेवमादिदोसा ण होंति गुरुणो रहस्सधारिस्स।
पुट्ठेव अपुट्ठे वा अपरिस्साइस्स धीरस्स।। (497)

जो आचार्य पूछने पर अथवा बिना पूछे शिष्य के द्वारा प्रकट किये दोषों को दूसरों से नहीं कहता वह रहस्य को दूसरों से नहीं कहता वह रहस्य गुप्त रखने वाला अपरिश्रावी होता है और उसे ऊपर कहे दोष जरा भी नहीं छूते।

सगणे व परगणे वा परपरिपवादं च मा करेज्जाह।
अच्चासादणविरदा होह सदा वज्जभीरु य।। (371) (भ.आ.)

अपने गण में या दूसरे गण में दूसरों की निन्दा नहीं करनी चाहिए। अति आसादना से विरत रहो, सदा पाप से डरो।

आयासवेरभयदुक्खसोयलहुगत्तणाणि य करेइ।
परणिंदा वि हु पावा दोहग्गकरी सुयणवेसा।। (372)

पर निन्दा आयास, वैर, भय, दुःख, शोक और लघुता को करती है, पाप रूप है, दुर्भाग्य को लाती है और सज्जनों को अप्रिय है।

किच्चा परस्स णिंदं जो अप्पाणं ठवेदुमिच्छेज्ज।
सो इच्छदि आरोग्गं परम्मि कडुओसहे पीए।। (373)

जो पर की निन्दा करके अपने को गुणी कहलाने की इच्छा करता है वह दूसरे के द्वारा कड़वी औषधि पीने पर अपनी निरोगता चाहता है अर्थात् जैसे दूसरे के औषधि पीने पर आप निरोग नहीं हो सकता है। वैसे ही दूसरे की निन्दा करके कोई स्वयं गुणी नहीं बन सकता।

दट्ठूण अण्णदोसं सप्पुरिसो लज्जिओ सयं होइ।
रक्खइ य सयं दोसवं तयं जणजंपणभएण।। (374)

सत्पुरुष दूसरों के दोष देखकर स्वयं लज्जित होता है। लोकापवाद के भय से वह अपनी तरह दूसरों के भी दोष को छिपाता है।

जदि धरिसणमेरिसयं करेदि सिस्सस्स चेव आयरिओ।
धिद्धि अपुट्ठधम्मो समणोत्ति भणेज्ज मिच्छजणो।। (496)

यदि आचार्य अपने शिष्यों को ही इस प्रकार दोष प्रकट करके दूषित करते हैं

तो इन अपुष्ट धर्म वाले श्रमणों को धिक्कार है ऐसा मिथ्यादृष्टि लोग कहेंगे।

उच्चेवमादिदोसा ण होंति गुरुणो रहस्सधारिस्स।
पुट्ठेव अपुट्ठे वा अपरिस्साइस्स धीरस्स।। (497)

जो आचार्य पूछने पर अथवा बिना पूछे शिष्य के द्वारा प्रकट किये दोषों को दूसरों से नहीं कहता वह रहस्य को दूसरों से नहीं कहता वह रहस्य गुप्त रखने वाला अपरिश्रावी होता है और उसे ऊपर कहे दोष जरा भी नहीं छूते।

अशिष्टादि कथन : हिंसा

गर्हितमवद्य-संयुतमप्रियमपि भवति वचनरूपं यत्।
सामान्येन त्रेधा, मतमिदमनृतं तुरीयं तु।। (95)

Speech of 3 kinds, Garhita, Condemnable; Savadya, sinful, or Apriya, disagreeable, is ordinarily speaking, said to be the fourth kind of falsehood.

व्याख्या-भावानुवाद-चतुर्थ प्रकार के असत्य के तीन भेद हैं यथा गर्हित, पाप संयुक्त, अप्रिय रूप वचन। इसमें अभूत का उद्भावन किया जाता है। जो कुत्सित वचन है उसे गर्हित वचन कहते हैं। जो पाप से संयुक्त वचन है उसे अवद्य संयुक्त वचन कहते हैं। जो अनिष्टकारी वचन है उसे अप्रिय वचन कहते हैं। मर्म को क्षत-विक्षत करने वाले कठोर निन्दनीय भंगिमा युक्त चुगलखोर वचन आदि इसके अंतर्गत हैं।

गर्हित (निन्दा) वचन भी हिंसा

पैशून्य-हास, गर्भं, कर्कशमसमंजसं प्रलापितं च।
अन्यदपि यदुत्सूत्रं, तत्सर्वं गर्हितं गदितम्।। (96)

Garhita speech is said to be all that, which is back bitting, harsh, unbecoming, nonsensical, or otherwise uncanonical.

व्याख्या-भावानुवाद-तीन प्रकार के असत्य में से यहाँ गर्हित वचन का प्ररूपण करते हैं। जो वचन पैशून्य अर्थात् चुगलखोरी/अट्टहास्य से भरा है उसे गर्हित वचन कहते हैं। पुनः जो वचन कर्कश, कठोर, असमंजस, संदेहात्मक, असभ्य, अयोग्य वचन हैं वे भी गर्हित वचन हैं। इसी प्रकार जो बकवास से भरा गप्पेबाज,

अधिक बोलना, उत्श्रृखल बोलना, भगवान् के प्रामाणिक वचन से बाह्य वचन बोलना ये सब वचन कुत्सित, गर्हित वचन हैं।

समीक्षा-उपर्युक्त वचन में विशेषतः प्रमाद, कुटिलता, धूर्तता, कठोरता, मूर्खता आदि दुर्गुण पाये जाते हैं। इससे दूसरों को तो कष्ट पहुँचता ही है परन्तु स्वयं की शक्ति तथा समय का दुरुपयोग होता है। अंतरंग से दूषित भाव से प्रेरित होकर यह वचन प्रयोग करने के कारण स्वयं को तो पाप बंध होता ही है तथा दूसरों के मन में संक्लेश परिणाम होने के कारण दूसरों के पापबंध का भी कारण बनता है। इतना ही नहीं उपर्युक्त वचनों से शब्द प्रदूषण होता है। कलह, तनाव, वैमनस्य बढ़ता है, फूट पड़ती है जिससे मानसिक, पारिवारिक तथा सामाजिक वातावरण प्रदूषित हो जाता है। प्रायः तुच्छ व्यक्ति उपर्युक्त वचन का प्रयोग करते हैं। मेरा स्वयं का अनुभव है भारत के अधिकांश व्यक्ति उपर्युक्त वचन में ही अधिक समय तथा शक्ति का दुरुपयोग करते हैं। मंदिर हो या स्कूल, धर्मसभा हो या संसद भवन, तीर्थ स्थल हो या सामाजिक सार्वजनिक स्थल यत्र-तत्र सर्वत्र भारत में उपर्युक्त वचन का ही गरमागरम माहौल रहता है। महत्वपूर्ण और जरूरी विषय की चर्चा तथा चर्या को गौण करके उपर्युक्त विषय को ही मुख्यता देते हैं। अधिकांश अनुशासन भंग के लिए कारण उपर्युक्त कथन ही है। जो व्यक्ति बाल सुलभ बच्चों के शोर-शराबे को खराब मानकर डाँटेंगे वे ही व्यक्ति धार्मिक स्थल में, सार्वजनिक स्थल में यहाँ तक कि संसद भवन में असभ्य बर्बर व्यक्तियों के समान व्यवहार करेंगे।

सावद्य वचन रूपी हिंसा

छेदन-भेदन-मारण कर्षण-वाणिज्य-चौर्य वचनादि।
तत्सावद्यं यस्मात्प्राणिवधाद्याः प्रवर्तन्ते।। (97)

All speech which makes another engage in piercing cutting, beating, ploughing, trading, stealing, etc. is savadya, sinful as it leads to destruction of life etc.

व्याख्या-भावानुवाद-यहाँ पाप का स्वरूप कथन कर रहे हैं। जिससे प्राणी वध आदि होता है। वह सब सावद्य है अर्थात् पाप स्वरूप है। जिस वचन से प्राणी वध आदि होते हैं वे सब वचन सावद्य वचन हैं। जैसे कि छेद करो, काटो, भेदन

करो, विदारण करो, मारो, प्राण से वियोग करो, कृषि करो, वाणिज्य करो, चोरी करो आदि वचन सावद्य वचन हैं। ऐसे वचन से प्राणी वधादि होते हैं इसलिये ऐसे वचन का त्याग करना चाहिए।

अप्रिय (निन्दा) वचन रूपी हिंसा

अरतिकरं भीतिकरं खेदकरं वैरशोक-कलहकरम्।
यदपरमपि तापकरं परस्य तत्सर्वमप्रियं ज्ञेयम्।। (98)

Know all that as Apriya, which causes uneasiness, fear, pain, hostility, grief, quarral, or anguish of mind to another person.

व्याख्या-भावानुवाद-निम्नोक्त समस्त वाक्य अप्रिय/अनिष्ट तथा हिंसात्मक है। जो वचन अरतिकर अर्थात् द्वेषकारक है तथा भीतिकर अर्थात् भयकारक है और भी जो खेद को करने वाला वैर को करने वाला, शोक को करने वाला, कलह को करने वाला है ये सब वचन अप्रिय वचन हैं। क्योंकि इन वचनों से दूसरे जीवों को ताप पहुँचता है, कष्ट पहुँचता है।

समीक्षा-केवल अविद्यमान को विद्यमान कहना या विद्यमान को अविद्यमान कहना असत्य वचन नहीं है। परन्तु ऐसा सत्य वचन भी असत्य है जिससे कलह आदि होता है। वचन वस्तुतः सत्य या असत्य नहीं होता है परन्तु सत्य भाव या पवित्र भाव से प्रेरित वचन सत्य है और असत्य भाव से या दूषित भाव से कहा गया वचन असत्य है। कुछ लोग कलह आदि करने के भाव से या दूसरों को अपमानित करने के भाव से वचन बोलते हैं और कहते फिरते हैं कि ''मैं थोड़े झूठ बोला, जो मैंने देखा या सुना वही बोला।'' परन्तु उनका भाव दूषित होने के कारण उनका वचन भी असत्य है। क्योंकि इससे दूसरों को कष्ट पहुँचता है, कलह आदि होते हैं। ऐसा कहने वाले व्यक्ति अवश्य कुटिल, मायाचारी या झगड़ालू होते हैं। इनका काम शकुनि या मंथरा के जैसा होता है। इन्हें लोग कलहप्रिय नारद कह कर पुकारते हैं। महाभारत या रामायण में यथार्थ रूप से कोई मंथरा या शकुनि हो या काल्पनिक पात्र हो परन्तु इनका मनोवैज्ञानिक सद्भाव अवश्य होता है। अभी तो प्रायः परिवार से लेकर समाज और राष्ट्र तक शकुनि एवं मंथरा की ही भरमार है। ऐसे लोग कारण या अकारण से दूसरों को लड़ाकर, ताली बजाकर, बिना बाजे से ही नाचते रहते हैं। दूसरों को बिना लड़ाये

इनका भोजन ही नहीं पचता है। अनेक लोग आराधना स्थल में जायेंगे, व्रत, उपवास करेंगे परन्तु कुत्तों के जैसे एक-दूसरे से गुर्रायेंगे, भौकेंगे या काटेंगे। एक-दूसरे से मिलते ही बाजार हो या रास्ता या धर्मस्थल एक-दूसरे की निन्दा, चुगली करने में नहीं चूकेंगे। परन्तु आचार्यश्री ने इस श्लोक में कहा है जो ऐसे वचन बोलते हैं वे बिना द्रव्य हिंसा किये भी हिंसक ही हैं।

झूठ वचन में हिंसा होती

सर्वस्मिन्नप्यास्मिन्, प्रमत्त योगैक हेतु कथनं यत्।
अनृत वचनेऽपि तस्मान्नियतं हिंसा समवतरति।। (99)

Pramatta Yoga, the one (Chief) cause (of Himsa) is present in all these (speeches) here. Therefore Himsa comes in, certainly in falsehood also.

व्याख्या-भावानुवाद-उपर्युक्त समस्त कथन से सिद्ध होता है कि समस्त अनृत वचन में प्रमत्त योग रूप प्राण व्यपरोपणात्मक हिंसा होने से समस्त असत्य वचन में हिंसा का अवतरण होता है।

अप्रमत्त परिणाम में हिंसा नहीं

हेतौ प्रमत्त योगे, निर्दिष्टे सकल वितथ-वचनानाम्।
हेयाऽनुष्ठानादेः अनुवदनं भवति नासत्यम्।। (100)

Pramatta Yoga having been stated to be the cause of all false speech a sermon preaching the renouncement (of vices) and the performance of religious duties, would not be a falsehood, (even it if should be distasteful, or cause mental pain of the listener).

व्याख्या-भावानुवाद-प्रमत्त योग समस्त असत्य वचन के लिए कारण होने से हेय अनुष्ठान हिताहित का कथन करने पर असत्य नहीं होता है। यथा-मार्ग भ्रष्ट शिष्य को गुरु कठोर अनुशासनात्मक वचन बोलते हैं तथापि यह वचन असत्य नहीं है, हिंसात्मक नहीं है क्योंकि इसमें गुरु का भाव रहता है कि शिष्य कुमार्ग से हटकर सुमार्ग पर चले। ऐसी परिस्थिति में गुरु के भाव में प्रमत्त अथवा हिंसात्मक परिणाम न होकर शुभ परिणाम होता है। इसलिए ऐसे हितकर परन्तु कठोर वचन भी अहिंसात्मक

वचन ही हैं।

न भवति धर्मः श्रोतुः सर्वस्यैकान्ततो हित श्रवणात्।

ब्रुवतोऽनुग्रह बुध्या वक्तुस्त्वेकान्ततो भवति।।

उपदेश सुनने वाले सभी श्रोताओं को पुण्य नहीं होता है। क्योंकि जो उपदेश अच्छी भावना से सुनता है उसे पुण्य होता है। जो शुभ भावना से नहीं सुनता है उसे पुण्य नहीं होता है। परन्तु जो परोपकार की भावना से अनुग्रह बुद्धि से हितकर उपदेश करता है उसे अवश्य ही पुण्य होता है।

धर्मनाशेः क्रियाध्वंसे सुसिद्धांतार्थ विप्लवे।

अपृष्टैरपि वक्तव्यं तत्स्वरूप प्रकाशने।।

जब जहाँ सत्य धर्म का नाश होता है, यथार्थ क्रिया का विध्वंस होता हो समीचीन सिद्धांत अर्थ का अपलाप/विनाश होता हो उस समय सम्यक् धर्म, क्रिया और सिद्धांत के प्रचार-प्रसार सुरक्षा के लिए बिना पूछे भी सज्जनों को बोलना चाहिए। क्योंकि इससे धर्म की रक्षा होती है जिससे स्व-पर, राष्ट्र, विश्व की सुरक्षा समृद्धि होती है।

व्यर्थ झूठ छोड़ो

भोगोपभोग-साधन-मात्रं सावद्यमक्षमा मोक्तुम्।

ये तेऽपि शेषमनृतं समस्तमपि नित्यमेव मुंचन्तु।। (101)

Those who are not able to give up such savadya untruth, as is unaviodable in arranging for articles of use, should renounce all the other untruth, for ever.

व्याख्या-भावानुवाद-भोगोपभोग साधन को जुटाने में जो सदोष वचन का त्याग करने में अक्षम हैं वे भी अन्य समस्त झूठ वचन को नित्य त्याग करें। जिस वस्तु का पुरुष एक बार सेवन करता है उसको भोग कहते हैं। यथा भोजन, पानी आदि। जिस वस्तु का पुनः-पुनः सेवन किया जाता है उसे उपभोग कहते हैं। यथा-स्त्री, वस्त्र, अलंकार आदि। ऐसे जो भोगोपभोग के लिए यत्किंचित् झूठ बोलना पड़ता है उसको छोड़कर अनावश्यक अन्य समस्त सावद्य वचन को छोड़ना चाहिए।

ज्ञानावरण और दर्शनावरण के आस्रव

तत्प्रदोषनिह्नवमात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञानदर्शनावरणयोः। (10)

1. प्रदोष Depreciation of the learned scriptures.

2. निह्नव Concealment of knowledge.

3. मात्सर्य Envy, Jealousy. Refusal to impart knowledge out of envy.

4. अन्तराय Obstruction. Hindering the progress of knowledge.

5. आसादना Denying the truth proclaimed by another by body and speech.

6. उपघात Refuting the truth, although it is known to be such.

ज्ञान और दर्शन के विषय में प्रदोष, निह्नव, मात्सर्य, अन्तराय, आसादना और उपघात ये ज्ञानावरण और दर्शनावरण के आस्रव हैं।

1. प्रदोष-किसी के ज्ञानकीर्तन (महिमा सुनने) के अनन्तर मुख से कुछ न कहकर अंतरंग में पिशुनभाव होना, ताप होना प्रदोष है। मोक्ष की प्राप्ति के साधनभूत मति, श्रुत आदि पाँच ज्ञानों की वा ज्ञान के धारी की प्रशंसा करने पर वा उसकी प्रशंसा सुनने पर मुख से कुछ नहीं कहकर के मानसिक परिणामों में पैशून्य होता है वा अंतकरण में उसके प्रति जो ईर्ष्या का भाव होता है, वह प्रदोष कहलाता है।

2. निह्नव-दूसरे के अभिसन्धान से ज्ञान का व्यपलाप करना निन्हव है। यत् किञ्चित परनिमित्त को लेकर किसी बहाने से किसी बात को जानने पर भी मैं इस बात को नहीं जानता हूँ, पुस्तक आदि के होने पर भी 'मेरे पास पुस्तक आदि नहीं है' इस प्रकार ज्ञान को छिपाना ज्ञान का व्यपलपन करना, ज्ञान के विषय में वञ्चन करना निह्नव है।

3. मात्सर्य-देय ज्ञान को भी योग्य पात्र के लिए नहीं देना मात्सर्य है। किसी कारण से आत्मा के द्वारा भावित, देने योग्य ज्ञान को भी योग्य पात्र के लिए नहीं देना मात्सर्य है।

4. अन्तराय-ज्ञान का व्यवच्छेद करना अन्तराय है। कलुषता के कारण ज्ञान का व्यवछेद करना, कलुषित भावों के वशीभूत होकर ज्ञान के साथ पुस्तक आदि का

व्यवच्छेद करना, नाश करना, किसी के ज्ञान में विघ्न डालना अन्तराय है।

5. आसादना–वचन और काय से वर्जन करना आसादना है। दूसरे के द्वारा प्रकाशित ज्ञान का काय एवं वचन से वर्जन (गुण-कीर्तन, विनय आदि नहीं करना) आसादना है।

6. उपघात–प्रशस्त ज्ञान में दूषण लगाना उपघात है। स्वकीय बुद्धि और हृदय की कलुषता के कारण प्रशस्त ज्ञान भी अप्रशस्त, युक्त भी अयुक्त प्रतीत होता है अतः समीचीन ज्ञान में भी दोषों का उद्भावन करना, झूठा दोषारोपण करना उपघात कहलाता है, उसको उपघात जानना चाहिये।

आसादना और उपघात में एकत्व नहीं है क्योंकि आसादना में विद्यमान ज्ञान का विनय-प्रकाशन, गुणकीर्तन आदि न करके अनादर किया जाता है और उपघात में ज्ञान को अज्ञान कहकर ज्ञान का ही नाश किया जाता है अथवा ज्ञान के नाश करने का अभिप्राय रहता है; अतः आसादना और उपघात में भेद स्पष्ट है।

'तत्' शब्द से ज्ञान-दर्शन ग्रहण किये जाते हैं। 'तत्' शब्द से ज्ञान-दर्शन के प्रति निर्देश किया गया है। अर्थात् ज्ञान और दर्शन के प्रति प्रदोष, निह्नव, मात्सर्य, अन्तराय, आसादना और उपघात, ज्ञानावरण और दर्शनावरण कर्म के आस्रव के कारण हैं।

प्रदोषादि के विषयभेद से भेद सिद्ध होने से ज्ञानावरण और दर्शनावरण के आस्रव पृथक्-पृथक् हैं। ज्ञानावरण और दर्शनावरण के आस्रव भिन्न-भिन्न समझने चाहिये, क्योंकि विषय-भेद से प्रदोषादि भिन्न हो जाते हैं। ज्ञान विषयक प्रदोषादि ज्ञानावरण के और दर्शन विषयक प्रदोषादि दर्शनावरण के आस्रव के कारण होते हैं। आचार्य और उपाध्याय के प्रतिकूल चलना, अकाल में अध्ययन करना, अश्रद्धा, शास्त्राभ्यास में आलस्य करना, अनादर से अर्थ का श्रवण, तीर्थोपरोध (दिव्य ध्वनि) के काल में स्वयं व्याख्यान करने लगना, स्वकीय बहुश्रुत का गर्व करना, मिथ्योपदेश देना, बहुश्रुतवान् का अपमान वा अनादर करना, अपने पक्ष का दुराग्रह, स्वपक्ष के दुराग्रह के कारण असंबद्ध प्रलाप करना, सूत्र विरुद्ध बोलना, असिद्ध से ज्ञानाधिगम (असिद्ध से ज्ञान-प्राप्ति) शास्त्र विक्रय और हिंसादि कार्य ज्ञानावरण कर्म के आस्रव के कारण हैं। दर्शन मात्सर्य, दर्शनान्तराय, आँखें फोड़ना, इन्द्रियों के विपरीत प्रवृत्ति,

अपनी दृष्टि का गर्व, बहुत देर तक सोये रहना, दिन में सोना, आलस्य, नास्तिक्य, सम्यग्दृष्टियों में दूषण लगाना, कुतीर्थ प्रशंसा, जीव हिंसा और मुनिगणों के प्रति ग्लानि के भाव आदि भी दर्शनावरण कर्म के आस्रव के कारण हैं।

महाभारत में कहा भी हैं-

ये पुरा मनुजा देवि ज्ञानदर्पसमन्विताः।
श्लाघमानाश्च तत् प्राप्य ज्ञानाहङ्कारमोहिताः।।
वदन्ति ये परान् नित्यं ज्ञानाधिक्येनदर्पिताः।
ज्ञानादसूयां कुर्वन्ति न सहन्ते हि चापरान्।।
तादृशा मरणं प्राप्ताः पुनर्जन्मनि शोभने।
मानुष्यं सुचिरात् प्राप्य तत्र बोधविवर्जिताः।।
भवन्ति सततं देवि यतत्रो हीनमेधसः।।

जो मनुष्य ज्ञान के घमण्ड में आकर अपनी झूठी प्रशंसा करते हैं और ज्ञान पाकर अहंकार से मोहित हो दूसरों पर आक्षेप करते हैं, जिन्हें सदा अपने अधिक ज्ञान का गर्व रहता है, जो ज्ञान से दूसरों के दोष प्रकट किया करते हैं, और दूसरे ज्ञानियों को नहीं सहन कर पाते हैं, शोभने! ऐसे मनुष्य मृत्यु के पश्चात् पुनर्जन्म लेने पर चिरकाल के बाद मनुष्य योनि पाते हैं। देवि! उस जन्म में वे सदा यत्न करने पर भी बोधहीन और बुद्धि रहित होते हैं।

दर्शनमोहनीय का आस्रव

केवलिश्रुतसंघधर्मदेवावर्णवादो दर्शनमोहस्य। (13)

The inflow of दर्शनमोहनीय right-belief-deluding-karmic matter is caused by अवर्णवाद defeming the Ommiscient Lord अरहत् i.e. केवली, the scriptures श्रुत, the saint's brother hoods संघ, the true relgien धर्म and the celestial beings देवा e.g. saying that the celestial beings take meant or wine, etc. and to offer these as sacrifices to them.

केवली श्रुत, संघ, धर्म और देव इनका अवर्णवाद दर्शनमोहनीय कर्म का आस्रव है।

जिनका ज्ञान आवरण रहित है वे केवली कहलाते हैं। अतिशय बुद्धि वाले गणधर देव उनके उपदेशों का स्मरण करके जो ग्रंथों की रचना करते हैं वह श्रुत कहलाता है। रत्नत्रय से युक्त श्रमणों का समुदाय संघ कहलाता है। सर्वज्ञ-द्वारा प्रतिपादित आगम में उपदिष्ट अहिंसा ही धर्म है। चार निकाय वाले देवों का कथन पहले कर आये हैं। गुण वाले बड़े पुरुषों में जो दोष नहीं है उनका उनमें उद्भावन करना अवर्णवाद है। इन केवली आदि के विषय में किया गया अवर्णवाद दर्शनमोहनीय के आस्रव का कारण है। यथा केवली कवलाहार से जीते हैं इत्यादि रूप से कथन करना केवलियों का अवर्णवाद है। शास्त्रों में माँस भक्षण आदि को निर्दोष कहा है इत्यादि रूप से कथन करना श्रुत का अवर्णवाद है। ये शूद्र हैं, अशुचि हैं, इत्यादि रूप से अपवाद करना संघ का अवर्णवाद है। जिन देव के द्वारा उपदिष्ट धर्म में कोई सार नहीं जो इसका सेवन करते हैं वे असुर होंगे इस प्रकार कथन करना धर्म का अवर्णवाद है। देव सुरा और माँस आदि का सेवन करते हैं इस प्रकार का कथन देवों का अवर्णवाद है।

दिग्विजयी व कर्मविजयी चक्रवर्ती शांतिनाथ भगवान्

विधाय रक्षां परतः प्रजानाम्, राजा चिरं योऽप्रति-मप्रतापः।
व्यधात् पुरस्तात् स्वत एव शान्ति-र्मुनिर्दयामूर्तिरिवाघशान्तिम्।। (1)

अन्वयार्थ-(यः) जो शांतिनाथ भगवान् (प्रजानां) प्रजा की (परतः) शत्रुओं से (रक्षां-विधाय) रक्षा करके (चिरं) चिरकाल तक (अप्रतिम प्रताप) अतुल प्रतापी (राजा) राजा हुए (पुरस्तात्) पश्चात् (स्वत एव) स्वयं ही बिना किसी के संबोधन या उपदेश को पा, स्वयंभू भगवान् (मुनिः शांतिः) शांति को प्राप्त कर मुनि हो जिन्होंने (दयामूर्तिःइव) दया की मूर्ति की तरह (अघशांतिं) घातिया कर्मरूप पापों की शांति (व्यधात्) की।

चक्रेण यः शत्रुभयंकरेण, जित्वा नृपः सर्वनरेन्द्रचक्रम्।
समाधिचक्रेण पुनर्जिगाय, महोदयो दुर्जय-मोहचक्रम्।। (2)

अन्वयार्थ-(महोदयः) गर्भावतरण आदि पंचकल्याणक रूप अभ्युदयों से सहित होने से महोदय थे ऐसे (यः) जो शांतिनाथ स्वामी गृहस्थावस्था में (शत्रुभयंकरेण)

शत्रु वर्ग में भय को उत्पन्न करने वाले (चक्रेण) चक्र के द्वारा (सर्वनरेन्द्र चक्रं) समस्त राजाओं के समूह को (जित्वा) जीतकर (नृपः) पंचम चक्रवर्ती हुए। (पुनः) पश्चात् मुनि अवस्था में वीतराग अवस्था को प्राप्त होकर (समाधिचक्रेण) शुक्लध्यान रूपी चक्र के द्वारा जिन्होंने (दुर्जयमोहचक्रं) अत्यंत कठिनाई से जीतने योग्य ऐसे दर्शन मोह व चारित्र मोहकी मूल उत्तर प्रकृतियों के समूह को (जिगाय) जीता था। (ऐसे घातिया कर्मों के क्षय करने वाले शांतिनाथ जिनेन्द्र की स्तुति की गई है।)

राजश्रिया राजसु राजसिंहो, रराज यो राजसु भोगतन्त्रः।
आर्हन्त्य-लक्ष्म्या पुन-रात्मतन्त्रो, देवासुरोदार-सभेरराज।। (3)

अन्वयार्थ-(राजसिंहः) राजाओं में श्रेष्ठ चक्रवर्ती (राजसुभोग तंत्रः) राजाओं के उत्तम भोग के अधीन (यः) जो शांतिनाथ जिनेन्द्र (गृहस्थावस्था में) (राजसु राजश्रिया) अनेक राजाओं के मध्य चक्रवर्ती की संपदा नौ निधि चौदह रत्न आदि से (रराज) सुशोभित थे (पुनः) पश्चात् वीतरागी संयम अवस्था में (आत्मतंत्रः) आत्मा के अधीन होते हुए (देव असुर उदार सभे) देव, असुर आदि की विशाल सभा में अर्थात् समवशरण सभा में (आर्हन्त्यलक्ष्म्या) अर्हंत पद के योग्य समवशरण, अष्ट प्रतिहार्य आदिबहिरंग तथा अनंत चतुष्टय रूप अंतरंग विभूति से (रराज) सुशोभित हुए थे।

यस्मिन्नभूद्राजनि राजचक्रं, मुनौ दया-दीधिति-धर्म-चक्रम्।
पूज्ये मुहुः प्राञ्जलि देवचक्रं, ध्यानोन्मुखे ध्वंसि कृतान्त-चक्रम्।। (4)

अन्वयार्थ-(यस्मिन्) जिन शांतिनाथ जिनेन्द्र के (राजनि) चक्रवर्ती पद पर आसीन होने पर (राजचक्रं) राजाओं का समूह (प्राञ्जलि अभूत्) अञ्जलीबद्ध हुआ था, (मुनौ) उन्हीं शांतिनाथ भगवान् के मुनि होने पर (दयादीधितिधर्मचक्रम्) दयारूपी किरणों से युक्त उत्तम क्षमादि दस धर्मों अथवा रत्नत्रय धर्मों का समूह (प्राञ्जलि) उनके आधीन हुआ (पूज्ये) उन्हीं शांतिनाथ भगवान् अर्हंतदेव रूप में पूज्य होने पर समवशरण में विराजमान हो भव्यात्माओं के लिए हितोपदेश देने पर (देवचक्रं) देव समूह अर्थात् भवनवासी, व्यंतरवासी, ज्योतिषी व कल्पवासी चतुर्निकाय देवों का समूह (मुहुः) बार-बार (प्राञ्जलि) अञ्जलिबद्ध हुआ था तथा (ध्यानोन्मुखे) शुक्लध्यान के सम्मुख होने पर (ध्वंसि कृतान्तचक्रं) क्षय को प्राप्त हुआ कर्मों का समूह

(प्राञ्जलि) अञ्जलिबद्ध था मानो शरण की भिक्षा माँग रहा था।

स्वदोष-शान्त्या-विहितात्म-शान्तिः शान्ते-र्विधाताशरणं गतानाम्।
भूयाद् भव-क्लेशभयोपशान्त्यै, शान्ति-र्जिनो मे भगवान् शरण्यः।। (5)

अन्वयार्थ-(स्वदोषशान्त्या) अपने घातिया कर्म दोषों की शांति अर्थात् क्षय से (विहितात्मशान्तिः) प्राप्त किया है आत्म शांति को जिन्होंने, जो (शरणं गतानां) शरण में आये हुए भव्य जीवों को (शान्तेर्विधाता) शांति को करने वाले हैं, जो (जिनः) घातिया कर्म रूप शत्रुओं को जीतने से जिन हैं जो (भगवान्) भग=ज्ञान वान् युक्त अर्थात् जो केवलज्ञान से युक्त है (शरण्यः) संसार के दुःखों से अरक्षित जीवों को शरण देने में निपुण हैं वे (शान्तिः) शांतिनाथ/तीर्थंकर जिनेन्द्र (मे) मेरे (भवक्लेशभयोपशान्त्यै) संसार के परिभ्रमण, जन्म-मरण रूप क्लेशों और भयों की पूर्ण शांति के लिए (भूयात्) होवें।

अनंत की आत्मकथा

(चाल : पूछ मेरा क्या नाम रे.....)

अनंत मेरा नाम है, अनंत आयाम है।
सर्वज्ञ ज्ञानगम्य हूँ, अन्य से नहीं गम्य है।।

मैं हूँ व्याप्त हर द्रव्य में, गुण व पर्याय रूप में।
हर द्रव्य अतः अनेकांत, अनेकांतमय विश्व है।।

संख्यात परे असंख्यात है, इससे परे मैं हूँ।
जघन्य-मध्यम-उत्कृष्टमय, मैं त्रिविध रूप हूँ।।

उत्तर-उत्तर मेरे आयाम (तो), अनंत वृद्धि होते है।
जघन्य से मध्यम अनंत गुणा (वर्ग), इससे अनंत गुणा (वर्ग) उत्कृष्ट है।।

केवलज्ञान मम अंतिम भेद, अवधि-मनःपर्यय असंख्य है।
असंख्यातमय मति-श्रुतज्ञान, अतः मैं सर्वज्ञ गम्य हूँ।।

आकाश प्रदेश होते अनंत, व्यवहार काल (भी) होते अनंत।
जीव द्रव्य भी होते अनंत, पुद्गल राशि भी अनंतानंत।।

आस्रव होते कर्म परमाणु अनंत, बंध होते हैं कर्म अनंत।
निर्जरा (में) भी होते कर्म अनंत, मोक्ष होते हैं कर्म अनंत।।

संसारी जीव होते अनंत, मुक्त जीव भी होते अनंत।
एक निगोदिया देह में होते, अनंतानंत निगोदिया जीव।।

अकृत्रिम सभी होते अनंत, अतः वे होते अनादि अनंत।
धन-ऋण विभक्त-गुणा से/(में), कभी न होता मेरा अंत।।

पाँचों इन्द्रियों के विषय सभी, स्पर्श-रस-गंध-वर्ण-शब्द।
अनंतानंत परमाणु स्कंध, संख्य-असंख्य अणु स्कंध/(अज्ञात)।।

मेरे बिना न द्रव्य संभव, तथाहि गुण व पर्याय।
तथाहि विश्व प्रति विश्व, संसार तथाहि मोक्ष।।

मुझे न जानते वैज्ञानिक, दार्शनिक से गणधर।
ऐसा है मेरा अनंत रूप, सूरी 'कनक' ने लिखा संक्षेप।।

सीपुर, दिनांक 22.05.2017, रात्रि 9.37

संदर्भ-

द्रव्य क्षेत्रादि के प्रमाण

1.	**द्रव्य क्षेत्रादि के प्रमाणों का निर्देश**	
(क)	**संख्या की अपेक्षा द्रव्य प्रमाण निर्देश**	(ध.5/प्र./22)
1.	एक	1
2.	दस	10
3.	शत	100
4.	सहस्त्र	1000
5.	दस सहस्त्र	10000
6.	शत सहस्त्र	100000
7.	दस शत सहस्त्र	1000000
8.	कोटि	10000000

9. पकोटि $(10000000)^2$
10. कोटिप्पकोटि $(10000000)^3$
11. नहुत $(10000000)^4$
12. निन्नहुत $(10000000)^5$
13. अखोभिनी $(10000000)^6$
14. बिन्दु $(10000000)^7$
15. अब्बुद $(10000000)^8$
16. निरब्बुद $(10000000)^9$
17. अहह $(10000000)^{10}$
18. अबब $(10000000)^{11}$
19. अटट $(10000000)^{12}$
20. सोगन्धिक $(10000000)^{13}$
21. उप्पल $(10000000)^{14}$
22. कुमुद $(10000000)^{15}$
23. पुंडरीक $(10000000)^{16}$
24. पदुम $(10000000)^{17}$
25. कथान $(10000000)^{18}$
26. महाकथान $(10000000)^{19}$
27. असंख्येय $(10000000)^{20}$
28. पणट्ठी=$(256)^2$=65536
29. बादाल=पणट्ठी^{2}
30. एकट्ठी=बादाल^2

(ति.प./4/309-311; (रा.वा./3/38/5/306/17); (त्रि.सा. 28-51))

1. जघन्य संख्यात=2
2. उत्कृष्ट संख्यात=जघन्य परीतासंख्यात-1
3. मध्यम संख्यात=(जघन्य+1) से (उत्कृष्ट-1) तक

नोट : आगम में जहाँ संख्यात कहा जाता है वहाँ तीसरा विकल्प समझना चाहिए।

4. जघन्य परीतासंख्यात=अनवस्थित कुण्ड के सरसों के परिमाण जघन्य परीतासंख्यात है।
5. उत्कृष्ट परीतासंख्यात=जघन्य युक्तासंख्यात-1
6. मध्यम परीतासंख्यात=(जघन्य+1) से (उत्कृष्ट-1) तक
7. जघन्य युक्तासंख्यात=($क^{क}$) ($क^{क}$) (यदि जघन्य परीतासंख्यात=क)
8. उत्कृष्ट युक्तासंख्यात=जघन्य असंख्यातासंख्या-1
9. मध्यम युक्तासंख्यात=(जघन्य+1) से (उत्कृष्ट-1) तक
10. जघन्य असंख्यातासंख्यात=(जघन्य युक्ता)$^{\text{जघन्य युक्ता}}$
11. उत्कृष्ट असंख्याता.=जघन्य परीतानन्त-1
12. मध्यम असंख्याता.=(जघन्य+1) से (उत्कृष्ट-1) तक
13. जघन्य परीतानन्त=जघन्य असंख्यातासंख्यात को तीन बार वर्गित संवर्गित करके उसमें द्रव्यों के प्रदेशों आदि रूप से कुछ राशियाँ जोड़ना।
14. उत्कृष्ट परीतानन्त=जघन्य युक्तानन्त-1
15. मध्यम परीतानन्त=(जघन्य+1) से (उत्कृष्ट-1) तक
16. जघन्य युक्तानन्त=जघन्य परीतानन्त की दो बार वर्गित संवर्गित राशि
17. उन्कृष्ट युक्तानन्त=जघन्य अनन्तानन्त-1
18. मध्यम युक्तानन्त=(जघन्य+1) से (उत्कृष्ट-1) तक
19. जघन्य अनन्तानन्त=(जघन्य युक्ता)$^{\text{(जघन्य युक्ता)}}$
20. उत्कृष्ट अनन्तानन्त=जघन्य अनन्तानन्त को तीन बार वर्गित संवर्गित करके उसमें कुछ राशि में मिलान।
21. मध्यम अनन्तानन्त=(जघन्य+1) से (उत्कृष्ट-1) तक

(ग) क्षेत्र के प्रमाण

द्रव्य के अविभागी अंश=परमाणु
अनंतानंत परमा.=अवसन्नासन्न
8 अवसन्नासन्न=1 सन्नासन्न
8 सन्नासन्न=1 त्रुटरेणु
(व्यवहाराणु)
8 जूं=1 यव (जौ)
8 यव=1 उत्सेधांगुल
500 उ.अंगुल=1 प्रमाणांगुल
आत्मांगुल=भरत ऐरावत
(ति.प./1/109/13) क्षेत्र के चक्रवर्ती का अंगुल

8 त्रुटरेणु=1 त्रसरेणु (त्रसजीव के पाँव से उड़ने वाला अणु)

8 त्रसरेणु=1 रथरेणु (रथ से उड़ने वाली धूल का अणु)

8 रथरेणु=उत्तम भोगभूमिज का बालाग्र

8 उ.भो.भू.बा.=मध्यम भो.भू.बा.

8 म.भो.भू.बा.=जघन्य भो.भू.बा.

8 ज.भो.भू.बा.=कर्मभूमि बालाग्र

8 क.भू. बालाग्र=1 लिक्षा (लीख)

8 लीख=1 जूं

6 विवक्षित अंगुल=1 विवक्षित पाद

2 वि. पाद=1 वि. वितस्ति

2 वि. वितस्ति=1 वि. हस्त

2 वि. हस्त=1 वि. किष्कु

2 किष्कु=1 दंड, युग, धनुष, मूसल या नाली, नाड़ी

2000 दंड

या, (धनुष)=1 कोश

4 कोश=1 योजन

नोटः उत्सेधांगुल से मानव योजन या व्यवहार योजन होता है और प्रमाणांगुल से प्रमाण योजन।

(ति.प./1/131-132); (रा.वा./3/38/7/208/10, 23)

500 मानव योजन	=1 प्रमाण योजन (महायोजन या दिव्य योजन) 80 लाख गज
	=4545.45 मील
1 योजन	=768000 अंगुल
1 प्रमाण योजन गोल व गहरे कुण्ड के आश्रय से उत्पन्न	=1 अद्धापल्य
(1 अद्धापल्य या प्रमाण-योजन^3)$^{छे}$	=1 सूच्यांगुल
जबकि छे	=अद्धापल्य की (गो.जी./जी.प्र./पृ.280/4) अर्द्धछेद राशि या $\log_2$ पल्य
1 सूच्यंगुल2	=1 प्रतरांगुल
1 सूच्यंगुल3	=1 घनांगुल
(1 घनांगुल)$^{अद्धापल्य+असं.}$	=जगत्श्रेणी (प्रथम मत)
(असं=असंख्यात)	(ध./3/9, 2, 4/34/1)
(1 घनांगुल$^{छे+असं.}$)	=जगत्श्रेणी (द्वि. मत)
(छे व असं=दे. ऊपर)	=(ध./3/1, 24/34/1)
जगत् श्रेणी÷7	=1 रज्जू (दे. राजू)
(जगत् श्रेणी)	=1 जगत् प्रतर
(जगत् श्रेणी)^3	=जगत्घन या घनलोक
ध./9/4, 1, 2/39/4	=(आवली÷असं.)$^{आवली+असं.}$ (आवली=आवली के समयों प्रमाण आकाश प्रदेश)

तनाव को दूर कर सकता है ध्यान

ध्यान से ब्रेन में गामा क्रियाएँ बढ़ जाती है और स्ट्रेस हार्मोंस की रेस्पांस क्षमता घट जाती है जिससे ब्लड प्रेशर नियंत्रित रहता है। ब्रिटिश मेडिकल जर्नल ने भी इस बात की पुष्टि की है कि ध्यान से व्यक्ति फोकस्ड हो जाता है, तेजी से सूचना ग्रहण करने लगता है। याददाश्त तीव्र हो जाती है और सही निर्णय लेने की क्षमता बढ़ जाती है।

जाने ध्यान के फायदे-ध्यान के जरिये साँस संबंधी संक्रमणों की संभावना घट जाती है। शरीर सुडौल और तेजोमय हो जाता है। ध्यान से मन के समस्त भ्रम दूर हो जाते हैं और एकाग्रचित्तता बढ़ती है। ध्यान से समस्या को समझने और निराकरण की शक्ति मिलती है। ध्यान से ऊर्जा केंद्रित होती है। मन और शरीर में शक्ति का संचार होता है। लक्ष्य को प्राप्त करने की प्रेरणा और क्षमता बढ़ जाती है। मन विचारों का कारखाना है। मन में सतत कल्पना और विचार चलते रहते हैं। इससे मानसिक अशांति पैदा होती है। ध्यान अनावश्यक कल्पना व विचारों से मन को मुक्त कर देता है जिससे तनाव घटता है। ध्यान से विजन पॉवर बढ़ता है तथा निर्णय लेने की क्षमता बढ़ जाती है।

स्कूली छात्रों पर रिसर्च से पता लगा है, ध्यान और एकाग्रता की एक्सरसाइज से कई क्षेत्रों में फायदा

बच्चे पढ़ाई में अव्वल, व्यवहार भी सुधरा

ट्रांसिडेंटल मेडिटेशन और माइंडफुल नैस के बारे में साइंस का यह कहना है

आक्रामकता में कमी-ध्यान के एक कार्यक्रम में हिस्सा लेने वाले चौथी, पाँचवीं क्लास के बच्चों का बर्ताव अपने साथियों के प्रति अच्छा रहा। उन्होंने उदारता दिखाई। वे कम आक्रामक रहे। लोगों ने उन्हें पसंद किया।

मैथ्स में अव्वल-मेडिटेशन करने वाले ग्रुप को अपनी क्लास के अन्य साथियों की तुलना में 15 फीसदी अधिक अंक मिले। एक अन्य स्टडी में ध्यान करने वाले मिडिल स्कूल के 42 फीसदी छात्र गणित के राज्यस्तरीय टेस्ट में बेहतर पाये गये।

मानसिक मजबूती-तीसरी क्लास के बच्चे भी ध्यान की स्थिति में पहुँच सकते हैं। आठ सप्ताह तक एकाग्रता और योग एक्सरसाइज करने के कारण बच्चों में एडीएचडी (अटेंशन डेफिसिट हाइपर एक्टिविटी डिसऑर्डर) मानसिक बीमारी के

लक्षण कम पाये गये। कार्यक्रम खत्म होने के कई माह बाद तक ऐसी स्थिति रही।

आत्म नियंत्रण-एक मिडिल स्कूल में भावातीत ध्यान का प्रोग्राम शुरू होने के तीन वर्ष बाद छात्रों के उपद्रव की घटनाओं में काफी कमी आई। उपद्रवी छात्रों के निलंबन की दर 28 से गिरकर 4 फीसदी रह गई।

टेंशन से बचाव-ब्रिटेन में 12 से 16 वर्ष की आयु के स्कूली बच्चों को मानसिक एकाग्रता के नौ पाठ पढ़ाये गये थे। ये बच्चे उन बच्चों की तुलना में तनाव मुक्त रहे जिन्होंने कार्यक्रम में हिस्सा नहीं लिया था। उनमें मानसिक अवसाद की स्थिति भी नहीं पाई गई।

बेहतर फोकस-अमेरिका के रिचमंड, कैलिफोर्निया में एक प्रायमरी स्कूल के कुछ शिक्षकों ने मानसिक एकाग्रता के कार्यक्रम में हिस्सा लिया। ऐसे शिक्षकों का फोकस उन शिक्षकों से अच्छा रहा जिन्होंने कार्यक्रम में भागीदारी नहीं की थी। उनमें आत्म नियंत्रण और बच्चों से व्यवहार की स्थिति भ्री बेहतर पाई गई।

चंद मिनट योगा बड़ा फायदा होगा

योग हमारे नर्वस सिस्टम को नियंत्रित करके हमें शारीरिक व मानसिक परेशानियों से बचाता है। बोस्टन यूनिवर्सिटी के स्कूल ऑफ मेडिसिन के एक शोधकर्त्ता समूह का कहना है कि हमारी खोपड़ी (ब्रेन) के बेस से निकलने वाली सबसे बड़ी कॉर्नियल नर्व वेगस का काम है श्वसन, पाचन और नर्वस प्रणाली को नियंत्रित करना। यह एयर ट्रैफिक कंट्रोलर की तरह काम करती है। योग वेग नर्व की टोनिंग करके हमारे तन व मन को नई ऊर्जा, उमंग व उत्साह प्रदान करता है। योग से होने वाले शारीरिक, मानसिक फायदे हैं।

योग से होने वाले फायदे-योग शरीर को लचीला बनाता है, जो मुद्रा शुरू में असंभव लगती है, वह अभ्यास के बाद संभव हो जाती है। लचीलेपन के कारण हमें दर्द व पीड़ा से राहत मिलती है। माँसपेशियाँ मजबूत होने के साथ इतनी सक्षम भी होनी चाहिए कि हमें गठिया दर्द व बैक पेन से बचाये। योग माँसपेशियों को फ्लेक्सीबल व मजबूत बनाता है। योग करते समय शरीर के सारे जोड़ पूरी क्षमता से घूमते हैं। इससे कम उपयोग में आने वाले कार्टिलेज भी फैलने या सिकुड़ने से बच जाती है।

कैलिफोर्निया स्टेट यूनिवर्सिटी के एक अध्ययन के अनुसार योग स्ट्रेस हार्मोन का स्तर घटाता है और हड्डियों में कैल्शियम की जरूरी मात्रा बनाये रखता है।

योग रक्त प्रवाह बढ़ाता है। योग करने से सेल्स को ज्यादा ऑक्सीजन मिलती है। योग हिमोग्लोबिन व रेड ब्लड सेल्स का स्तर भी बढ़ाता है। योग ब्लड क्लॉट्स भी घटाता है, यानी हृदयघात व स्ट्रोक से बचाता है। योग करने से माँसपेशियाँ खिंचती हैं। इससे शरीर के अंगों में लिम्फ ड्रेनेज बढ़ जाता है। इससे शरीर की इंफेक्शन से लड़ने की क्षमता बढ़ती है। कैंसर कोशिकाएँ नष्ट होती हैं। एक ताजा अध्ययन का निष्कर्ष है कि प्राणायाम करने वाले ज्यादा देर कसरत व मेहनत कर सकते हैं।

ब्रिटिश जर्नल लेनसेट के अनुसार तीन माह शवासन करने वाले व्यक्ति का ब्लड प्रेशर नियंत्रित हो जाता है। योग कार्टिसॉल स्तर घटाता है। इससे हम डिप्रेशन, ऑस्टियोपोरोसिस व हाई बीपी जैसी समस्या से बच जाते हैं। योग कैलोरी बर्न करता है। इससे इटिंग व वेट प्रॉब्लम से मुक्ति मिलती है। योग हमें 'केयरफूल ईटर' बनाता है। योग बेड कोलेस्ट्रॉल घटाता है और गुड कोलेस्ट्रॉल बढ़ाता है। मधुमेह रोगी नियमित योग करके हृदय व किडनी रोग तथा अंधत्व का खतरा घटा सकते हैं। योग एकाग्रता बढ़ाता है। याददाश्त व आईक्यू स्कोर सुधारता है। धैर्य व सहनशीलता बढ़ाता है। योग के कई आसन जैसे प्राणायाम हमारी रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाते हैं। योग फेफड़ों की कार्य प्रणाली सुधारता है। उनके साँस लेने व छोड़ने की क्षमता बढ़ाता है। योग कब्ज मिटाता है। योग में अंगों की ट्विस्टिंग के कारण वेस्ट का निकास आसान हो जाता है। योग पेट के कैंसर का खतरा घटाता है। चिकित्सा विज्ञानी कहते हैं कि 'ॐ' के उच्चारण से सायनस खुल जाते हैं। नाक के अंदरूनी हिस्से की सफाई होती है।

आम सवाल खास जवाब

क्या हमारा दिमाग एक साथ कई काम कर सकता है?

मल्टी-टास्किंग अपने आप में कुछ विरोधाभासी है। एक रिसर्च से पता चला है कि दिमाग को एक वक्त में दो से ज्यादा काम करने में काफी संघर्ष करना पड़ता है।

पिछले साल प्रकाशित हुई एक अमेरिकी रिसर्च के मुताबिक जो लोग यह मानते या सोचते हैं कि वे एक समय पर ईमेल करने, संगीत सुनने और बातचीत करने जैसे काम करने में माहिर हैं, वे खुद को बेवकूफ बना रहे हैं। अगर इतनी गतिविधियाँ एक साथ होगी, तो दिमाग सही तरह से काम नहीं करेगा। 2011 की शुरुआत में फ्रांसीसी वैज्ञानिक की स्टडी में कुछ लोगों के दिमाग के स्कैन को शामिल किया गया, जिससे संकेत मिलता है कि इस सवाल का जवाब दिमाग के ढाँचे में हो सकता है। जब दिमाग को एक साथ दो काम करने के लिए कहा गया, तो उसके दो हिस्सों ने बराबर-बराबर लोड बाँट लिया। लेकिन, जैसे ही एक साथ उसे तीन काम करने के लिए तैयार करने की कोशिश हुई, तो दिमाग इन कामों को सही तरीके से विभाजित करने में नाकाम रहा। जाहिर है, इसका नतीजा भी मनमाफिक नहीं निकला और कोई काम बढ़िया तरीके से नहीं हुआ।

ध्यान की आत्मकथा

(अशुभ-शुभ व शुद्ध ध्यान-गुणस्थानों में ध्यान)

(चाल : पूछ मेरा क्या नाम रे.....)

ध्यान मेरा नाम है, एकाग्रचित्त काम है।
अशुभ-शुभ-शुद्ध रूप में, तीन प्रमुख भेद है।।

एकेन्द्रिय से सर्वज्ञ तक, मेरा अस्तित्व होता है।
मेरा भेद-प्रभेद संख्यात से, असंख्यात लोक प्रमाण है।।

मिथ्यादृष्टि को होता मेरा अशुभ रूप, जो आर्त्त-रौद्र स्वरूप है।
एकेन्द्रिय जीव से पंचेन्द्रिय, चारों गति के जीव में होता है।।

आर्त्त-रौद्र रूप मेरा अशुभ रूप, उक्त जीवों में अवश्य होता है।
आर्त्त रूप में मेरा अवस्थान, छठें गुणस्थान तक होता है।।

रौद्र रूप में मेरा अवस्थान, पंचम गुणस्थान तक होता है।
बिना मन के भी असंज्ञी जीव तक, आर्त्त-रौद्र तक होता है।।

इष्ट वियोग-अनिष्ट संयोग, पीड़ा चिंतन-निदान बंध।

इस संबंधी जो होता दुःखमय, चिंतन वह होता आर्त्त ध्यान।।

हिंसानंदी-मृषानंदी-चौर्यानंदी व परिग्रहानंदी रौद्र ध्यान।
क्रूर व अयोग्य काम में जो सतत चिंतन वह होता है रौद्र ध्यान।।

शुभ मेरा धर्म ध्यान आज्ञा-अपाय-विपाक-संस्थान विचय।
चतुर्थ गुणस्थान से लेकर, सप्तम गुणस्थान तक होता धर्म ध्यान।।

संज्ञी पंचेन्द्रिय चारों गति के, जीव हो सकते है सम्यग्दृष्टि।
संज्ञी पशु-पक्षी व मानव तक, हो सकते पंचम गुणस्थानवर्ती।।

षष्ट-सप्तम गुणस्थान में, होती केवल मनुष्य गति।
सर्वज्ञ की आज्ञा का चिंतन करना होता आज्ञा विचय ध्यान।।

चतुर्गति जीवों के दुःखों का, चिंतन करना होता अपाय विचय।
विपाक विचय में होता कर्मफल भोगने का एकाग्र चिंतन।।
संस्थान विचय में होता विश्व संरचनादि का एकाग्र चिंतन।।

सातिशय सप्तम गुणस्थान से, होता है मेरा शुद्ध रूप।
श्रेष्ठ आत्म ध्यानी चतुर्थ काल के, श्रमण के होता शुक्ल ध्यान।।

पृथक्त्व वितर्क विचार व एकत्व वितर्क अविचार मेरा प्राथमिक रूप।
सूक्ष्म क्रिया प्रतिपाति व्युपरत क्रिया निवर्ति मेरा उत्तर रूप।।

प्रथम शुक्ल ध्यान होता, अपूर्वकरण से क्षीण मोह गुणस्थान तक।
द्वितीय शुक्ल ध्यान होता, उपशांत कषाय व क्षीण कषाय स्थित।।

तृतीय शुक्ल ध्यान होता, सयोगी गुणस्थान स्थित।
चतुर्थ शुक्ल ध्यान होता, अयोगी गुणस्थान स्थित।।

इससे परे होता है सर्व कर्मक्षय स्वरूप परम मोक्ष।
यहाँ न होता है मेरा सद्भाव, यहाँ होता है शुद्ध चिन्मय।।

अशुभ त्याग से मेरा प्रकट होता है शुभ स्वरूप।
शुभ से शुद्ध ध्यान होता, जिससे मिलता है मोक्ष।।

अशुभ से पाप व शुभ से पुण्य तथा शुक्ल से मोक्ष।

अशुभ त्याग बिन न शुभ होता, अतः न शुक्ल व मोक्ष।।

मेरा यह स्वरूप सर्वज्ञ कथित अज्ञानी मोही से न ज्ञात।
'कनक सूरी' ने मेरा वर्णन किया जो आगम में वर्णित।।

सीपुर, दिनांक 20.05.2017, रात्रि 10.5

संदर्भ-

ध्यान के भेद

आर्तरौद्रधर्म्यशुक्लानि। (28)

It is of 4 kinds :

1. **आर्तध्यान**-Painful or meditation, monomania.
2. **रौद्रध्यान**-Wicked concentration on unrighteous gain etc.
3. **धर्मध्यान**-Righteous concentration.
4. **शुक्लध्यान**-Pure concentration i.e. concentration on the soul.

आर्त्त, रौद्र, धर्म्य और शुक्ल से ध्यान के चार भेद हैं।

1. **आर्तध्यान**-ऋतु, दुःख और अर्दन को आर्ति कहते हैं और आर्ति से होने वाला ध्यान आर्तध्यान है।

2. **रौद्रध्यान**-रूलाने वाले को रूद्र या क्रूर कहते हैं, उस रूद्र का कर्म या भाव रौद्रध्यान कहलाता है।

3. **धर्म्यध्यान**-धर्म से युक्त ध्यान धर्म्यध्यान कहलाता है।

4. **शुक्लध्यान**-शुचि गुण के योग से शुक्ल होता है। जैसे-मैल हट जाने से शुचि गुण के योग से वस्त्र शुक्ल कहलाता है, अर्थात् वस्त्र शुचि होकर शुक्ल (श्वेत वर्ण उज्ज्वल) हो जाता है, उसी प्रकार गुणों के साधर्म्य से निर्मल गुण रूप आत्म परिणति भी शुक्ल कहलाती है। ये चारों प्रकार के ध्यान प्रशस्त और अप्रशस्त के भेद से दो प्रकार के है-पाप के कारणभूत ध्यान अप्रशस्त है और कर्म को दहन करने के सामर्थ्य से युक्त ध्यान प्रशस्त कहलाते है; अर्थात् जिससे कर्मों का नाश होता है, वह प्रशस्त ध्यान है। आदि के दो ध्यान (आर्त्त, रौद्र) अप्रशस्त हैं और धर्म्य और शुक्ल

ध्यान प्रशस्त हैं।

परे मोक्षहेतु। (29)

The last two धर्मध्यान, शुक्लध्यान are the causes of liberation. The other two आर्तध्यान, रौद्रध्यान are the causes of mundane bondage.

उनमें से पर अर्थात् अंत के दो ध्यान मोक्ष के हेतु हैं। 'परे मोक्षहेतु' धर्मध्यान और शुक्लध्यान मोक्ष के कारण है, ऐसा कहने पर परिशेष न्याय से पूर्व आर्त्त, रौद्रध्यान संसार के कारण हैं, यह जाना जाता है क्योंकि तीसरे साध्य का अभाव है अर्थात् संसार और मोक्ष को छोड़कर तीसरा कोई भेद या अवस्था नहीं हैं।

इस सूत्र में कहा गया है कि धर्मध्यान एवं शुक्लध्यान दोनों मोक्ष के लिए कारण है। एकाग्रचिंता निरोध ध्यान होने के कारण जब तक चिंता (भावमन) रहती है तब तक ध्यान होता है। भावमन का अभाव 12वें गुणस्थान के अंत तक हो जाता है इसलिए वस्तुतः 13वें 14वें गुणस्थान में उपचार से शुक्लध्यान है और सिद्ध अवस्था में उपचार से भी ध्यान मात्र का भी अभाव है। इससे सिद्ध होता है कि ध्यान आत्मा का स्वभाव नहीं है परन्तु मोक्ष मार्ग के लिए कारण है। कुछ आधुनिक एकांतवादी आध्यात्मिक शास्त्र एवं शुद्ध नय का बहाना (आड़) लेकर शुक्लध्यान को तो मोक्ष का कारण मानते हैं और धर्मध्यान को संसार का कारण मानते हैं किन्तु सूत्रकार के सूत्रों से स्वयं इस मत का खण्डन हो जाता है। शुभध्यान शुभ परिणाम से होता हैं तथा शुभ परिणाम सम्यग्दर्शन पूर्वक होता है। सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान सहित एवं देशचारित्र एवं सकल चारित्रपूर्वक जो शुभ क्रिया या शुभध्यान होता है वे सब पुण्यबंध के साथ-साथ पाप के संवर निर्जरा का कारण बनते हैं। जो पुण्यबंध होता है एवं शुभभाव व ध्यान होता है वह भी मोक्ष के लिए परम्परा से कारणभूत बनते हैं। शुभभाव एवं शुभध्यान भी शुद्धभाव एवं शुक्लध्यान के लिए कारण बनते हैं।

दिगम्बर जैनागम के श्रेष्ठतम सिद्धांतशास्त्र जयधवल में वीरसेन स्वामी ने उपरोक्त सिद्धांत का प्रतिपादन निम्न प्रकार से किये हैं-

सुह परिणाम पणालीए विणा एक्क सराहेणेव सुविसुद्ध परिणामेण परिणमनासंभवादो त्ति एसो एत्थ सुत्तत्थसब्भावो।

शुभ परिणाम की प्रणाली के बिना एक बार में ही सुविसुद्ध परिणाम रूप से

परिणमन असंभव है। इस प्रकार इस अर्थ का सद्भाव यहाँ पर स्वीकार किया गया है। परिणामों विसुद्धो पुव्वं पि अंतोमुहुत्तप्पहुडि विसुज्झमाणो आगदो अणंतगुणाए विसोहीए।

परिणाम विशुद्ध होता है तथा अंतर्मुहूर्त पहले से ही अनंतगुणी विशुद्धि के द्वारा विशुद्ध होता हुआ आया हैं।

चारित्र मोहनीय की क्षपणा का प्रारम्भ करने वाले जीव का परिणाम विशुद्ध ही होता है। इस प्रकार इस सूत्र वचन से अशुभ परिणामों का व्युदास करके शुभ-शुद्ध परिणाम ही यहाँ पर सम्भव है, इस बात का ज्ञान कराया गया है। केवल इसे अधः प्रवृत्त करके अंतिम समय में ही इसका विशुद्ध परिणाम हो गया है, किन्तु अधः प्रवृत्तकरण के प्रारंभ करने के पूर्व ही नीचे अंतर्मुहूर्त से लेकर क्षपक श्रेणी के योग्य विशुद्धि का अवलंबन लेकर प्रत्येक समय में अनंतगुणी विशुद्धि से विशुद्ध होता हुआ ही आया है।

शुभ परिणाम शुद्ध परिणाम के कारण होने से बिना शुभ परिणाम के शुद्ध परिणाम नहीं हो सकते हैं, क्योंकि कारण के बिना कार्य का संपादन होना त्रिकाल, तीन लोक में असंभव है। इसलिए भी शुभ परिणाम मोक्ष मार्ग में प्राथमिक साधक अर्थात् चतुर्थ गुणस्थान से सातवें गुणस्थान तक के जीवों के लिए हेय नहीं परन्तु उपादेय है। उत्कृष्ट शुभ परिणाम चतुर्थ गुणस्थान में नहीं होता है किन्तु सातवें गुणस्थान में ही होता है। बिना निर्ग्रंथ मुनि लिंग धारण किये छटवाँ-सातवाँ गुणस्थान नहीं हो सकता है। अतः उत्कृष्ट शुभ परिणामों की प्राप्ति के लिए भी निर्ग्रंथ मुनि लिंग की आवश्यकता है। केवल शुभ परिणाम शुद्ध परिणाम के लिए ही कारण नहीं है किन्तु संवर-निर्जरा के लिए भी कारण है। इतना ही नहीं, शुभ एवं शुद्ध परिणाम के बिना कर्म का क्षय नहीं हो सकता है।

सुह सुद्ध परिणामेहि कम्मक्खया भावे तक्खयाणुववत्तीदो।

शुभ और शुद्ध परिणामों से कर्मों का क्षय न माना जाय तो फिर कर्मों का क्षय हो ही नहीं सकता है।

आत्मानुशासन में गुणभद्राचार्य ने कहा भी है-

अशुभाच्छुभमायात् शुद्धः स्यादयमागतम्।
रवेरप्राप्तसंध्यस्य तमसो न समुद्गमः।। (122)

Emerging from evil into good, this (Soul) reaches, with the help of the scriptures, (the Stage of) pure thought activity. Darkness (of ignorance) cannot exist in presence of the pre-evening from sum (of knowledge).

यह आराधक भव्य जीव आगम ज्ञान के प्रभाव से अशुभ स्वरूप असंयम अवस्था से शुभ रूप संयम अवस्था को प्राप्त हुआ समस्त कर्ममल से रहित होकर शुद्ध हो जाता है। ठीक है-सूर्य जब तक संध्या (प्रभातकाल) को नहीं प्राप्त होता हैं तब तक वह अंधकार को नष्ट नहीं करता है।

विधुततमसो रागस्तपः श्रुतनिबंधनः।

संध्याराग इवार्कस्य जन्तोरभ्युदयाय सः।। (123)

The red tinge (i.e. attachment), of a person whose ignorance is dispelled, supports qusterity and scriptrial knowledge; and like the red dawn of the rising sun is for the prosperity of all beings.

अज्ञान रूप अंधकार को नष्ट कर देने वाले प्राणी के जो तप एवं शास्त्र विषयक अनुराग होता हैं वह सूर्य की प्रभातकालीन लालिमा के समान उसके अभ्युदय (अभिवृद्धि) के लिए होता है।

आर्तध्यान का लक्षण एवं भेद

आर्तममनोज्ञस्य संप्रयोगे तद्विप्रयोगाय स्मृतिसमन्वाहारः। (30)

आर्तध्यान Painful concentration of monomonia is of 4 kinds. The first kind of monomonia is अनिष्ट संयोगज onconnection with an unpleasing object to repeatedly think of separation from it.

अमनोज्ञ पदार्थ के प्राप्त होने पर उसके वियोग के लिए चिंता-सातत्य का होना प्रथम आर्तध्यान है।

बाधाकारी विष, कण्टक, शत्रु, शास्त्रादि अप्रिय वस्तुएँ अमनोज्ञ कहलाती हैं। जो विष, कण्टक, शत्रु आदि अप्रिय है, उसे बाधा की कारण होने से अमनोज्ञ कहते हैं।

अर्थांतर (दूसरे पदार्थ) की ओर मन को न जाने देकर उसे बार-बार एक ही पदार्थ में लगाये रखना समन्वाहार है। स्मृति का समन्वाहार स्मृति समन्वाहार है।

बाधाकारी विष, कण्टक आदि अप्रिय वस्तु का संयोग मिलने पर 'ये मुझसे दूर कैसे हों, इस प्रकार का संकल्प चिंता का प्रबंध आर्तध्यान कहा जाता है।

अनादिकालीन मोह एवं अविद्या आदि कुसंस्कार के कारण जीव दूसरे पदार्थों में इष्टानिष्ट आरोप कर लेता है। अनिष्ट संयोग होने पर उनको दूर करने के लिए बार-बार विचार करता है। उसकी ही योजना बनाता है। जब तक अनिष्ट संयोग होता है उसके मन में अनेक संकल्प विकल्प उठते हैं जिससे मन में विकार उत्पन्न होता है एवं विभिन्न मानसिक तनाव से ग्रस्त हो जाता है। इससे अनेक शारीरिक-मानसिक रोग के साथ-साथ पापबंध भी होता है, जैसे-दुर्योधन पाण्डवों को अनिष्ट जानता था और उनको राज्य से निकालने के लिए, मारने के लिए योजना बनाता था। इतना ही नहीं इस अनिष्ट संयोगज आर्तध्यान के कारण ही महाभारत जैसे जन-धन संहारक महायुद्ध हुआ। परिवार में भी दुष्टा बहु, दुष्टा सास, दुष्टा भाई-बंधु के कारण इस प्रकार का अनिष्ट संयोगज आर्तध्यान होता है कलह होती है एवं संयुक्त परिवार टुकड़े-टुकड़े में बिखर जाता है।

पंचम् गुणस्थान में होने वाला ध्यान

अट्टरउद्दं झाणं भद्दं अत्थित्ति तम्हि गुणठाणे।
बहु आरंभपरिग्गह जुत्तस्स य णत्थि तं धम्मं।।

अर्थ-इस पाँचवें गुणस्थान में आर्त्तध्यान रौद्रध्यान और भद्रध्यान ये तीन प्रकार के ध्यान होते हैं। इस गुणस्थान वाले जीव के बहुत-सा आरंभ होता है और बहुत-सा ही परिग्रह होता है इसलिये इस गुणस्थान में धर्मध्यान नहीं होता।

धम्मेदएण जीवो असुहं परिचयइ सुहगई लेई।
कालेण सुक्ख मिल्लइ इंदियवलकारणं जाणि।।

अर्थ-धर्म सेवन करने से इस जीव के अशुभ परिणाम और अशुभ गतियाँ आदि नष्ट हो जाती हैं और शुभ गति प्राप्त होती है तथा समयानुसार इन्द्रियों को बल देने वाला सुख प्राप्त होता है।

आर्त्तध्यान

इट्ठविओए अट्टं उप्पजइ तह अणिट्ठसंजोए।

रोयपकोवे तइयं णियाण करणे चउत्थं तु।।

अर्थ-किसी इष्ट पदार्थ के वियोग होने पर उसके संयोग का चिंतवन करना पहला आर्त्तध्यान है। किसी अनिष्ट पदार्थ के संयोग होने पर उसके वियोग होने का बार-बार चिंतवन करना दूसरा आर्त्तध्यान है। किसी रोग के प्रकोप होने पर उसको दूर करने के लिए बार-बार चिंतवन करना तीसरा आर्त्तध्यान हैऔर निदान करना चौथा आर्त्तध्यान कहलाता है।

अदृज्झाणपउत्तो बंधइ पावं णिरंतरं जीवो।

मरिएण य तिरियगई कोवि णरो जाइ तज्झाणे।।

अर्थ-इस आर्त्तध्यान के करने से यह जीव निरंतर पाप कर्मों का बंध करता रहता है तथा कोई-कोई मनुष्य इस आर्त्तध्यान के करने से तिर्यंच गति को प्राप्त करता है।

रुद्दं कसाय सहियं जीवो संभवइ हिंसयाणंदं।

मोसाणंदं विदियं थेयाणंदं पुणो तइयं।।

हवइ चउत्थं झाणं रुद्दं णामेण रक्खणाणंदं।

जस्स य माहप्पेण य णरयगई भायणो जीवो।।

अर्थ-जिस जीव की कषायें अत्यंत तीव्र होती है उसके रौद्रध्यान होता है। उस रौद्रध्यान के चार भेद हैं। हिंसा में आनंद मानना हिंसानंद रौद्रध्यान है। झूठ बोलने में आनंद मानना मृषानंद आर्त्तध्यान है। चोरी में आनंद मानना स्तेयानंद नामक तीसरा आर्त्तध्यान है तथा बहुत से परिग्रह की रक्षा में आनंद मानना रक्षणानंद का परिग्रहानंद नाम का चौथा आर्त्तध्यान है। इस रौद्रध्यान का चिंतवन करने से वह जीव नरक का पात्र होता है।

जिनेज्या पात्रदानादिस्तत्र कालोचितो विधिः।

भद्रज्यानं स्मृतं तद्वि गृहवधर्माश्रयात् बुधैः।।

अर्थ-भगवान् जिनेन्द्र देव की पूजा करना, पात्रदान देना तथा समयानुसार पूजा और दान की विधि करना भद्रध्यान कहलाता है। ऐसा ध्यान यथोचित गृहस्थ धर्म में ही होता है। इसलिये विद्वान लोग इसे धर्मध्यान कहते हैं।

गिहवावाररयाणं गेहीणं इंदियत्थ परिकलियं।

अट्टज्झाण जायइ रुद्दं वा मोहछण्णाणं।।

अर्थ-जो गृहस्थ घर के व्यापार में लगे रहते हैं और इन्द्रियों के विषयभूत पदार्थों में संकल्प-विकल्प करते रहते हैं उनके आर्त्तध्यान होता है तथा जिनके मोहनीय कर्म का तीव्र उदय होता है उनके रौद्रध्यान होता है।

झाणेहिं तेहिं पावं उप्पण्णं तं खवइ भद्दझाणेण।

जीवो उवसमजुत्तो देसजई णाणसंपण्णो।।

अर्थ-इन आर्त्तध्यान और रौद्रध्यान से जो पाप उत्पन्न होता है उसको यह उपशम परिणामों को धारण करने वाला और सम्यग्ज्ञान का धारण करने वाला देशव्रती श्रावक अपने भद्रध्यान से नाश कर देता है।

भद्रध्यान

भद्दस्य लक्खणं पुण धम्मं चिंतेइ भोयपरिमुक्को।

चिंतिय धम्मं सेवइ पुणरवि भोए जहिच्छाए।।

अर्थ-जो जीव भोगों का त्याग करता धर्म का चिंतवन करता है और धर्म का चिंतवन करता हुआ भी फिर भी अपनी इच्छानुसार भोगों का सेवन करता उसके भद्रध्यान समझना चाहिए।

भावार्थ-भोगों का सेवन करता हुआ भी जो धर्मध्यान धारण करता है उसे भद्रध्यान समझना चाहिए।

धर्मध्यान के भेद

धम्मज्झाणं भणियं आणापायाविवायविचयं च।

संठाणं विचयं तह कहियं झाणं समासेण।।

अर्थ-आज्ञा विचय, अपाय विचय, विपाक विचय और संस्थान विचय ये चार अत्यंत संक्षेप में धर्मध्यान के भेद हैं।

आगे आज्ञाविचय धर्मध्यान का स्वरूप कहते हैं।

छद्दव्वणवपयत्था सत्तवि तच्चाइं जिणवराणाए।

चिंतइ विसयविरत्तो आणा विचयं तु तं भणियं।।

अर्थ-जो मनुष्य इन्द्रियों के विषयों से विरक्त होकर भगवान् की आज्ञा प्रमाण

छह द्रव्य नौ पदार्थ और सात तत्त्वों का चिंतवन करता है उसको आज्ञा विचय नाम का पहला धर्मध्यान कहते हैं।

आगे अपाय विचय को कहते हैं।

असुहकम्मस्स णासो सुहस्स वा हवेइ केणुवाएण।
इय चिंतंतस्स हवे अपाय विचयं परं झाणं।।

अर्थ-अपाय शब्द का अर्थ नाश है। इन अशुभ कर्मों का नाश किस उपाय से होगा अथवा शुभ कर्मों का आस्रव किस उपाय से होगा इस प्रकार जो जीव चिंतवन करता है उसका वह ध्यान अपाय विचय नाम का दूसरा उत्तम धर्मध्यान कहलाता है।

विपाक विचय

असुहसुहस्स विवाओ चिंतइ जीवाण चउगइगयाणं।
विवायविचयं झाणं भणियं तं जिणवरिंदेहिं।।

अर्थ-चारों गतियों में परिभ्रमण करने वाले जीवों के शुभ कर्मों के उदय को तथा अशुभ कर्मों के उदय को जो चिंतवन करता है उसका वह ध्यान विपाक विचय कहलाता है। ये जीव अपने-अपने शुभ-अशुभ कर्मों के उदय से ही सुख-दुःख भोगते हैं ऐसा चिंतवन करना अपाय विचय नाम का तीसरा धर्मध्यान है।

संस्थान विचय

अह उड्ढतिरियलोए चिंतेइ सपज्जयं ससंठाणं।
विचयं संठाणस्स च भणियं झाणं समासेण।।

अर्थ-संस्थान आकार को कहते हैं। लोक के तीन भाग है अधोलोक, मध्यलोक वा तिर्यग्लोक और ऊर्ध्व लोक इनका चिंतवन करना तथा इनमें भरे हुए पदार्थों का उनकी पर्यायों का उन सबके आकारों का चिंतवन करना अत्यंत संक्षेप से संस्थान विचय नाम का चौथा धर्मध्यान कहलाता है।

धर्मध्यान कहाँ होता

मुक्खं धम्मज्झाणं उत्तं तु पमायविरहिए ठाणे।
देस विरए पमत्ते उवयारेणेव णायव्वं।।

अर्थ-यह धर्मध्यान मुख्यता से प्रमाद रहित सातवें गुणस्थान में होता है तथा देशविरत पाँचवें गुणस्थान में और प्रमत्त संयत छठे गुणस्थान में भी यह धर्मध्यान उपचार से होता है। ऐसा समझना चाहिए।

दूसरे प्रकार के धर्मध्यान का स्वरूप

दहलक्खणसंजुत्तो अहवा धम्मोत्ति वण्णिओ सुत्ते।
चिंता जा तस्स हवे भणियं तं धम्मझाणुत्ति।।

अर्थ-अथवा सिद्धांत सूत्रों में उत्तमक्षमा आदि दश प्रकार का धर्म बतलाया है उन दशों प्रकार के धर्मों का चिंतवन करना भी धर्म्य ध्यान कहलाता है।

अहवा वत्थुसहावो धम्मं वत्थू पुणो व सो अप्पा।
झायंताणं कहियं धम्मझाणं मुणिंदेहिं।।

अर्थ-वस्तु के स्वभाव को धर्म कहते हैं तथा वस्तुओं में वा पदार्थों में मुख्य वस्तु वा मुख्य पदार्थ आत्मा है। इसलिये उस आत्मा का ध्यान करना और उसके शुद्ध स्वरूप का ध्यान करना धर्मध्यान है। ऐसा जिनेन्द्र देव ने कहा है।

धर्मध्यान के दूसरे प्रकार के भेद

तुं फुडु दुविहं भणियं सालंवं तह पुणो अणालंवं।
सालंवं पंचण्हं परमेट्ठीणं सरूवं तु।।

अर्थ-वह धर्म्यध्यान दो प्रकार है एक आलंबन सहित और दूसरा आलंबन रहित। इन दोनों में से पंच परमेष्ठी के स्वरूप का चिंतवन करना है उसको सालंब ध्यान कहते हैं।

प्रश्न-ध्यान किसे कहते हैं?

उत्तर-उत्तम संहनन वाले जीव का एक विषय में चित्तवृत्ति को रोकना ध्यान है, जो अंतर्मुहूर्त काल तक होता है अथवा चित्त के विक्षेप का त्याग करना ध्यान है अर्थात् मन का इधर-उधर जाना-आना रोकना ध्यान है।

प्रश्न-ध्यान के कितने भेद हैं?

उत्तर-ध्यान के मूल 4 भेद हैं-(1) आर्त्तध्यान, (2) रौद्रध्यान, (3) धर्मध्यान और (4) शुक्लध्यान।

प्रश्न-आर्त्तध्यान के कितने और कौन-कौनसे भेद हैं?

उत्तर-आर्त्तध्यान के 4 भेद है-(1) इष्टवियोगज, (2) अनिष्टसंयोगज, (3) पीड़ाचिंतन और (4) निदानबंध।

प्रश्न-उपर्युक्त चार ध्यानों का स्वरूप क्या है?

उत्तर-(1) प्रिय वस्तु के वियोग होने पर उसकी प्राप्ति के लिए सतत चिंता करना इष्टवियोगज आर्त्तध्यान है अथवा स्त्री-पुत्रादि प्रियजनों के बिछोह से उत्पन्न दुःख के समय जो होता है, वह इष्टवियोगज आर्त्तध्यान है। (2) अप्रियवस्तु का संयोग होने पर उसको दूर करने के लिए सतत चिंता करना अनिष्टसंयोगज आर्त्तध्यान है अथवा शत्रु, सिंह आदि अनिष्ट या अप्रिय या बिना चाहे पदार्थों के संयोग से उत्पन्न दुःख के समय जो होता है वह अनिष्टसंयोगज आर्त्तध्यान है। (3) शारीरिक एवं मानसिक किसी भी प्रकार की पीड़ा होने पर उसको दूर करने के लिए सतत चिंतन करना पीड़ाचिंतन आर्त्तध्यान है अथवा सिरदर्द, उदर पीड़ा आदि वेदनाओं के दुःख के समय होने वाला पीड़ाचिंतन आर्त्तध्यान है। (4) आगामी भोगों की प्राप्ति के लिए चिंता करना निदानबंध आर्त्तध्यान है अथवा आगामी भोगाकांक्षा निदान है। उस निदान से संबद्ध दुःख के समय होने वाला निदानबंध आर्त्तध्यान है।

प्रश्न-रौद्रध्यान के कितने और कौन-कौनसे भेद हैं?

उत्तर-रौद्रध्यान के 4 भेद हैं-(1) हिंसानंदी, (2) मृषानंदी, (3) चौर्यानंदी और (4) परिग्रहानंदी।

(1) हिंसा, जो क्रूर कार्य है, उनमें आनंद मानने वाले के उस समय कषाय से युक्त जो ध्यान होता है वह हिंसानंदी रौद्रध्यान है। (2) झूठ, जो क्रूर कार्य है, उसमें आनंद मानने वाले के उस समय मृषानंदी रौद्रध्यान होता है। (3) चोरी में आनंद मानने वाले के उस समय चौर्यानंदी रौद्रध्यान है। (4) परिग्रह के संरक्षण में अर्थात् परिग्रह संग्रह करके या संचित परिग्रह को देख-देखकर प्रसन्न होना परिग्रहानंदी रौद्रध्यान है।

प्रश्न-आर्त्तध्यान और रौद्रध्यान कितने गुणस्थान तक होते हैं?

उत्तर-आर्त्तध्यान प्रथम गुणस्थान से छठें गुणस्थान तक होता है, परंतु निदानबंध नामक आर्त्तध्यान पंचम गुणस्थान तक होता है। रौद्रध्यान प्रथम गुणस्थान से पंचम

गुणस्थान तक होता है।

प्रश्न-धर्मध्यान के कितने भेद हैं एवं कौन-कौनसे हैं?

उत्तर-धर्मध्यान के 4 भेद हैं-(1) आज्ञाविचय, (2) अपायविचय, (3) विपाकविचय और (4) संस्थानविचय।

प्रश्न-उपर्युक्त 4 भेदों का स्वरूप क्या है?

उत्तर-(1) जिनेन्द्र भगवान् की आज्ञा को ग्राह्य मानकर सात तत्त्व, छह द्रव्य और नौ पदार्थ आदि का चिंतन, मनन करना आज्ञाविचय धर्मध्यान है अथवा सर्वज्ञ की आज्ञा को प्रमाण मानकर सूक्ष्म, अंतरित और दूरवर्ती पदार्थों का निर्धारण करना, आज्ञाविचय धर्मध्यान है। (2) अमुक प्राणी उन्मार्ग को छोड़कर सन्मार्ग किस प्रकार पा सकेंगे ऐसा विचार अथवा चतुर्गति के दुःखों का चिंतन करना अपायविचय धर्मध्यान है अथवा मन, वचन व काय इन तीन योगों की प्रवृत्ति ही प्रायः संसार का कारण है, सो इन प्रवृत्तियों का अपाय अथवा त्याग मेरे किस प्रकार हो, इस प्रकार शुभलेश्या से अनुरंजित जो चिंता का प्रबंध है वह अपायविचय धर्मध्यान है। (3) द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव का कारण पाकर किस कर्म का किस प्रकार का फल भोगना पड़ता है, ऐसा जो मनःप्रणिधान है वह विपाकविचय धर्मध्यान है। (4) लोक का वर्णन करने वाले शास्त्रों के अनुसार लोक के आकारादि का विचार करना अथवा जिनदेव के द्वारा कहे गये छह द्रव्यों के लक्षण, संस्थान रहने का स्थान आदि का चिंतन करना संस्थानविचय धर्मध्यान है।

प्रश्न-धर्मध्यान किन-किन गुणस्थानों में होता है?

उत्तर-धर्मध्यान अविरत, देशविरत, प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत जीवों के होता है। (सर्वार्थसिद्धि अ. 1, सूत्र 36)

अथवा-सम्यक्त्व के प्रभाव से असंयत सम्यग्दृष्टि, संयतासंयत, प्रमत्तसंयत और अप्रमत्तसंयत में धर्मध्यान होता है। (रा.वा.अ.1, सूत्र 36)

अथवा-असंयत सम्यग्दृष्टि से लेकर क्षपक व उपशमक सूक्ष्मसांपराय संयत पर्यंत जीवों के धर्मध्यान की प्रवृत्ति होती है। (धवल पु.13/5)

अथवा- **मुख्योपचारभेदेन, धर्मध्यानमिहद्विधा।**
अप्रमत्तेषु तन्मुख्यमितरेष्वौपचारिकं।। (तत्त्वानुशासन श्लोक 47)

मुख्य और उपचार के भेद से धर्मध्यान दो प्रकार का है, उसमें से अप्रमत्तगुणस्थान में मुख्य और चतुर्थ-पंचम एवं छठें गुणस्थान में औपचारिक धर्मध्यान होता है।

अथवा- **मुक्खं धम्मज्झाणं, उत्तं तु पमायविरहिए ठाणे।**
देसविरए पमत्ते, उवयारेणेव णायव्वं।। (भावसंग्रह गाथा 371)

प्रमाद रहित अप्रमत्तगुणस्थान में मुख्य धर्मध्यान कहा है और असंयत, देशविरत और प्रमत्तविरत गुणस्थान में औपचारिक धर्मध्यान ही है।

प्रश्न-शुक्लध्यान के कितने और कौन-कौनसे भेद हैं?

उत्तर-शुक्लध्यान के 4 भेद हैं-(1) पृथक्त्ववितर्कविचार, (2) एकत्ववितर्क अविचार, (3) सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति और (4) व्युपरतक्रियानिवर्ति।

प्रश्न-उपर्युक्त 4 भेदों का स्वरूप क्या है?

उत्तर-(1) पृथक्-पृथक् अर्थ, व्यञ्जन, योग की संक्रांति और श्रुत जिसका आधार है वह पृथक्त्ववितर्क शुक्लध्यान है। (2) जो शुक्लध्यान तीन योगों में से किसी एक योग के साथ होता है तथा अर्थ, व्यञ्जन, योग की संक्रांति से रहित है वह एकत्ववितर्क अविचार शुक्लध्यान है। (3) जो वितर्क और विचार रहित है एवं सूक्ष्म काययोग का अवलंबन लेकर केवलीजिन के जो ध्यान होता है वह सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति शुक्लध्यान है। (4) जिस ध्यान में सर्व मन-वचन-काय संबंधी क्रियाओं का निरोध होता है एवं जो वितर्क और विचार से रहित है वह व्युपरतक्रिया-निवर्ति शुक्लध्यान है।

प्रश्न-उपर्युक्त चारों शुक्लध्यान किस-किस गुणस्थान में होते हैं?

उत्तर-पृथक्त्ववितर्क शुक्लध्यान अपूर्वकरण गुणस्थान से क्षीणमोह गुणस्थान तक पाया जाता है अथवा प्रथम शुक्लध्यान उपशांत कषाय और क्षीण कषाय इन दो गुणस्थानों में पाया जाता है। (धवल पु. 13, पृ. 81)

एकत्ववितर्क शुक्लध्यान उपशांत कषाय एवं क्षीण कषाय गुणस्थान में होता है। (ध.पु. 13, पृ. 81)

सयोगकेवली गुणस्थान में होता है तथा व्युपरतक्रियानिवर्ति शुक्लध्यान अयोगकेवली गुणस्थान में होता है।

अहंकार की आत्मकथा

(अनात्म वस्तु में ममकार से अहंकार होता, आत्म स्वभाव में स्वाभिमान < सोऽहं < अहं होते)

(चाल : जिया बेकरार है....., पूछ मेरा क्या नाम रे.....)

अहंकार मेरा नाम है, अष्टमद काम है।
कर्मजनित उपलब्धियों में, ममकार मेरा काम है।। (ध्रुव)

आत्म स्वभाव परे सभी, कर्मजनित जो लाभ है।
तन-मन-धन-बुद्धि-बल, ख्याति-पूजा-नाम है।।

आत्म स्वभाव से सच्चिदानंद, अनंत ज्ञान दर्श सुख वीर्य।
कर्मजनित उपलब्धियों से परे, शुद्ध-बुद्ध-आनंद।। अहंकार...

आत्मविश्वास ज्ञान चारित्र, उत्तम क्षमादि दश-धर्म।
अस्तित्व-वस्तुत्व-प्रमेयत्व, अगुरुलघु आदि अनंत गुण।।

इसे स्व-मानना नहीं 'ममकार', न इसका गौरव 'अहंकार।'
इसे ही प्राप्त करना धर्म, स्व-स्वभावमय ही मोक्ष।। अहंकार...

इसे प्राप्त हेतु ही धर्म साधना, व्रत-नियम-ध्यान-अध्ययन।
तप-त्याग व दया-दान-सेवा, नवकोटि से (करना) न अहंकार।।

इससे भिन्न कर्मज भाव, क्रोध-मान-माया-लोभ।
सचित्त-अचित्त-मिश्र परिग्रह, होते 'ममकार' व अहंकार।। अहंकार...

दिखावा-आडंबर-प्रसिद्धि-कीर्ति, ख्याति-पूजा व लाभ।
इस हेतु जो भाव व काम, राग-द्वेष संपन्न।।

अन्य प्रति ईर्ष्या-द्वेष-घृणा, भेद-भाव व दीन-हीन।
परनिंदा-अपमान-असहिष्णु, वैर-विरोधादि ममरूप (अहंकार)।। अहंकार...

स्वयं को ही सर्वश्रेष्ठ मानना, ज्ञानी-निर्दोष व गुणवान्।
स्वदोष को नहीं स्वीकारना, हठाग्रह-पूर्वाग्रह-अविनय।।

मैत्री-प्रमोद-करुणा-समता, विनम्र सत्याग्राही (व) उदारता।
नहीं होती है सरल-सहजता, कोमलता-मधुरता-शचिता।। अहंकार...

पढ़ाई से लेकर खान-पान, रहन-सहन-वेशभूषा।
यान-वाहन व मकान आभूषण, होते हैं मेरे व्यक्त रूप।।

दान-सेवा-पूजा-तीर्थयात्रा, भाषण-गायन व चर्चा।
जन्म-जयंती विवाह-भोज, मम अभिव्यक्ति विचित्रता।। अहंकार...

हितोपदेश भी नहीं मानना, परोपदेशी पांडित्य होना।
मध्य में अन्य की बात काटना, छिद्राणुवेषण करना।।

बनावटी व बढ़ा (चढ़ा) कर बोलना, हित-मित-प्रिय रहित।
गुणी-गुरु प्रति व बहुमान, छोटों के लिए अनादर।। अहंकार...

आत्मवत् सर्व जीवन मानना, वात्सल्य संगठन रहित।
इत्यादि मेरे विचित्र स्वरूप, सूरी 'कनक' ने लिखा संक्षेप।। अहंकार...

सीपुर, दिनांक 24.05.2017, अपराह्न 6.22

संदर्भ-

क्रोधात् प्रीतिविनाशो मानाद्विनयोपघातमाप्रोति।
शाठ्यात्प्रत्ययहानिं सर्वगुणविनाशको लोभः।। (76)

क्रोध से प्रीति का नाश होता है, मान से विनय विघात को प्राप्त होता है, माया से विश्वास की हानि होती है तथा लोभ सब गुणों का नाश करने वाला है।

जिह्वासहस्रकलितोऽपि समासहस्रैर्यस्यां न दुःखमुपवर्णयितुं समर्थः।
सर्वज्ञदेवमपहाय परो मनुष्यस्तां श्वभ्रभूमिमुपयाति नरोऽभिमानी।। (1)

सर्वज्ञदेव को छोड़कर अन्य मनुष्य हजार जिह्वाओं से युक्त होने पर भी हजार वर्षों में जिसके दुःख का वर्णन करने में समर्थ नहीं है, उस नरकभूमि को अभिमानी मनुष्य प्राप्त होता है।

राजापि क्षणमात्रतो विधिवशाद् रङ्कायते निश्चितं,
सर्वव्याधिविवर्जितोऽपि तरुणो ह्याशु क्षयं गच्छति।

अन्यैः किं किल सारतामुपगते श्रीजीविते द्वे तयोः,

संसारे स्थितिरीदृशीति विदुषा क्वान्यत्र कार्यो मदः।। (2) पद्म. पंच.

निश्चित है कि राजा भी भाग्यवश क्षणमात्र में रंक जैसा हो जाता है और समस्त रोगों से रहित तरुण मनुष्य भी शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। अन्य वस्तुओं से क्या प्रयोजन है? संसार में लक्ष्मी और जीवन ये दो ही श्रेष्ठता को प्राप्त है जब उनकी भी संसार में ऐसी स्थिति है तब विद्वान् को अन्य किसमें मद करना चाहिए?

वीणेव श्रोत्रहीनस्य लोलाक्षीव विचक्षुषः।

व्यसोः कुसुममालेव विद्या स्तब्धस्य निष्फला।। (3)

जिस प्रकार बधिर मनुष्य के सामने वीणा, अंध मनुष्य के सामने चपललोचना स्त्री और मृत मनुष्य के ऊपर डाली पुष्पमाला व्यर्थ है उसी प्रकार अभिमानी मनुष्य की विद्या निष्फल है।

ज्ञानं मददर्पहरं माद्यति यस्तेन तस्य को वैद्यः।

अमृतं यस्य विषायति तस्य चिकित्सा कथं क्रियते।। (4)

ज्ञान, मद के दर्प को हरने वाला है पर जो उस ज्ञान से ही मद करता है उसका वैद्य कौन हो सकता है? अमृत ही जिसके लिए विष के समान है उसकी चिकित्सा कौन कर सकता है?

मदोपशमनं शास्त्रं खलानां कुरुते मदम्।

चक्षुः संस्कारकं तेज उलूकानामिवान्धताम्।। (5)

मद को शांत करने वाला शास्त्र दुर्जनों को मद उत्पन्न करता है जैसे नेत्रों का संस्कार करने वाला-देखने में समर्थ बनाने वाला सूर्य का तेज उलूक पक्षियों को अंधा बनाता है।

रूपं मन्मथहृन्मथं कुलमलङ्कारोऽपि मे भूतले,

जातेर्जातिकलीमषी (?) धनपतिर्भाग्ये धने किङ्करः।

सर्वज्ञोऽप्यबुधोऽस्ति बुद्धिविभवाच्छिल्पात्सरस्वत्यपि,

भीमो मे बलतोऽबलीति तपसः ख्यातास्तपस्वीशिनः।। (6)

मेरा रूप कामदेव के हृदय को मथने वाला है, मेरा कुल भी पृथ्वी तल पर

आभूषण स्वरूप है, मेरी जाति अन्य जातियों को मलिन करने वाली है, भोगने योग्य धन के विषय में कुबेर मेरा किङ्कर है, बुद्धि-वैभव से सर्वज्ञ भी अज्ञानी ठहरते हैं, शिल्प से सरस्वती भी पीछे है, मेरे बल से भीम भी निर्बल है और मेरे तप से अन्य बड़े-बड़े तपस्वी भी हीन कहे जाते हैं।

शमालानं भञ्जन् विमलमतिनाडीं विघटयन्,
किरन्-दुर्वाक्पांशूत्करमगणयन्नागमसृणिम्।
भ्रमन्नुर्व्यां स्वैरं विनयवनवीथीं विदलयन्,
जनः किं नानर्थं जनयति मदान्धो द्विप इव।। (7) सू.मु. 50

प्रशम भावरूपी स्तंभ को भग्न करता हुआ, निर्मल बुद्धिरूपी नाड़ी को विघटित करता हुआ, दुर्वचनरूपी धूलि के समूह को बिखेरता हुआ, आगमरूपी अंकुश की उपेक्षा करता हुआ, पृथ्वी पर स्वच्छंदता से भ्रमण करता हुआ, विनयरूपी वन की गली को खंडित करता हुआ, मदांध जन-अहंकारी मनुष्य, मदांध हाथी के समान क्या-क्या अनर्थ नहीं करता है?

औचित्याचरणं विलुम्पति पयोवाहं नभस्वानिव,
प्रध्वंसं विनयं नयत्यहिरिव प्राणस्पृशां जीवितम्।
कीर्तिं कैरविणीं मतङ्गज इव प्रोन्मूलयत्यञ्जसा,
मानो नीच इवोपकारनिकरं हन्ति त्रिवर्गं नृणाम्।। (8) सू.मु. 51

जिस प्रकार वायु मेघ को नष्ट कर देती है उसी प्रकार मान योग्य आचरण को नष्ट करता है, जिस प्रकार सर्प प्राणियों के जीवन को नष्ट करता है, उसी प्रकार मान विनय को नष्ट करता है, जिस प्रकार मदोन्मत्त हाथी कुमुदिनी को उखाड़ देता है, उसी प्रकार मान कीर्ति को उखाड़ देता है और जिस प्रकार नीच मनुष्य उपकार के समूह को नष्ट कर देता है, उसी प्रकार मान मनुष्यों के त्रिवर्ग को नष्ट कर देता है।

नीतिं निरस्यति विनीतिमपाकरोति,
कीर्तिं शशाङ्कधवलां मलिनां करोति।
दोर्भाग्यमानयति कार्यमपाकरोति,
किं किं न दोषमथवा कुरुतेऽभिमानः।। (9) सुर.र. संदोह.

अभिमान नीति को नष्ट करता है, स्वच्छंदता को उपस्थित करता है, चंद्रमा के

समान धवल कीर्ति को मलिन करता है, दौर्भाग्य को लाता है और कार्य को नष्ट करता है, इस तरह अभिमान किस-किस दोष को नहीं करता।

देहोऽहं कर्मरूपोऽहं मनुष्योऽहं कृशोऽकृशः।
गौरोऽहं श्यामवर्णोऽहमद्विजोऽहं द्विजोऽथवा।। (10) त.ज्ञा तरं. 10/2
अविद्वानप्यहं विद्वान् निर्धनो धनवानहम्।
इत्यादि चिन्तनं पुंसामहङ्कारो निरुच्यते।। (11) वही 3

मैं देहरूप हूँ, कर्मरूप हूँ, दुर्बल हूँ, स्थूल हूँ, गौरवर्ण हूँ, श्यामवर्ण हूँ, द्विजेतर हूँ, द्विज हूँ, अविद्वान् हूँ, विद्वान् हूँ, निर्धन हूँ और धनवान् हूँ, इस प्रकार पुरुषों का चिंतन करना अहंकार कहलाता है।

यस्मादाविर्भवति विततिर्दुस्तरापन्नदीनां,
यस्मिन् शिष्टाभिरुचिगुणग्रामनामापि नास्ति।
यश्च व्याप्तं वहति वधधीधूम्यया क्रोधदावं,
तं मानाद्रिं परिहरदुरारोहमौचित्य-वृत्तेः।। (12) सू.मु. 49

जिससे दुःख से पार करने योग्य आपत्तिरूपी नदियों का समूह प्रकट होता है, जिसमें शिष्ट मनुष्यों की अभिरुचि से युक्त गुणरूप ग्राम का नाम भी नहीं है, जो वध करने की बुद्धिरूप धूम के समूह में व्याप्त क्रोधरूप दावानल को धारण कर रहा है तथा जिस पर योग्यवृत्ति का चढ़ना कठिन है उस मानरूपी पर्वत को छोड़ो।

आपद्गतान् हससि किं द्रविणान्ध मूढ!,
लक्ष्मीः स्थिरा न भवतीति किमत्र चित्रम्।
एतान् प्रपश्यसि घटान् जलयन्त्रचक्रे,
रिक्ता भवन्ति भरिता भरिताश्च रिक्ताः।। (13)

हे धनांध मूर्ख! तू आपत्ति में पड़े-निर्धन मनुष्यों की हँसी क्यों करता है? लक्ष्मी स्थिर नहीं है, इसमें आश्चर्य की क्या बात है? जल-यंत्र के चक्र में तू इन घड़ों को देख रहा है, जो खाली होते है वे भर जाते हैं और जो भरे होते हैं, वे खाली हो जाते हैं।

गर्वेण मातृपितृबान्धवमित्रवर्गाः
सर्वे भवन्ति विमुखा विहितेन पुंसः।

विद्यादयादमयमादिगुणांश्च हन्ति,

ज्ञात्वेति गर्ववशमेति न शुद्धबुद्धिः।। (14) सु.र. संदोह. 49

कृत गर्व से माता-पिता, बंधु और मित्रवर्ग-सभी पुरुष से विमुख हो जाते हैं। गर्व, पुरुष के विद्या, दया, दम तथा संयमादि गुणों को नष्ट कर देता है, यह जानकर निर्मल बुद्धि वाला मनुष्य मान के वश को प्राप्त नहीं होता।

वसति भुवि समस्तं सापि संधारितान्यै-

रुदरमुपनिविष्टा सा च ते चापरस्य।

तदपि किल परेषां ज्ञानकोणे निलीनं,

वहति कथमिहान्यो गर्वमात्माधिकेषु।। (15) आत्मा. 219

सब पदार्थ पृथ्वी पर निवास करते हैं, वह पृथ्वी भी दूसरों के द्वारा धारण की जाकर दूसरे के उदर में स्थित है, वे दूसरे भी दूसरे के मध्य में स्थित है और वह समग्र विश्व भी दूसरों के ज्ञान संबंधी कोने में स्थित है अतः जब अपने से अधिक पदार्थ विद्यमान है तब अन्य मनुष्य इस जगत् में गर्व क्यों धारण करता है? भावार्थ- अपने से अधिक की ओर दृष्टि देने से गर्व नहीं होता है।

स्मयेन योऽन्यानत्येति धर्मस्थान् गर्विताशयः।

सोऽत्येति धर्ममात्मीयं न धर्मो धार्मिकैर्विना।। (16) र.क.श्रा. 26

जो अहंकारपूर्ण आशय वाला होता हुआ गर्व से अन्य धर्मात्माओं का तिरस्कार करता है वह अपने धर्म का तिरस्कार करता है क्योंकि धर्मात्माओं के बिना धर्म नहीं होता।

यो मदान्धो न जानाति हिताहितविवेकताम्।

स पूज्येषु मदं कृत्वा नरो भवति गर्दभः।। (17)

जो मदांध मनुष्य हित-अहित का विवेक नहीं जानता वह पूज्य पुरुषों के विषय में मदकर भव में गधा होता है।

अवंशसंभवो राजा मूर्खपुत्रो हि पण्डितः।

अधनेन धनं प्राप्तं तृणवन्मन्यते जगत्।। (18)

यदि नीच कुल में उत्पन्न मनुष्य राजा हो जावे, मूर्ख का पुत्र पंडित बन जावे और निर्धन को धन मिल जावे तो वह गर्व से जगत् को तृण के समान मानता है।

ये कर्मकृताभावाः परमार्थनयेन चात्मनो भिन्नाः।

तत्रात्माभिनिवेशोऽहंकारोऽहं यथा नृपतिः।। (19) तत्त्वानुशासन 15

जो भाव कर्म के द्वारा किये गये है वे निश्चयनय की दृष्टि में आत्मा के नहीं हैं, उनमें आत्मबुद्धि करना अहंकार है, जैसे राजा न होते हुए भी अपने आपको राजा मानना।

निरन्तरमहङ्कारं मूढाः कुर्वन्ति तेन ते।

स्वकीयं शुद्धचिद्रूपं विलोकन्ते न निर्मलम्।। (20) त.ज्ञा. तरंगिणी 10

यतश्च मूर्ख मनुष्य निरंतर अहंकार करते हैं-पर-पदार्थों को निजरूप मानते हैं अतः वे अपने निर्मल शुद्ध चैतन्य रूप का अवलोकन नहीं कर पाते।

स्व मानो नाम संसारे जन्तुव्रजविडम्बके।

यत्र प्राणी नृपो भूत्वा विष्ठामध्ये कृमिर्भवेत्।। (21)

जंतु समूह की विडंबना करने वाले उस संसार में मान कहाँ हो सकता है जहाँ प्राणी राजा होकर विष्ठा के बीच कीड़ा हो जाता है।

गर्वेणाऽनमनात् नीचमातङ्गादि-कुलानि च।

निधनाच्छ्वभ्रदुःखानि लप्स्यन्तेऽज्ञैः पदे-पदे।। (22)

जो अज्ञानी मनुष्य गर्व से अन्य पूज्य पुरुषों को नमस्कार नहीं करते हैं वे मरने के बाद नीच चाण्डाल आदि के कुलों को तथा नरक गति संबंधी दुःखों को प्राप्त होंगे।

जातिर्गोत्रं च ज्ञानं च विज्ञानैश्वर्यमेव च।

तपो बलं च रूपं च मदमाहुर्मनीषिणः।। (23)

जाति, गोत्र, ज्ञान, विज्ञान, ऐश्वर्य, तप, बल और रूप के गर्व को विद्वान् लोग मद कहते हैं।

मानग्रन्थिर्मनस्युच्चैर्यावदास्तेदृढस्तदा।

तावद् विवेक-माणिक्यं प्राप्तमप्यपसर्पति।। (24) ज्ञानार्णव 178

. जब तक मन में मान की ऊँची गाँठ सुदृढ़ रहती है तब तक विवेकरूपी माणिक्य प्राप्त होने पर भी खिसकता रहता है-दूर हटता जाता है।

अभिमानधनं येषां चिरं जीवन्तु ते नराः।

अभिमानेन हीनानां किं धनेन किमायुषा।। (25)

आत्मगौरव जिनका धन है वे चिरकाल तक जीवित रहे-उनका जीवन सार्थक है। जो अभिमान-आत्मगौरव से रहित है उनके धन से तथा आयु से क्या फल है?

वरं प्राणपरित्यागो न मानपरिखण्डनम्।
मरणे क्षणिकं दुःखं मानभङ्गे पदे-पदे।। (26)

प्राणों का परित्याग-मरना अच्छा है परन्तु मानभंग होना अच्छा नहीं है क्योंकि मरण में क्षणिक दुःख होता है पर मानभंग में पद-पद पर दुःख होता है।

प्रोत्तुङ्गमानशैलाग्रवर्तिभिर्लुप्त-बुद्धिभिः।
क्रियते मार्गमुल्लङ्घ्य पूज्यपूजाव्यतिक्रमः।। (27) ज्ञानार्णव 179

अत्यंत ऊँचे मानरूपी पर्वत के शिखर पर वर्तमान बुद्धिहीन मनुष्यों के द्वारा मार्ग-विनय पद्धति का उल्लंघन कर पूज्य पुरुषों की पूजा का व्यतिक्रम किया जाता है।

भूपोऽहं नृपवृन्दसेवितपदः प्राज्ञः सुविद्वानहं,
शूरोऽहं निहतद्विषन् यतिरहं सम्यक्तपस्वीति च।
मिथ्याहङ्कृतिमोहिताः कृतमिदं जल्पन्त्यमी वस्तुत-
स्तावत् कोऽहमिति प्रगल्पमतयोऽप्यात्मावबोधे जडाः।। (28)

मैं राजाओं के समूह से सेवितचरण राजा हूँ, मैं उत्कृष्ट ज्ञाता विद्वान् हूँ, मैं शत्रुओं को नष्ट करने वाला शूरवीर हूँ और समीचीन तपस्या करने वाला यति हूँ, इस प्रकार मिथ्या अहंकार से मोहित मनुष्य यह कहते हैं कि यह कार्य मैंने किया है। वास्तव में 'मैं कॉन हूँ?' इस तरह आत्मा के जानने में प्रौढ़ बुद्धि वाले भी जड़ हैं-अज्ञ हैं।

कार्यं कृन्तति सद्गुणांस्तिरयति क्लेशं करोत्यात्मनो,
मृत्युं वाञ्छति नो तनोति विनयं लोकस्थितिं चास्यति।
मान्यं द्वेष्टि जनं विमुञ्चति नयं शेते न भुङ्क्ते सुखं,
मानी मानवशेन कष्टपतितः पापं चिनोत्यन्वहम्।। (29)

मानी मनुष्य कार्य को नष्ट करता है, समीचीन गुणों को छिपाता है, क्लेश करता है, अपनी मृत्यु चाहता है, विनय को विस्तृत नहीं करता है, लोकमर्यादा को छोड़ देता है, माननीय-पूज्यजन से द्वेष करता है, नय को छोड़ देता है, सुख से न सोता है न

खाता है, इस तरह ज्ञानी मनुष्य मान के वश कष्ट में पड़कर निरंतर पाप का संचय करता रहता है।

दुनिया में इतने वीआईपी व वीवीआईपी हैं

हमारे यहाँ विशिष्ट और अतिविशिष्ट लोगों की संख्या दिनोंदिन बढ़ती जा रही है। आँकड़ें बताते हैं कि हमारे यहाँ इंग्लैंड की तुलना में पाँच लाख से ज्यादा लोग इस सूची में शामिल हैं.....

जर्मनी-142, रूस-312, इंग्लैंड-84, चीन-435, संयुक्त राज्य अमेरिका-252, भारत-5,79,092, फ्रांस-109, ऑस्ट्रेलिया-205, दक्षिण कोरिया-282, जापान-125. हमारे यहाँ फिल्म स्टार्स, शीर्ष नेताओं, कॉर्पोरेट जगत् की हस्तियों, प्रशासनिक अधिकारियों, पार्टी प्रमुखों, न्यायाधीश और कहीं-कहीं तो ग्राम पंचायत सदस्यों को भी वीआईपी व वीवीआईपी की सूची में शमिल किया गया है।

इस प्रार्थना को बार-बार दोहरायें

इस संसार के सभी लोग (ब्रह्माण्ड की सभी शक्तियाँ) मुझे सहयोग देते हैं (देती हैं) और इसके लिए मैं सबका कृतज्ञ हूँ। संसार में सभी लोगों व प्राणियों का अस्तित्व महत्वपूर्ण है। मेरे विकास में इन सबका महत्वपूर्ण योगदान है और मैं इसे मन से स्वीकार करता हूँ। मैं अत्यंत विनम्रतापूर्वक सहअस्तित्व के सिद्धांत को स्वीकार करता हूँ और हर प्रकार के आदान-प्रदान के लिए तत्पर हूँ।

-सीताराम गुप्ता

जब हम केवल अपने और अपने ही बारे में सोचते हैं तो दूसरों के बारे में सोचने का प्रश्न ही नहीं उठता। इस क्रम में हम दूसरे सभी लोगों के व्यक्तित्व अथवा दृष्टिकोण को नजरअंदाज कर देते हैं और इसके लिए हमारा अहंभाव ही पूर्ण रूप से उत्तरदायी होता है। स्वयं के प्रति इस प्रकार का अतिशय लगाव अस्वास्थ्यकर ही नहीं घातक भी है। हम अपने विचारों के प्रति पूरी तरह से पूर्वाग्राही होते हैं इसलिए अहंकार भी जड़ें जमाये रहता है। इस प्रकार का राग या अतिशय लगाव हममें रोष

उत्पन्न कर देता है। जब कोई विचार हमारे विचार को कमतर सिद्ध करने लगता है तभी नहीं अपितु किसी भी अन्य पूरक या उपयोगी विचार के कारण तक हममें रोष उत्पन्न होने लगता है। रोष के कारण हमारी नकारात्मकता बढ़ जाती है। हम किसी भी सूरत में दूसरे पायदान पर खड़े होने को तैयार नहीं होते। कारण स्पष्ट है कि स्वीकृति नामक तत्त्व हमसे कोसों दूर चला जाता है। राग या अतिशय लगाव ही अहंकार है और राग या अतिशय लगाव से छुटकारा पाकर ही हम अहंकार से मुक्त हो सकते हैं। राग नहीं द्वेष भी घातक है। दोनों से मुक्ति अनिवार्य है।

एक व्यक्ति हिन्दी में आपसे कुछ पूछ रहा है और आप उसका जवाब अंग्रेजी भाषा में दे रहे हैं और वो भी अंग्रेजी की तरह कंधे उचका-उचका कर। यह अहंकार नहीं तो और क्या है? आपका बच्चा ऑरेंज कैंडी खाने की जिद कर रहा है, लेकिन आप उसे महँगी चॉकलेट दिलवाकर ही दम लेते हैं। आपका अपना स्टेटस है, खरीदारी का भी। यह स्टेटस ही तो अहंकार है कि मैं इससे कम नहीं कर सकता, मैं होंडासिटी से छोटी कार नहीं रख सकता, मैं अमुक होटल या रेस्टोरेंट से कम स्तर वाले होटल में नहीं ठहर सकता या खाना खा सकता, मैं उस शख्स के मातहत काम नहीं कर सकता। हमें ब्राह्मण या अन्य उच्च जाति का रसोइया ही चाहिए। आप ऐसी कैब नहीं भेज सकते जिसका ड्राइवर हिन्दू हो? कभी कहते हैं कि हम पठान हैं और शिकार करना हमारा पेशा है और कभी कहते हैं मेरा धर्म भारतीय है। आप जो भी हैं, है बहुत अहंकारी। कभी भाषा के नाम पर, कभी नस्ल व धर्म-जाति के आधार पर, कभी क्षेत्र विशेष के रूप में, कभी रुपये-पैसे के द्वारा, कभी पद-प्रतिष्ठा के द्वारा, कभी बाहुबल के द्वारा अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने का प्रयास अहंकार के अतिरिक्त और कुछ नहीं।

मेरे एक मित्र हैं। साहित्य में रुचि रखते हैं। रुचि ही नहीं साहित्य की समझ भी है उन्हें। सामान्य ज्ञान भी अपेक्षाकृत अच्छा है। अपना पक्ष अत्यंत प्रभावशाली ढंग से रख सकते हैं। लोग प्रायः उन्हें डॉक्टर साहब कहकर पुकारते हैं। परिचित ही नहीं, नये लोग भी दो-चार मुलाकातों के बाद उन्हें डॉक्टर साहब ही कहने लगते हैं। कारण है-उनकी योग्यता। वास्तविकता योग्यता। पता नहीं वो कितने पढ़े-लिखे हैं, पर लोग उन्हें पीएच.डी. से कम मानने को तैयार ही नहीं होते। पहले तो वो बार-बार कहते थे

कि वो डॉक्टर कहलवाने की पात्रता नहीं रखते, लेकिन लोग उनकी बातचीत, साहित्य ज्ञान और उनके लेखन को देखकर ये मानने को तैयार ही नहीं होते कि वो पीएच.डी नहीं हैं। अब तो उन्होंने भी विरोध करना छोड़ दिया है। अब वो इसे लोगों की आकांक्षा, सद्भावना व प्यार के रूप में लेने लगे हैं।

कई बहुत पढ़े-लिखे लोग हैं। पीएच.डी. और डी.लिट्. ही नहीं न जाने कितने पढ़े-लिखे? कोई सीमा नहीं उनके ज्ञान की, उनकी विद्वता की। अनेक क्षेत्रों में महत्वपूर्ण काम किया व अनेक महत्वपूर्ण पदों पर आसीन रहे। सभी जानते-मानते हैं पर स्वयं कभी नहीं जताते। कभी अपने नाम से पूर्व डॉक्टर नहीं लिखते या बोलते। यह सादगी व शिष्टता निरहंकारिता ही तो है। हमारी वेशभूषा नहीं हमारा आचरण हमारी पहचान हो। हमारी डिग्री नहीं, उसका सार्थक उपयोग बताये कि हम कौन हैं? आजकल बहुत से लोग है जो दो महीने का योग विषयक कोई कोर्स करके अपने नाम से पूर्व डॉक्टर लिखने लग जाते हैं। कई लोग तो मात्र आठ घंटे का रेकी कोर्स करने के बाद ही स्वयं को डॉक्टर कहलवाना पसंद करते हैं। जब हम बाहरी प्रतीकों या छद्मावरण के सहारे स्वयं को बतलाने का प्रयास करते हैं तो वह अहंकार ही है।

एक अन्य परिचित हैं। अपने आपको बहुत मेंटेन करके रखते हैं। नफीस कपड़े पहनते हैं। डिजाइनर कुर्ता-पाजामा व जैकेट ही नहीं जूते, घड़ी, चश्मा सब ब्रांडेड मिलेंगे। माथे पर चंदन का खूबसूरत-सा तिलक जिसकी महक ही आकर्षित करने के लिए काफी। उनके तिलक को देखकर एक प्रसिद्ध टीवी धारावाहिक की पात्र रमोला सिकंद की डिजाइर बिंदियाँ याद आ जाती हैं। उनकी अंगुलियाँ सजी रहती हैं मोटी-मोटी कीमती रत्नों से जड़ी अंगूठियों से। दायें हाथ की कलाई पर हमेशा सजा रहता है कई बार लपेट देकर बाँधा गया मोटा-सा कलावा या रक्षासूत्र। गले में मालाएँ। व्यवसायी हैं। जब बाजार में होते हैं तो गले में पड़ी होती है मोटी-सी सोने की जंजीर। बाकी समय कभी स्फटिक की माला तो कभी रुद्राक्ष की माला व कभी अन्य कीमती पत्थरों की। बहरूपियापन है ये। आप जो वास्तव में हैं आपके कपड़े-लत्ते व आभूषण नहीं आपका आचरण बतलाये। आप जो हैं दिखे नहीं अपितु हों। किसी की बात काटनी हो, तो फौरन भगवान् को घसीट कर बीच में ले आयेंगे। किसकी मजाल तो एक शब्द भी उनके विरुद्ध बोल जाये? आगबबूला हो जायेंगे। क्रोधाधिक्य से

चेहरा तमतमाने लगेगा। रक्तचाप बढ़ने लगेगा पर अपनी बात को किसी भी तरह मनवा कर ही रहेंगे। जो लोग उनके विचारों से सहमत नहीं उनको नीचा दिखाने में कोई-कसर नहीं रख छोड़ते और इसके लिए कुछ चापलूस किस्म के लोगों को प्रश्रय देने व उनकी तारीफों के पुल बाँधने में पूरा जोर लगा देते हैं। ये सब अहंकार के पोषण की सामग्री ही तो है।

आपकी डिग्री को देखकर लोग आपको डॉक्टर कहे या आपके तिलक को देखकर लोग आपको पंडित जी कहे या आपकी दाढ़ी-मूँछों या चोगे के स्टाइल को देखकर या हाथ में पकड़ी हुई किताबों को देखकर लोग आपका मूल्यांकन करें, तो स्पष्ट है कि प्रतीकों के माध्यम से आप स्वयं ऐसा कहलवाना चाह रहे हैं। आप जो वास्तव में हैं अच्छे या बुरे, उपयोगी या अनुपयोगी उसे दबाना या छुपाना चाह रहे हैं। मजा तो तब है कि लोग आपके व्यवहार, आपके आचरण, आपके योगदान व आपकी सेवाओं के लिए स्वयं आपका सही मूल्यांकन करें। जब तक हम स्वयं को सही मूल्यांकन के लिए प्रस्तुत नहीं कर देते हमारा वास्तविक विकास संभव नहीं, क्योंकि अहंकार एक दुर्गुण है, एक मनोरोग है अतः इसका प्रभाव भी नकारात्मक ही होगा। अहंकार के प्रमुख लक्षणों को ऐसे पहचानें-

अहंकारी व्यक्ति अपने विचारों, सिद्धांतों अथवा हर सामान्य बात पर दूसरों से प्रशंसा पाना तथा उनकी स्वीकृति की मोहर लगवाना चाहता है और इसी के लिए चिंतित रहता है। यदि हम वास्तव में सही हैं तो फिर दूसरों की प्रशंसा या स्वीकृति-अस्वीकृति से क्या फर्क पड़ता है? यदि हमारी आलोचना भी होती है तो क्या फर्क पड़ता है? यदि हमारी सही आलोचना की जा रही है तो उसे स्वीकार करने में ही भलाई है। तभी हम अपेक्षित सुधार कर सकते हैं। अहंकारी व्यक्ति सहायता लेने से डरता है। हम चाहे कितने भी योग्य क्यों न हो दूसरों की मदद के बिना आगे नहीं बढ़ सकते, क्योंकि हम स्वयं में कोई मशीन नहीं, अपितु एक मशीन के पुर्जे मात्र हैं। कभी भी एक पुर्जा मशीन का स्थान नहीं ले सकता। आप दूसरों की मदद इसलिए नहीं लेना चाहते, क्योंकि आप कार्य या सफलता का सारा श्रेय स्वयं लेना चाहते हैं। एक अहंकारी व्यक्ति दूसरों की मदद लेने से तो परहेज करता है, लेकिन दूसरों पर अहसान टेकने के लिए उनकी मदद करने के अवसर नहीं चूकता। उसकी इच्छा

होती है कि सभी लोग अभावग्रस्त बने रहे और इस तरह उसे लोगों की मदद करके उन पर रौब गालिब करके अपने अहंकार की तुष्टि का मौका मिलता रहे। दान-दक्षिणा व धर्म के नाम पर भारी-भरकम आयोजन करके सर्दियों में सत्तर-सत्तर रुपल्ली के कंबल बाँटना अहंकार नहीं तो क्या है? एक अहंकारी व्यक्ति हमेशा दूसरों से अपनी तुलना करने में लगा रहता है और किसी भी कीमत पर किसी से कमतर नहीं दिखना चाहता जबकि वास्तविकता ये है कि दुनिया में हर तरह के लोग मौजूद हैं। हमसे बेहतर और कमतर दोनों तरह के लोग हैं। जीवन में आगे बढ़ने के लिए प्रतियोगिता बुरी बात नहीं, लेकिन यदि अहंकार वश हम हर व्यक्ति से प्रतियोगिता में लगे रहेंगे तो हमारा समय, संसाधन व ऊर्जा ही नष्ट होंगे जिन्हें हम अपेक्षाकृत उपयोगी कार्यों में लगाकर आगे बढ़ सकते थे। एक अहंकारी व्यक्ति हमेशा असंतुष्ट बना रहता है और संतुष्टि पाने के लिए पुनः अहंकार के वशीभूत होकर कार्य करने को विवश होता है। इस प्रकार अहंकार का दुष्चक्र कभी नहीं टूट पाता।

एक अहंकारी व्यक्ति हमेशा असंतुष्ट रहता है अतः अधिकाधिक पाने के लिए लालायित रहता है। वह लालची हो जाता है। चाहे उसे आवश्यकता हो या न हो दूसरों को दिखाने व उन पर रौब जमाने के लिए वह हर वस्तु की कामना करता है। कभी किसी की गाड़ी को देखकर अपनी गाड़ी बदलता है तो कभी किसी के घर की साज-सज्जा को देखकर अपने घर की साज-सज्जा बदलवाने को विवश होता है, लेकिन इन वस्तुओं की क्या कोई सीमा होती है? नहीं। इस तरह एक अहंकारी व्यक्ति हमेशा असंतुष्ट व लालची बना रहता है। किसी भी तरह अधिकाधिक धन कमाने व यश पाने की उसकी इच्छा पर लगाम नहीं लगती।

हर व्यक्ति की एक सीमा होती है। पैसे की ही नहीं, जानकारी की भी। अहंकारी व्यक्ति पैसे के प्रदर्शन के साथ अपने आप को हर क्षेत्र में प्रदर्शित करने की कोशिश करता है। साहित्य-संस्कृति, कला, ज्ञान-विज्ञान, इतिहास, राजनीति कोई भी क्षेत्र क्यों न हो हर जगह अपनी टाँग अड़ाने का प्रयास करता है। हर विषय पर बढ़-चढ़कर बोलने की कोशिश करता है। हर बात पर बहस करता है और कुतर्कों द्वारा स्वयं को सही साबित करने का प्रयास करता है।

अहंकारी व्यक्ति वर्तमान में न जीकर बीते हुए समय में विचरण करता रहता

है और भविष्य के लिए योजनाएँ बनाने में लगा रहता है। वह वर्तमान में उपलब्ध धन-दौलत, शौहरत, पद-प्रतिष्ठा व सुख-सुविधाओं का आनंद उठाने की बजाय अनिश्चित भविष्य में अधिक बेहतर स्थिति के चिंतन व कल्पना में खोया रहकर वर्तमान को नष्ट करने से नहीं चूकता। ये लक्षण कुछ-कुछ एक पागल व्यक्ति के लक्षणों से मिलते हैं। एक अहंकारी व्यक्ति किसी भी तरह से एक पागल व्यक्ति से कम नहीं होता।

अहंकारी व्यक्ति की एक सबसे बड़ी विशेषता या अवगुण है हमेशा सही होने या करने का दंभ। मैं जो करता हूँ वह उत्कृष्ट है या मैं जो करूँगा वही सर्वश्रेष्ठ होगा यह भाव सबसे घातक है। ऐसे व्यक्ति बहुत परिश्रमी हो सकते हैं और सफल भी लेकिन अपने अहंकार व जिद् के कारण जीवन में सबसे महत्वपूर्ण अवसर हाथ में आने पर असफल हो जाते हैं। उन्हें तो यही लगता है कि उनका रास्ता ही सर्वश्रेष्ठ है, लेकिन ये सत्य से परे है। अन्य लोग भी हमसे बेहतर समझ रखते हैं और हमसे बेहतर कर सकते हैं ये न मानना अहंकार के अतिरिक्त कुछ नहीं और ये सबसे घातक तत्त्व है।

अहंकारी व्यक्ति अपने से कम आर्थिक स्थिति व सामाजिक पद-प्रतिष्ठा वाले व्यक्ति को महत्व नहीं देता, जबकि अपने से अच्छी आर्थिक स्थिति व सामाजिक पद-प्रतिष्ठा वाले व्यक्ति की चापलूसी तक करने से बाज नहीं आता।

अहंकारी व्यक्ति स्वयं को सर्वज्ञ व सर्वगुण संपन्न मानता है अतः वह निरंतर सीखते रहने की प्रक्रिया से कट जाता है और वास्तव में अल्पज्ञ व अनुभवहीन बना रहता है।

अहंकारी स्वयं को सर्वश्रेष्ठ व अपने कार्यों को उत्कृष्ट मानता है अतः दूसरों के अनुभव से लाभ उठाने का प्रयास नहीं करता अतः कभी-कभी बहुत बड़े नुकसान में रहता है।

अहंकारी व्यक्ति अपने अहंकार व अस्वीकृति के कारण योग्य व्यक्तियों से दूर भागता है या योग्य व्यक्ति उसके व्यवहार के कारण उससे दूर रहने में ही अपनी भलाई समझते हैं, लेकिन इसका दुष्परिणाम अहंकारी व्यक्ति को ही भुगतना पड़ता है। ऐसी स्थिति में वह योग्य व्यक्तियों की संगति के अभाव में वास्तविक व्यावहारिक

ज्ञान से वंचित रह जाता है। योग्य व्यक्तियों के अनुभव का लाभ नहीं उठा सकता।

अहंकारी व्यक्ति क्योंकि हमेशा चापलूस व्यक्तियों से घिरा रहता है जो उसकी कमियों की तरफ संकेत नहीं करते अतः वह अपना सही मूल्यांकन कर अपनी कमियों को दूर करने का प्रयास नहीं कर सकता।

अहंकारी व्यक्ति केवल अपने अहंकार की तुष्टि के लिए हर कार्य करता है अतः वह विवेकशील नहीं हो सकता। जिस व्यक्ति का विवेक नष्ट हो जाता है उसका शीघ्र पतन निश्चित है।

अहंकार की तुष्टि के लिए व्यक्ति कई बार गलत काम भी कर बैठता है और उसका दुष्परिणाम उसे ही भुगतना पड़ता है। विषम परिस्थितियों में ऐसे लोगों को बचाने के लिए भी कोई तैयार नहीं होता।

अहंकारी व्यक्ति की सामाजिक प्रतिष्ठा नष्ट हो जाती है। लोग बेशक उसके सामने कुछ नहीं बोलें, लेकिन उसके पीछे न केवल उसकी बुराई करते हैं अपितु उससे बचने व संबंध सीमित रखने का भी प्रयास करते हैं। इससे अहंकारी व्यक्ति का सामाजिक जीवन ही नहीं व्यवसाय भी प्रभावित होता है।

व्यक्ति अहंकार से युक्त होगा उसका परिवार भी कमोबेश उस जैसा ही होगा अतः पूरे परिवार का सामाजिक व आर्थिक जीवन प्रभावित होना स्वाभाविक है। यदि परिवार ठीक है तो अहंकारी व्यक्ति का परिवार के साथ ठीक ताल-मेल नहीं बैठता। वह घर-परिवार से भी कट जाता है या उसकी उपेक्षा शुरू हो जाती है जो उसके स्वाभाविक विकास में बाधक है।

अहंकारी व्यक्ति का वास्तव में कोई मित्र नहीं हो सकता। वह अच्छे मित्रों से वंचित रहकर एकाकी जीवन जीने को अभिशप्त होता है। अपनी आदतों के कारण एक अहंकारी व्यक्ति समाज में उपहास का पात्र भी बनता है।

क्योंकि एक अहंकारी व्यक्ति हमेशा असंतुष्ट रहता है, शंकित रहता है, एकाकी रहता है अतः उसका मानसिक संतुलन भी कई बार बिगड़ जाता है। वह तनाव में रहने लगता है। ऐसी स्थिति में उसको कई मनोदैहिक व्याधियाँ भी घेर लेती हैं और अहंकार का यह दुष्चक्र अभेद्य हो जाता है।

तो क्या बचने की कोई राह नहीं?-मनुष्य के सर्वांगीण व स्वाभाविक

विकास के लिए अहंकार के अभेद्य दुष्चक्र को तोड़ना अनिवार्य है। इसके लिए निम्नलिखित उपायों पर विचार किया जा सकता है। स्वयं को श्रेष्ठता के भाव से मुक्त करें। इसका ये अर्थ नहीं कि हम स्वयं के कार्यों को महत्व न दे अपितु दूसरों के विचारों और काम को भी पूरा महत्व दें। आलोचना से बचने की अपेक्षा उसे स्वीकार कर स्वयं को सुधारने का प्रयास करें। अपनी गलतियों को स्वीकार करें। इसके अभाव में सुधार की संभावना अत्यंत क्षीण व नगण्य है। अपना सम्यक् मूल्यांकन करें। दूसरे लोग जब आपकी कमियाँ बताये तो उन पर क्रोध करने की बजाय उनका धन्यवाद करें क्योंकि यही एकमात्र उपाय है स्वयं को गलतियों से मुक्त करने और अहंकार से बचने का। पद-प्रतिष्ठा व आर्थिक आधार पर छोटे-बड़े के भाव से मुक्त होना भी अनिवार्य है। जब तक किसी भी आधार पर असमानता का भाव बना रहेगा अहंकार से मुक्ति भी संभव नहीं। जब भी जरूरत हो दूसरों से सलाह-मशविरा करें, उनकी हर प्रकार की सहायता लें। दूसरों का अहसान लेने में भी कोई बुराई नहीं क्योंकि इससे हममें कृतज्ञता का भाव उत्पन्न होगा जिससे अहंकार के विसर्जन में सहायता मिलेगी। दूसरों की सहायता भी करें। आदान-प्रदान जीवन का महत्वपूर्ण तत्त्व है। दूसरे लोगों से सीखने व उनके अनुभवों से लाभ उठाने का निश्चय करें। इससे उनके करीब जाने व असमानता को दूर करने में सहायता मिलेगी। मेल-जोल से मित्रता बढ़ेगी, सामाजिकता का विकास होगा। इस बात को शिद्दत से जान ले कि दूसरों के सहयोग के अभाव में हम एक कदम भी आगे नहीं जा सकते। कार्यक्षेत्र में सबके कार्य को महत्व दें। किसी की गलती के लिए शिकायत करने की बजाय गलती को ठीक करने का सुझाव दे व हर अच्छे कार्य के लिए प्रशंसा करें। हर तरह के पूर्वाग्रह से मुक्त रहें। संबंधों में खुलापन होना अनिवार्य है। दोस्तों से बेतकल्लुफी से मिलें। उनसे बराबरी का व्यवहार करें। घर में हिटलर की तरह नहीं अपितु एक पिता, पति, पुत्र, भाई या बहन की तरह व्यवहार करें। सबको पूरा स्पेस प्रोवाइड करवायें। सबको महत्वपूर्ण होने का आभास करवायें। स्वामी चिन्मयानंद कहते हैं कि एक बच्चे की तरह बनो और ऐसा बनो कि बच्चे तुम्हें पसंद करें। एक बच्चे में न तो अहंकार होता है और न वह अहंकारी का साथ ही पसंद करता है। एक बच्चे की

तरह निर्मल मन हो जायेंगे तो अहंकार भी काफूर हो जायेगा। इस अहसास को कभी विस्मृत न करे कि हमको किसी ने जन्म दिया है, पाला-पोसा है और इस सभ्यता व संस्कृति के विकास में करोड़ों लोगों और कई सहस्राब्दियों का योगदान है जिसमें हम सुखपूर्वक रह रहे हैं। याद रखे कि इस असीमित व अपरिमित ब्रह्माण्ड रूपी मशीन में मैं एक अत्यंत छोटा-सा पुर्जा हूँ। अन्य पुर्जों के अभाव में मेरा कोई अस्तित्व ही नहीं। सह-अस्तित्व के सिद्धांत को हमेशा याद रखें।

कहने को तो और भी बहुत कुछ है, लेकिन जो कहा गया है क्या वही सब करना सरल है? सचमुच कठिन है अहंकार से मुक्त होना। मात्र कहने से बात नहीं बनने वाली। इसके लिए योगमय जीवन अपेक्षित है। ध्यानावस्था में जाकर इन संकल्पों अथवा सुविचारों को दृढ़ करना ही एकमात्र उपाय या उपचार है। यहाँ कुछ स्वीकारोक्तियाँ दी जा रही हैं। ध्यानावस्था में जाकर इन्हें बार-बार दोहराने से अहंकार के विसर्जन में अवश्य सहायता मिलेगी।

जिनकी विद्या विवाद के लिए, धन अभिमान के लिए, बुद्धि का प्रकर्ष ठगने के लिए तथा उन्नति संसार के तिरस्कार के लिए है, उनके लिए प्रकाश भी निश्चय ही अंधकार है। -क्षेमेंद्र

तेरे-मेरे बीच में 'मैं' (अहंकार) की इक दीवार

साधना के एक आचार्य कुछ साधकों को ध्यान करवा रहे थे। उन्होंने कहा कि सभी साधक आँखें बंद करके अपना ध्यान जमीन से बीस फीट ऊपर ले आयें। अब ध्यान को वहीं रोक लें और वहीं से सभी साधकों को देखें। साधकों के बीच स्वयं को भी देखें। अन्य साधकों की अपेक्षा स्वयं की आकृति अधिक स्पष्ट और ऊँची दिखलाई पड़ रही होगी? यही अहंकार है। ध्यानावस्था में ही नहीं चेतन अथवा अचेतन किसी भी अवस्था में स्वयं को दूसरों से बेहतर, सबसे अलग मानने की भावना अहंकार है। मैं बड़ा हूँ, मैं सुंदर हूँ, मैं सबसे योग्य हूँ, मैं सबसे ईमानदार हूँ, सभी लोग मेरा बहुत आदर करते हैं, सभी मुझसे डरते हैं, सभी मुझसे प्यार करते हैं, मेरी योग्यता के कारण लोग मुझसे ईर्ष्या करते हैं। इस प्रकार के सभी भाव अहंकार को ही दर्शाते हैं।

अभिमान जब नम्रता का महोरा पहन लेता है, तब ज्यादा ही घृणास्पद होता है। -कम्बरलेट

जिसे खुद का अभिमान नहीं, रूप का अभिमान नहीं, लाभ का अभिमान नहीं, ज्ञान का अभिमान नहीं, जो सर्व प्रकार के अभिमान को छोड़ चुका है, वही संत है।-महावीर स्वामी

सभी महान् भूलों की नींव में अहंकार ही होता है। -रस्किन

नियम के बिना और अभिमान के साथ किया गया तप व्यर्थ ही होता है।

प्रयत्न न करने पर भी विद्वान् लोग जिसे आदर दे, वही सम्मानित है। इसलिए दूसरों से सम्मान पाकर भी अभिमान न करें। -वेदव्यास

शांति से क्रोध केा जीते, मृदुता से अभिमान को जीते, सरलता से माया को जीते तथा संतोष से लाभ को जीते। -दशवैकालिक

पौधों की कोशिकाओं में भी मानव मस्तिष्क जैसा होता है विकास का एक समान क्रम

अगर कोई यह कहे कि इंसान के दिमाग की तरह ही पौधों की कोशिकाओं का भी विकास होता है तो शायद यह अटपटा लगे। लेकिन ताजा वैज्ञानिक अध्ययन तो यही कहते हैं कि पौधों का ढाँचागत विकास इंसान के दिमाग की तरह ही होता है। इस पर बदले वातावरण का असर न के बराबर होता है। मौसम क्लाउडी हो या सनी, दोनों स्थितियों में पौधे विकास के क्रम में एक-समान नियमों का पालन करते हैं, जैसे इंसान के न्यूरल ब्रांचेज के विकास में होता है।

नया शोध कुछ दिनों पहले 'करेंट बायोलॉजी जर्नल' में प्रकाशित हुआ है। 3डी लेजर स्कैनिंग तकनीक का गणितीय व सांख्यिकी विश्लेषण के आधार पर इस बात को सही पाया गया है कि इंसानी दिमाग और पौधों की कोशिकाएँ विकास क्रम में एक ही यूनिवर्सल रूल को फोलो करते हैं।

गौसियन रूल्स है तत्त्वों के बीच विचलन का संकेतक, सभी तरह के मौसम

में विकास पर एक समान प्रभाव।

शोध का मकसद–इस बात की वैज्ञानिक जानकारी हासिल करना कि क्या विभिन्न प्रजातियों के पौधे एक समान विकास क्रम के नियमों का पालन करते हैं या अलग।

चौंकाने वाला रहा परिणाम–साल्क सेंटर के प्रोफेसर साकेत नवलखा और प्रोफेसर चार्ल्स स्टीवेंस का कहना है कि विकास क्रम में पौधे गौसियन रूल्स को फॉलो करते हैं। पौधे एक ही स्थान पर स्थिर होने के कारण पर्यावरणीय चुनौतियों के अनुरूप खुद को एडजस्ट कर लेते हैं और मानव मस्तिष्क के न्यूरोंस की तरह एक समान नियमों का पालन करते हैं। दोनों के बीच यह समानता वैज्ञानिकों के लिए चौंकाने वाली है।

3डी तकनीक का प्रयोग–इस बात का पता लगाने के लिए शोध दल ने 3डी स्कैनिंग तकनीक का इस्तेमाल कर आँकड़ें हासिल किये। प्राप्त आँकड़ों का गणितीय, सांख्यिकीय और कंप्यूटर विधि के आधार पर विश्लेषण किया और इस निष्कर्ष तक पहुँचे।

अनुकूलित करने की क्षमता बहुत ज्यादा–बात अजवायन जैसे छोटे पौधे के विकास की हो या विशाल रेडवुड की, सभी पौधे परिस्थितियों के अनुकूल खुद को ढाल लेते हैं। आप यह कह सकते हैं कि उनमें खुद को अनुकूलित कर लेने की क्षमता बहुत ज्यादा होती है।

साल्क से मिला फंड–शोध के लिए साल्क नवाचार अनुदान कार्यक्रम और हॉवर्ड ह्युजेस मेडिकल इंस्टीट्यूट से फंड मिला। इस फंड का उपयोग ज्वार, टमाटर और तम्बाकू के पौधों को अलग-अलग वातावरण में रखकर शोध किया गया।

अध्ययन में 600 पौधे शामिल–इस प्रक्रिया में एडम कॉन ने करीब 600 पौधों के विकास के क्रम को एक महीने तक डिजिटल फॉर्मेट में स्कैन किया। उन्होंने पौधों का स्कैन ठीक उसी तरह किया गया, जिस तरह कोई कागज के टुकड़े का स्कैन करता है, ताकि पौधों की सभी संरचनाओं व शाखाओं की स्थितियों को कैद करना संभव हो सकें।

अहम चुनौतियाँ-वैज्ञानिकों का कहना है कि अब हमारे सामने यह पता लगाने की अहम चुनौती है कि कृषिगत फसलों की प्रजातियों में भी क्या समान या अलग विकास होता है।

विकास के मामले में आत्मनिर्भर-शोध निष्कर्ष के अनुसार पौधों में वातावरण के अनुरूप खुद को ढाल लेने की क्षमता होती है। शोधकर्त्ता यह मानकर चल रहे थे कि विकास के अलग-अलग प्रतिमान सामने उभरकर सामने आयेंगे। नया तथ्य सामने आने के बाद शोधकर्त्ताओं ने जेनेटिकली इंजीनियरिंग क्रॉप्स के मूल्यांकन की अपनी रणनीति में बदलाव करने के संकेत दिये हैं।

वृक्ष की शिक्षा : बच्चों के द्वारा

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : चंदा मामा दूर के....., जिंदगी एक सफर.....)

आओ प्यारे बच्चों आओ...उछल-कूदकर शीघ्र आओ...
मेरे पके फल भी खाओ...खाओ खिलाओ प्रसन्न रहो...(1)

पशु-पक्षी भी मेरे खाते फल...मेरे तन भी विश्राम स्थल...
मेरे बीजों को दूर फैलाते...बीज से वृक्ष फल भी देते...(2)

सबको मैं देता फूल-फल...छाया से ले प्राणवायु तक...
काष्ठ से लेकर औषधि तक...प्रदूषणों को (भी) मैं करता दूर...(3)

सुख-दुःख मैं सभी सहता...सर्दी-गर्मी-बाढ़ सहता...
तो भी मैं परोपकार करता...अपना-पराया भेद न करता...(4)

तो भी पशु से भी कृतघ्न मानव...क्रूरता से मेरा करे संहार...
जिससे पावे दुःख अपार...ताप वृद्धि से ले नाना बीमार/(विकार)...(5)

ऐसा काम भी तुम न करना...स्व-परघाती तुम न बनना...
तीर्थंकर-बुद्ध सम बनना...कृषक-वैज्ञानिक सम बनना...(6)

मेरा मूक उपदेश (तुम) मानना...मेरे फल खाने हेतु भी आना...
कम बोला तुम अधिक समझना... 'सूरी कनक' का काव्य गाना...(7)

सीपुर, दिनांक 15.05.2017, प्रातः 8.05

(शौच क्रिया व भ्रमण हेतु जाते समय कुछ बच्चे खजूर वृक्ष के नीचे फल चुनकर खा रहे थे-इससे प्रेरित यह काव्य बना।)

शब्दों का शुक्रिया

चंद शब्दों से बना कथन कई जीवन सँवार देता है, इसलिए सूक्ति बन जाता है। साधारण-से लगने वाले ये वाक्य मन मथने की ताकत ही नहीं रखते, बल्कि जीवन बदल देने का हौसला भी देते हैं। यह हौसला अब आप दूसरों को दीजिये।

उक्तियाँ किसी के बड़े कथन का हिस्सा हो सकती हैं या निचोड़ भी, लेकिन होती बड़ी प्रेरणास्पद हैं। यह भी एक तरह से दूसरों को देना ही है। जीवन के किसी भी पक्ष पर सकारात्मक वचनों का खजाना मिल सकता है। हम सदा सकारात्मक बने रहने और हर परिस्थिति से पार पा लेने की कोशिश तो करते हैं, पर कभी निराशा भी घेर लेती है। तभी किसी के शब्द दीप की तरह आशा को जगा जाते हैं।

मिसाल के तौर पर, अगर हमारे साथ कोई बुरा व्यवहार करता है, तो हम इस पड़ताल में लग जाते हैं कि हमारा कुसूर क्या था। इस विषय की चर्चा करती इंस्टाग्राम पर एक उक्ति साझा हुई-

लोग आपके साथ अगर दुर्व्यवहार करते हैं, तो इससे केवल यही साबित होता है कि वे खुद कैसे इंसान हैं। इसका आपसे कोई ताल्लुक नहीं।

मन को आराम मिला न! यह शक्ति है इन शब्दों की।

भय से भरी हुई आँखों में सपनों के लिए कोई जगह नहीं हो सकती।

दोनों को जोड़कर देखिये। तरक्की की राह से पीछे खींचने वाले लोगों और ख्यालों से आजादी पाने में बहुत मदद मिल सकती है। उक्तियों के थोड़े से शब्दों में ढेर सारी ताकत समा सकती है। हम कब, किससे, कैसे मुतासिर होंगे, क्या दिल की दीवारों पर चस्पा हो जायेगा और क्या रोशनी बनकर जीवन की राह दिखाने लगेगा, यह हमारी मनःस्थिति या जीवन की उस समय की परिस्थिति पर निर्भर करता है। अब रॉबर्ट फ्रॉस्ट की कही बात सुनें-

मैं चार शब्दों में वह सबकुछ बयाँ कर सकता हूँ जो मैंने जिंदगी के बारे में सीखा और समझा है-यह चलती रहती है।

कितनी सरलता से जीवन का मर्म समझा दिया गया है! गर किसी को फिर भी हालात से शिकायत हो, तो लेखक अल्फॉन्से का कथन याद रहे-

कुछ लोगों को शिकायत होती है कि गुलाब में काँटें होते हैं। मैं शुक्रगुजार हूँ कि काँटों को गुलाब का साथ मिला है।

नया नजरिया, सोच कोई नई दिशा मिल जाती है उक्तियों से। हेनरी रोलिंस के शब्द हैं-मेरी आशा भारी-भरकम कदमों से चलती है और काफी जोर से बोलती है।

और यह बात कितनी सच्ची है-

विजेता जीत पर ध्यान लगाते हैं और पराजित विजेताओं पर।

विजय एक या दो अवसरों पर सबसे आगे निकल जाने को नहीं कहते। यह सोच का हिस्सा बने, तो बात है। जीत का जज्बा, रवैया ही बन जाये, तो एक अलग ही सूरत सामने आयेगी सोच की। राह रोकने वालों और आत्मविश्वास को कम करने वालों की कमी नहीं। एक स्त्री की साझा की गई इस उक्ति को याद रखेंगे, तो जीत का जज्बा आ जायेगा।

शैतान ने मेरे कान में कहा-इस तूफान का सामना तुम नहीं कर पाओगी।

मैं उसके कान में फुसफुसाई-मैं ही तूफान हूँ।

देने के सुख पर केंद्रित मधुरिमा का यह अंक आपकी सोच की गहराइयों में कुछ हलचल पैदा कर सकेगा और हम सब समाज को, आपस में एक-दूसरे के जीवन को बेहतर बनाने में योगदान दे पायेंगे, इस उम्मीद के साथ सादर समर्पित है।

स्व-वश V/S पर-वश

(चाल : आत्मशक्ति.....)

<u>स्व-वश-पर-वश</u> स्वरूप को जानो, निश्चय-व्यवहार रूप पहचानो।
परम-स्व-वश है स्व-शुद्धात्मा आधीन, इससे भिन्न/(विपरीत) परवश निदान।। (1)

स्व-वश ही है स्वाधीन-स्वतंत्र, स्वावलंबन-संयम व स्व-नियंत्रण।
मुक्ति-निर्वाण व मोक्ष-परिनिर्वाण, द्रव्य-भाव-नोकर्म रहित चैतन्य।। (2)

सचित्त-अचित्त-मिश्र के आधीन, राग द्वेष मोह काम क्रोधादि से नियंत्रण।
शत्रु-मित्र भाई-बंधु के बंधन, ये सब परवश इससे परे स्वाधीन।। (3)

आत्मविश्वास ज्ञान चारित्र द्वारा, उत्तम क्षमादि दशधर्म के द्वारा।
समता-शांति-निस्पृह आकिंचन्य द्वारा, परवश नाश से मिले स्व-वश पूरा।। (4)

इससे भिन्न एकेंद्रिय से पंचेन्द्री (देव) तक, देव मानव नारकी तिर्यंच/(सिंह) तक।
भिखारी से लेकर चक्रवर्ती तक, होते हैं परवश निश्चय-व्यवहार रूप।। (5)

राग द्वेषादि के वश होना निश्चय परवश, राग द्वेषादि से परे होना निश्चय स्व-वश।
अन्य के वश में होना व्यवहार परवश, निश्चय परवश ही निश्चय पराधीन/(परवश)।। (6)

दूसरों से प्रतिस्पर्द्धा व दबाव-जीत भी, होती है अंतरंग स्व की विवशता।
स्व से प्रतिस्पर्द्धा से स्व-विजय ही, होती है अंतरंग स्व की वशता।। (7)

तीर्थंकर थे राजकुमार से चक्री तक, तथापि स्वाधीन/(मोक्ष) हेतु त्यागते वैभव।
राग द्वेषादि नाश करते आत्म साधना से, परम स्वतंत्र बनते स्वात्मा से/(में)।। (8)

जीव की ऐसी दशा ही है परमात्मा, अन्य अवस्था में जीव न परमात्मा।
यथा-यथा जीव होते जाते हैं शुद्ध, तथा-तथा वे होते जाते स्वतंत्र।। (9)

नदी में बह जाना सम होता परवश, नदी में तैरना सम होता है स्व-वश।
शुद्ध-बुद्ध आनंदमय होता है स्व-वश, इसे ही प्राप्त करना 'कनक' का परम लक्ष्य।। (10)

ग.पु.कॉ. सागवाड़ा, दिनांक 29.06.2017, मध्याह्न 12.51

संदर्भ-

जीत/जीत (Win/Win)

जीत/जीत मस्तिष्क और हृदय की ऐसी मनोदशा है, जो समस्त मानवीय व्यवहार में पारस्परिक लाभ की निरंतर तलाश करती है। जीत/जीत/ का अर्थ है कि अनुबंध या समाधान पारस्परिक रूप से लाभप्रद और संतुष्टिदायक है। जीत/जीत/ समाधान होने पर सभी पक्ष निर्णय के बारे में अच्छा महसूस करते हैं और कार्ययोजना के प्रति निष्ठावान होते हैं। जीत/जीत जीवन के प्रतियोगी क्षेत्र के रूप में न देखकर सहयोगी क्षेत्र के रूप में देखती है। अधिकांश लोगों में द्वैत (dichotomies) के

संदर्भ में सोचने की प्रवृत्ति होती है-शक्तिशाली या कमजोर, हार्ड बॉल या सॉफ्टबॉल, जीत या हार। परंतु इस तरह का सोच मूलभूत रूप से दोषपूर्ण है। यह सिद्धांत के बजाय शक्ति और पद पर आधारित है। जीत/जीत इस पैरेडाइम पर आधारित है कि सभी के लिए बहुत है और एक व्यक्ति की सफलता का अर्थ दूसरे की असफलता नहीं है; सफलता दूसरों की कीमत पर या उन्हें सफलता के दायरे से बाहर रखकर प्राप्त नहीं की जाती।

जीत/जीत तीसरे विकल्प में विश्वास है। यह आपका या मेरा तरीका नहीं है, यह एक बेहतर तरीका है, एक अधिक उच्च तरीका है।

जीत/हार (Win/Lose)

जीत/जीत का एक विकल्प जीत/हार है यानी बरमुडा के लिए दौड़ का पैरेडाइम। यह कहता है, 'अगर मैं जीतता हूँ, तो आप हारते हैं।'

जीत/हार तानाशाही की लीडरशिप शैली है-'मैं जीत जाऊँगा, आप हार जायेंगे।' जीत/हार की मानसिकता वाले लोगों में जीतने या अपना लक्ष्य पाने के लिए अपने पद, शक्ति, परिचय (credentials), स्वामित्व की वस्तुओं या व्यक्तित्व का प्रयोग करने की प्रवृत्ति होती है।

ज्यादातर लोगों को जन्म से ही जीत/हार की मानसिकता में गहराई से स्क्रिप्ट किया गया है। यह काम करने वाली पहली और सबसे महत्वपूर्ण शक्ति परिवार है। जब एक बच्चे की दूसरे से तुलना की जाती है-जब धैर्य, समझ या प्रेम इस तुलना के आधार पर दिया जाता है या छीन लिया जाता है-तो लोग जीत/हार की सोच अपना लेते हैं। जब भी प्रेम शर्तों पर दिया जाता है या जब भी लोगों को प्रेम अर्जित करना पड़ता है, तो उन तक यह संदेश पहुँचता है कि वे आंतरिक रूप से मूल्यवान या प्रेम करने योग्य नहीं हैं। उनका मूल्य उनके भीतर निहित होने के बजाय बाहर स्थित है; उनका मूल्य किसी दूसरे व्यक्ति या अपेक्षा से तुलना में है।

और शर्तों पर आधारित प्रेम की स्थिति में उस नन्हे दिल और दिमाग के साथ क्या होता है, जो अत्यंत संवेदनशील है और अपने माता-पिता के समर्थन व भावनात्मक संबल पर बहुत निर्भर है। बच्चे को जीत/हार की मानसिकता में ढाला,

आकार दिया और प्रोग्राम किया जाता है।

'अगर मैं अपने भाई से ज्यादा अच्छा बन जाऊँ, तो मेरे माता-पिता मुझसे ज्यादा प्यार करेंगे।'

'मेरे माता-पिता मुझसे उतना प्यार नहीं करते, जितना मेरी बहन से करते हैं। शायद मैं उतना मूल्यवान नहीं हूँ।'

स्क्रिप्टिंग करने वाला एक और सशक्त माध्यम साथियों का समूह होता है। बच्चा पहले अपने माता-पिता से और फिर अपने साथियों से स्वीकृति चाहता है, चाहे वे भाई-बहन हो या मित्र और हम सब जानते हैं कि साथी कई बार बहुत निष्ठुर हो सकते हैं। वे अक्सर लोगों को इस आधार पर पूर्णतः स्वीकार या अस्वीकार करते हैं कि वे उनकी अपेक्षाओं और मानदंडों का पालन करते हैं या नहीं। इससे जीत/हार की एक और स्क्रिप्ट लिखी जाती है।

शिक्षा जगत् जीत/हार की इस स्क्रिप्ट को और अधिक शक्तिशाली बनाता है। 'सामान्य वितरण वक्र' (normal distribution curve) मूलतः बताता है कि आपको 'ए' ग्रेड इसलिये मिला, क्योंकि किसी और को 'सी' ग्रेड मिला है। यह किसी विद्यार्थी के मूल्य का आकलन बाकी विद्यार्थियों से तुलना करके करता है। आंतरिक मूल्य पर कतई ध्यान नहीं दिया जाता। हर विद्यार्थी को बाह्य रूप से परिभाषित किया जाता है।

'अच्छा आप आ गये! हमारी पी.टी.ए. मीटिंग (पालक-शिक्षक संघ की बैठक) में आपको देखकर बहुत अच्छा लगा। आपको अपनी बेटी कैरोलिन पर सचमुच गर्व होना चाहिए। वह सबसे ऊपर के 10 प्रतिशत विद्यार्थियों में है।'

'यह सुनकर अच्छा लगा।'

'परंतु आपके बेटे जॉनी की हालत खराब है। वह सबसे नीचे के 25 प्रतिशत विद्यार्थियों में है।'

'क्या सचमुच? ओह, यह भयानक है! हम इस बारे में क्या कर सकते हैं?'

इस तरह की तुलनात्मक जानकारी आपको यह नहीं बताती कि शायद जॉनी अपने सभी आठ सिलेंडरों (cylinders) का प्रयोग कर रहा है, जबकि कैरोलिन अपने आठ में से सिर्फ चार सिलेंडरों का ही प्रयोग कर रही है। परंतु विद्यार्थियों को

उनकी क्षमता या उसके पूरे प्रयोग के हिसाब से ग्रेड्स नहीं मिलते। उन्हें दूसरे विद्यार्थियों से तुलना के आधार पर ग्रेड्स मिलते हैं और ग्रेड्स सामाजिक मूल्य के संवाहक हैं। वे अवसर का द्वार खोलते या बंद करते हैं। शैक्षणिक प्रक्रिया के केंद्र में सहयोग नहीं, बल्कि प्रतिस्पर्धा है। सच तो यह है कि सहयोग को आमतौर पर नकल के साथ जोड़ा जाता है।

सशक्त प्रोग्रामिंग का एक और माध्यम है खेलकूद, खासकर हाई स्कूल या कॉलेज के युवाओं के लिए। वे अक्सर यह मूलभूत पैरेडाइम विकसित कर लेते हैं कि जीवन जीत-हार का एक बड़ा खेल है, जहाँ कुछ लोग जीतते हैं और कुछ लोग हारते हैं। 'जीतने' का अर्थ है खेल के मैदान में दूसरों को 'हराना।'

एक और माध्यम है कानून। हम एक ऐसे समाज में रहते हैं, जिसे मुकदमेबाजी पसंद है। जब भी लोग किसी मुश्किल में पड़ते हैं, तो ज्यादातर के मन में पहला विचार यह आता है कि किसी पर मुकदमा ठोंक दें, उसे अदालत में घसीटकर ले जाये और किसी दूसरे को हराकर खुद 'जीत' जायें। परंतु रक्षात्मक मस्तिष्क न तो रचनात्मक होते हैं, न ही सहयोगी।

निश्चित रूप से हमें कानून की जरूरत है, वरना समाज का विघटन हो जायेगा। यह रक्षा तो करता है, परंतु यह सिनर्जी की रचना नहीं करता। सर्वश्रेष्ठ रूप में इसका परिणाम समझौता होता है। कानून विरोध या शत्रुता की अवधारणा पर आधारित है। हाल ही में एक प्रवृत्ति विकसित हुई है, जिसमें वकीलों और विधि महाविद्यायों को प्रोत्साहित किया जाता है कि वे शांतिपूर्ण समझौता-वार्ताओं, जीत/जीत की तकनीकों और निजी अदालतों के प्रयोग पर अपना ध्यान केंद्रित करें। हो सकता है यह अंतिम समाधान न हो, परंतु यह निश्चित रूप से इस समस्या के प्रति बढ़ती हुई जागरूकता दर्शाता है।

सचमुच प्रतियोगी और कम विश्वास की स्थितियों में निश्चित रूप से जीत/हार की सोच का स्थान होता है। परंतु अधिकांश जीवन प्रतियोगिता नहीं है। हमें हर दिन अपने जीवनसाथी, बच्चों, साथियों, पड़ोसियों और मित्रों के साथ प्रतियोगिता करने की जरूरत नहीं है। 'आपके वैवाहिक जीवन में कौन जीत रहा है?' एक मूर्खतापूर्ण प्रश्न है। अगर दोनों नहीं जीत रहे हैं, तो दोनों हार रहे हैं।

अधिकांश जीवन आत्मनिर्भर वास्तविकता नहीं, बल्कि परस्पर-निर्भर वास्तविकता है। आपके द्वारा चाहे गये अधिकांश परिणाम आपके और दूसरों के बीच के आपसी सहयोग पर निर्भर करते हैं और जीत/हार की मानसिकता सहयोग की विरोधी (dysfunctional) है।

हार/जीत (Lose/Win)

कुछ लोगों की प्रोग्रामिंग हार/जीत की होती है।

'मैं हार जाता हूँ, आप जीत जायें।'

'आगे निकल जाइये। मेरे साथ मनचाहा सलूक कीजिये।'

'मुझ पर पैर रखकर चढ़ जाइये। सब यही करते हैं।'

'मैं हारने वाला हूँ। मैं हमेशा हारता रहता हूँ।'

'मैं शांति चाहता हूँ। शांति बनाये रखने के.लिए मैं कुछ भी करने को तैयार हूँ।'

हार/जीत तो जीत/हार से भी बुरी है, क्योंकि इसके कोई मानदंड (standards) नहीं हैं-न कोई माँग, न कोई अपेक्षा, न ही भविष्य-दृष्टि। जिन लोगों की मानसिकता हार/जीत की होती है, वे आमतौर पर दूसरों को खुश करने या संतुष्ट करने में तत्परता दिखाते हैं। वे लोकप्रियता या स्वीकृति के माध्यम से शक्ति चाहते हैं। उनमें अपनी भावनाओं और विश्वासों को व्यक्त करने का साहस नहीं होता और वे दूसरों के अहं की शक्ति से आसानी से डर जाते हैं।

समझौता वार्ता में हार/जीत की मानसिकता को आत्मसमर्पण के रूप में देखा जाता है-या तो हार मान लेना या फिर छोड़ देना। लीडरशिप की शैली में यह स्वच्छंदता या पूरी छूट देना है। हार/जीत का अर्थ अच्छा इंसान बनना है, भले ही 'अच्छे इंसान दौड़ में सबसे आखिर में आयें।'

जीत/हार की मानसिकता वाले लोग हार/जीत की मानसिकता वाले लोगों से प्रेम करते हैं, क्योंकि वे उन्हें अपना आहार बना सकते हैं। वे उनकी कमजोरियों को पसंद करते हैं, क्योंकि वे उनका लाभ उठाते हैं। ये कमजोरियाँ उनकी शक्तियों की पूरक होती हैं।

परंतु समस्या यह है कि हार/जीत वाले लोग अपनी बहुत-सी भावनाओं को अपने भीतर दफन कर लेते हैं और अव्यक्त भावनाएँ कभी नहीं मरती; वे जिंदा दफन रहती हैं तथा बाद में भद्दे तरीकों से सामने आती हैं। मनोदैहिक रोग (खासकर श्वास संबंधी, नर्वस या रक्त संचार तंत्र संबंधी रोग) अक्सर उस संगृहीत ईर्ष्या, गहरी निराशा या मोहभंग के कारण होते हैं, जिसे हार/जीत की मानसिकता द्वारा दबाया या दफनाया गया था। अनुपातहीन क्रोध, छोटी-सी बात पर बहुत ज्यादा प्रतिक्रिया और दोषदर्शिता दमित भावनाओं के अन्य मूर्त रूप हैं।

जो लोग लगातार अपनी भावनाओं को दबाते रहते हैं, जो भावनाओं को सार्थकता के अधिक उच्च स्तर तक नहीं ले जाते, वे पाते हैं कि इससे उनके आत्मसम्मान की गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है और अंततः दूसरों के साथ उनके संबंधों की गुणवत्ता पर भी।

जीत/हार और हार/जीत दोनों ही कमजोर स्थितियाँ हैं, जिनका आधार व्यक्तिगत असुरक्षाएँ हैं। कम समय में जीत/हार से अधिक परिणाम मिलेंगे, क्योंकि यह अक्सर शीर्षस्थ लोगों की महत्वपूर्ण शक्तियों और गुणों का लाभ लेती है। हार/जीत की मानसिकता शुरू से ही कमजोर और बुरी हालत में होती है।

कई एक्जीक्यूटिव्ज, मैनेजर और माता-पिता किसी पेंडुलम की तरह इधर-उधर झूलते रहते हैं। वे एक दिन तो दूसरों की परवाह न करने वाले जीत/हार के पैरेडाइम पर होते हैं और दूसरे दिन दूसरों को पूरी छूट देने वाले हार/जीत के पैरेडाइम पर पहुँच जाते हैं। जब वे तंत्र, दिशा, अपेक्षा और अनुशासन की कमी तथा दुविधा को और लंबे समय तक नहीं झेल पाते तो वे जीत/हार की दिशा में चले जाते हैं। कुछ समय बाद उनका अपराध बोध उनके इस संकल्प को दुर्बल बना देता है और वे फिर से हार/जीत की तरफ लौट जाते हैं-जब तक कि क्रोध और कुंठा उन्हें दुबारा जीत/हार की ओर नहीं धकेल देती।

हार/हार (Lose/Lose)

जब जीत/हार की मानसिकता वाले दो लोग आमने-सामने होते हैं-यानी जब दो संकल्पवान, जिद्दी और अहंकारी व्यक्ति आपस में व्यवहार करते हैं-तो परिणाम

हार/हार होगा। दोनों ही हारेंगे। दोनों ही प्रतिशोध लेना चाहेंगे और 'पलटकर वार करना' या 'हिसाब बराबर करना' चाहेंगे। वे इस तथ्य के प्रति अंधे हो जायेंगे कि हत्या दरअसल आत्महत्या है और प्रतिशोध एक दुधारी तलवार है।

मैं एक तलाक के बारे में जानता हूँ, जिसमें न्यायाधीश ने पति को आदेश दिया कि वह अपनी सारी संपत्ति बेचकर आधे पैसे पूर्व-पत्नी को दे दे। इसका पालन करते हुए पति ने अपनी 10,000 डॉलर से अधिक मूल्य की कार 50 डॉलर में बेच दी और पूर्व-पत्नी को 25 डॉलर दे दिये। पूर्व-पत्नी के विरोध करने पर जब कोर्ट के क्लर्क ने स्थिति की जाँच की, तो उसने यह पाया कि पति बाकी संपत्ति भी इसी तरह से बेच रहा था।

कुछ लोग किसी शत्रु पर इतने ज्यादा केंद्रित हो जाते हैं, किसी दूसरे के व्यवहार से इतनी बुरी तरह ग्रस्त हो जाते हैं कि वे बाकी हर चीज के प्रति अंधे हो जाते हैं। उनमें सिर्फ यह इच्छा रहती है कि वह व्यक्ति हार जाये, भले ही इस प्रयास में वे भी हार जायें। हार/हार की मानसिकता शत्रुतापूर्ण संघर्ष और युद्ध का जीवनदर्शन है।

हार/हार उस व्यक्ति का जीवनदर्शन भी है, जो दूसरों पर बहुत ज्यादा निर्भर होता है, जिसमें आंतरिक दिशाज्ञान नहीं होता, जो दुःखी होता है और सोचता है कि हर व्यक्ति को दुःखी होना चाहिए। 'अगर कोई भी न जीते, तो शायद हारना इतना बुरा नहीं है।'

जीत (Win)

एक और आम विकल्प सिर्फ अपनी जीत के बारे में सोचना है। जीत की मानसिकता वाले लोग किसी की हार नहीं चाहते। उससे उन्हें कोई फर्क नहीं पड़ता। महत्वपूर्ण तो यह है कि वे जो चाहते हैं, वह उन्हें मिल जाये।

जब कोई विरोध या प्रतियोगिता की भावना न हो, तो जीत शायद दैनिक कामकाज में सबसे आम विधि है। जीत की मानसिकता वाला व्यक्ति अपने हितों को सुरक्षित रखने के संदर्भ में सोचता है-और दूसरों के हितों को सुरक्षित रखने का काम उन्हीं पर छोड़ देता है। (अति प्रभावकारी लोगों की सात आदतें)

विनय V/S पूजा

(विनय तो अति व्यापक किन्तु पूजादि उसका एक छोटा-सा भाग)

(चाल : आत्मशक्ति से ओतप्रोत.....)

पूजा-प्रार्थना-आरती-वंदना, विनय के है एक अंश।
'विनय है मोक्षद्वार' मोक्ष विनय, पञ्चविध होते विशेष।।

लोकानुवृत्ति व काम विनय, अर्थ विनय व भय विनय।
नहीं होते है मोक्ष विनय, ये तो संसार वर्द्धक स्वार्थ विनय।। (1)

मोक्ष विनय होता पञ्च प्रकार, जो दर्शन-ज्ञान-चारित्र-तप।
उपचार विनय प्रमुख रूप में, इनके भेद-प्रभेद अनेक विध।।

शंकादि अष्ट दोष रहित व अष्ट अंग, अष्ट गुण सहित है दर्शन विनय।
पञ्च गुरु की भक्ति-पूजा-प्रार्थना, वंदना भी होता दर्शन विनय।। (2)

जिनशासन को यशस्वी बनाना, मिथ्या लाँछन को भी दूर करना।
अवज्ञा भाव को दूर करके, आदर भाव भी उत्पन्न करना।।

ज्ञान व ज्ञानी का आदर-सत्कार, बहुमान व गुणकीर्तन-पूजा।
अष्ट विध शुद्धि सह पञ्च विध स्वाध्याय, होता है ज्ञान विनय दूजा।। (3)

सम्यक् चारित्र व चारित्रधारी, साधु-साध्वियों की भक्ति सेवा करना।
न्यून चारित्रधारियों की निंदा नहीं करना, चारित्र विनय रूप में माना।।

तप व तपस्वी में आदर करना, आवश्यक क्रियाओं को सही पालना।
अंतरंग तप वृद्धि हेतु बहिरंग-तप को यथायोग्य पालन करना।। (4)

इसे कहते हैं तपो विनय, जो स्वर्ग-मोक्ष प्राप्ति के कारण।
उपचार विनय भी करने योग्य, जो आचार्य आदि के बहुमान।।

गुरु के आगमन में खड़े होना, उच्च आसन दान से विनय करना।
बैठने के बाद स्वयं नीचे बैठकर, भक्तिपूर्वक नमस्कार करना।। (5)

गमन समय में पीछे चलना, विनम्र अनुकूल मित प्रिय बोलना।
प्रमोद भाव युक्त (उनके) गुणों में अनुराग, प्रत्यक्ष-परोक्ष में विनय करना।।

परोक्ष में भी गुरु गुण वर्णन करना, आज्ञा पालन व नमस्कार करना।
(तथाहि) उपाध्याय-गणधर-स्थविर-प्रवर्तक-आर्यिका का यथायोग्य करना।। (6)

आहार-औषधि-उपकरण वसतिका, ज्ञान दान कर वैयावृत्ति करना।
उपसर्ग-परीषह दूर करना, नवकोटि से स्वयं करना व कराना।।

विनय है अंतरंग तपस्या बहिरंग तप से बहुगुणित श्रेष्ठ।
असंख्यात गुणित कर्म निर्जरा के कारण, तीर्थंकर पुण्य बंध कारक।। (7)

विनय स्वरूप व विनय फल, पूजा-प्रार्थना से भी अधिक व्यापक।
विनय सहित पूजा करणीय, विनय रहित पूजा न उपकारक।।

केवल स्वार्थ व रूढि-परंपरा से, विनय रिक्त पूजा न हितावह।
'वंदे तद्गुण लब्धये' हेतु विनय युक्त, भाव पूजा करे सूरी 'कनक'।। (8)

ग.पु. कॉलोनी, सागवाड़ा, दिनांक 30.06.2017, रात्रि 10.37

संदर्भ-

हिताहितापि्तलुप्यर्थं तदङ्गानां सदाञ्जसा।
यो माहात्म्योद्भवे यत्नः स मतो विनयः सताम्।। (47) (धर्मा पृ. 589)

हित की प्राप्ति और अहित का छेदन करने के लिए, जो हित की प्राप्ति और अहित के छेदन करने के उपाय है उन उपायों को सदा छल-कपट रहित भाव से महात्म्य बढ़ाने का प्रयत्न करना, उन उपायों की शक्ति को बढ़ाना, इसे साधुजन विनय कहते हैं।

विनय के पाँच भेद

लोकानुवृतिकामार्थभय निश्रेयसाश्रयः।
विनयः पञ्चधावश्यकार्योऽन्यो निर्जरार्थिभिः।। (48)
लोकानुवर्तनाहेतुस्तथा कामार्थहेतुकः।
विनयो भवहेतुश्च पञ्चमो मोक्षसाधनः।।
उत्थानमञ्जलिः पूजाऽतिथेरासनठौकनम्।
देवपूजा च लोकानुवृत्तिकृद् विनयोमतः।।

भाषाच्छन्दानुवृत्तिं च प्रदानं देबकालयोः।

लोकानुवृत्तिरर्थाय, विनयश्चाञ्जलिक्रिया।।

कामतन्त्रे भये चैव ह्येवं विनय इष्यते।

विनयः पञ्चतो यस्तु तस्यैषा स्यात्प्ररुपणा।।

लोकानुवृत्तिहेतु विनय, काम हेतु विनय, अर्थ हेतुक विनय, भय हेतुक विनय और मोक्ष हेतुक विनय। व्यवहारी जनों के अनुकूल आचरण करना लोकानुवृत्ति हेतुक विनय है। जिससे सब इन्द्रियाँ प्रसन्न हो उसे काम कहते हैं। जिस विनय का आश्रय काम है वह काम हेतुक विनय है। जिससे सब प्रयोजन सिद्ध होते हैं उसे अर्थ कहते है। अर्थमूलक विनय अर्थ हेतुक विनय है। भय से जो विनय की जाती है वह स्वार्थ हेतुक विनय है और जिस विनय का आश्रय मुमुक्षु लेता है अर्थात् मोक्ष के लिए जो विनय की जाती है वह मोक्ष हेतुक विनय है। अतः जो मुमुक्षु कर्मों की निर्जरा करना चाहते हैं उन्हें मोक्ष हेतुक विनय अवश्य करना चाहिए।

स्यात्कषायहृषीकाणां विनीतेर्विनयोऽथवा।

रत्नत्रये तद्वति च यथायोग्यमनुग्रहः।। (60) (धर्मा. पृ. 524)

क्रोध आदि कषायों और स्पर्शन आदि इन्द्रियो का सर्वथा विरोध करने को या शास्त्र विहित कर्म में प्रवृत्ति करने को अथवा सम्यग्दर्शन आदि और उनसे संपन्न पुरुष तथा 'च' शब्द से रत्नत्रय के साधकों पर अनुग्रह करने वाले राजाओं का यथायोग्य उपकार करने को विनय कहते हैं।

यद्विनयत्यपनयति च कर्मासत्तं निराहुरिह विनयम्।

शिक्षायाः फलमखिलक्षेमफलश्चेत्ययं कृत्यः।। (61)

'विनय' शब्द 'वि' उपसर्ग पूर्वक 'नी नयते' धातु से बना है। तो 'विनयतीति विनयः।' विनयेति के दो अर्थ होते है-दूर करना और विशेष रूप से प्राप्त करना। जो अप्रशस्त कर्मों को दूर करती है और विशेष रूप स्वर्ग और मोक्ष को प्राप्त कराती है वह विनय है। यह विनय 'जिनवचन के ज्ञान को प्राप्त करने का फल है और समस्त प्रकार के कल्याण इस नियम से ही प्राप्त होते हैं। अतः इसे अवश्य करना चाहिए।'

सारं सुमानुषत्वेऽर्हद्रूपसंपदिहार्हती।

शिक्षास्यां विनयः सम्यगस्मिन् काम्याः सतां गुणाः।। (62)

आर्यता, कुलीनता आदि गुणों से युक्त इस उत्तम मनुष्य पर्याय का सार अर्हद्रूप संपत्ति अर्थात् जिनरूप नग्नता आदि से युक्त मुनिपद धारण करना है और इस अर्हद्रूप संपदा का सार अर्हंत भगवान् के द्वारा प्रतिपादित जिनवाणी की शिक्षा प्राप्त करना है।

इस आर्हती शिक्षा का सार सम्यक् विनय है और इस विनय में सत्पुरुषों के द्वारा चाहने योग्य समाधि आदि गुण हैं। इस तरह विनय जैनी शिक्षा का सार और जैन गुणों का मूल है।

शिक्षाहीनस्य नटवल्लिङ्गमात्मबिडम्बनम्।
अविनीतस्य शिक्षाऽपि खलमैत्रीव किंफला।। (63)

जैनी शिक्षा से हीन पुरुषों का जिनलिंग धारण करना नट की तरह आत्म विडंबना मात्र है। जैसे कोई नट मुनि का रूप धारण कर ले तो वह हँसी का पात्र होता है वैसे ही जैन धर्म के ज्ञान से रहित पुरुष का जिन रूप धारण करना भी है तथा विनय से रहित मनुष्य की शिक्षा भी दुर्जन की मित्रता के समान निष्फल है या उसका फल बुरा ही होता है।

दर्शनज्ञानचारित्रगोचरश्चौपचारिकः।
चतुर्धा विनयोऽवाचि पंचमोऽपि तपोगताः।। (64)

तत्त्वार्थशास्त्र के विचारकों ने दर्शन विनय, ज्ञान विनय, चारित्र विनय और उपचार विनय इस प्रकार चार भेद विनय के कहे हैं और आचार आदि शास्त्र के विचारकों ने तपो विनय नाम का एक पाँचवाँ भेद भी कहा है।

दर्शनविनयः शंकद्यसन्निधिः सोपगूहनादिविधिः।
भक्त्यर्चावर्णावर्णहृत्यनासदना जिनादिषु च।। (65)

शंका, कांक्षा, विचिकित्सा, अन्य दृष्टि प्रशंसा और अनायतन सेवा इन अतिचारों को दूर करना दर्शन की विनय है। उपगूहन, स्थितिकरण, वात्सल्य और प्रभावना गुणों से युक्त करना भी दर्शन विनय है तथा अर्हंत सिद्ध आदि के गुणों में अनुराग रूप भक्ति, उनकी द्रव्य और भावपूजा विद्वानों की सभा में युक्ति के बल में जिनशासन को यशस्वी बनाना, उस पर लगाये मिथ्या लाँछनों को दूर करना, उसके प्रति अवज्ञा का भाव दूर कर आदर उत्पन्न करना ये सब भी सम्यग्दर्शन की विनय है।

दोषोच्छेदे गुणाधाने यत्नो हि विनयो दृशि।

दृगाचारस्तु तत्त्वार्थरुचौ यत्नो मलात्यये।। (66)

सम्यग्दर्शन के दोषों को नष्ट करने में और गुणों को लाने में जो प्रयत्न किया जाता है वह विनय है और दोषों के दूर होने पर तत्त्वार्थश्रद्धान में जो यत्न है वह दर्शनाचार है अर्थात् सम्यग्दर्शन आदि के निर्मल करने में जो यत्न है वह विनय है और उनके निर्मल होने पर विशेष रूप से अपनाना आचार है।

शुद्धव्यंजनवाच्यततद्द्वयतया गुर्वादिनामाख्यया।

योग्यावग्रहधारणेन समय तद्भाजि भक्त्यापि च।।

यत्काले विहिते कृतांजलिपुटस्याव्यग्रबुद्धेः शुचेः।

सच्छासाध्ययनं स बोधविनयः साध्योऽस्टधापीष्टदः।। (67)

शब्द अर्थ और दोनों अर्थात् शब्दार्थ की शुद्धतापूर्वक, गुरु आदि का नाम न छिपाकर जिस आगम का अध्ययन करता है उसके लिए जो विशेष तप बतलाया है उसे अपनाते हुए आगम में तथा आगम के ज्ञाताओं में भक्ति रखते हुए स्वाध्याय के लिए शास्त्रविहित काल में पिच्छी सहित दोनों हाथ को जोड़कर, एकाग्रचित्त से मन-वचन-काय की शुद्धिपूर्वक, जो युक्तिपूर्ण परमागम का अध्ययन, चिंतन, व्याख्यान आदि किया जाता है वह ज्ञान विनय है। उसके आठ भेद हैं जो अभ्युदय और मोक्षरूपी फल को देने वाले हैं। मुमुक्षु को उसे अवश्य करना चाहिए।

यत्नो हि कालशुद्धयादौ स्याज्ज्ञानविनयोऽत्र तु।

सति यत्नस्तदाचारः पाठे सत्साधनेषु च।। (68)

काल शुद्धि, व्यंजन शुद्धि आदि के लिए जो प्रयत्न किया जाता है वह ज्ञान विनय है और काल शुद्धि आदि के होने पर जो श्रुत के अध्ययन में और उसके साधक पुस्तक आदि में यत्न किया जाता है वह ज्ञानाचार है अर्थात् ज्ञान के आठ अंगों की पूर्ति के लिए प्रयत्न ज्ञान विनय है उनकी पूर्ति होने पर शास्त्राध्ययन के लिए प्रयत्न करना ज्ञानाचार है।

रुच्याऽरुच्यहृषीगोचररतिद्वेषोज्झनेनोच्छलत्।

क्रोधादिच्छिदयाऽसकृत्समितिषूद्योगेन गुप्त्यास्थया।।

सामान्येतर भावनापरिचयेनापि व्रतान्युद्धरन्।

धन्यः साधयते चारित्रविनयं श्रेयः श्रियः पारयम्।। (69)

इन्द्रियों के रुचिकर विषयों के राग और अरुचिकर में द्वेष का त्याग कर उत्पन्न हुए क्रोध, मान, माया और लोभ का छेदन करके, समितियों में बारम्बार उत्साह करके शुद्ध मन-वचन-काय की प्रवृत्तियों में आदर रखते हुए तथा व्रतों का सामान्य और विशेष भावनाओं के द्वारा अहिंसा आदि व्रतों को निर्मल करता हुआ पुण्यात्मा साधु स्वर्ग और मोक्ष लक्ष्मी की पोषक चारित्र विनय को करता है।

समित्यादिषु यतनो हि चारित्रविनयो मतः।

तदाचारस्तु यस्तेषु सत्सु यत्नो व्रताश्रयः।। (70)

समिति आदि में यत्न को चारित्र विनय कहते हैं और समिति आदि के होने पर महाव्रतों में यत्न किया जाता है वह चारित्राचार है।

दान V/S त्याग

(दान से भी महान् है त्याग, दान आंशिक होता है तो त्याग संपूर्ण)

(चाल : छिप गया कोई रे.....)

दानधर्म महान् है, त्याग (धर्म) दान से भी महान्।
आंशिक होता दान, त्याग होता संपूर्ण।। (ध्रुव)

गृहस्थ करते दान तो साधु करते त्याग।
दान से बनते तो दानी, त्याग से बनते मुनि।।

आहार औषधि ज्ञान उपकरण (वसतिका) अभय होता दान।
दीन-दुःखी-रोगी हेतु, गृहस्थ करे दयादत्ति दान।। (1)

त्याग से बहिरंग दशविध, परिग्रह करते विसर्जन।
अंतरंग चतुर्दश परिग्रह, त्याग करते श्रमण।।

किभिच्छिकदान जो चक्रवर्ती भी करते।
उनसे भी महान् होते, जो साधु बनते।। (2)

त्याग बिन जो गृहस्थ, मात्र दान-पुण्य करते।
सांसारिक सुख पाते किन्तु मोक्ष प्राप्त न करते।।

निस्पृह त्यागी मुनि जो आत्मध्यान करते।
गृहस्थ सम दान बिन भी स्वर्ग-मोक्ष पाते।। (3)

इस हेतु दानी चक्री भी, त्यागी मुनि बनते।
दान पूजा मंदिर मूर्ति निर्माण बिना (स्वर्ग)/मोक्ष जाते।।

अतः दानी चक्री भी, मुनि को श्रेष्ठ मानते।
उनकी सेवा भक्ति (वंदना) कर, स्व को धन्य मानते।। (4)

दानी न होते गुरु भले वे, (दानी) चक्री भी क्यों न होते।
निस्पृह अपरिग्रह मुनि, दान बिन भी (पूज्य) गुरु होते।।

ऐसे गुरु ही त्रैलोक्य पूज्य, पंचपरमेष्ठी बनते।
धर्मतीर्थ प्रवर्तन भी ऐसे गुरुओं से ही होते।। (5)

दान तीर्थ प्रवर्तन भले, दानी गृहस्थों से होते।
किन्तु धर्म तीर्थ प्रवर्तन बिन मोक्ष कोई न पाते।।

अतः निस्पृह निराडंबर ज्ञानी/(ध्यानी) मुनि श्रेष्ठ होते।
अतः 'सूरी कनक' निस्पृह निराडंबर (से) ध्यान करते।। (6)

ग.पु.कॉ., सागवाड़ा, दिनांक 01.07.2017, रात्रि 11.27

संदर्भ-

त्याग के लिए भी धन संचय अयोग्य

त्यागायश्रेयसे वित्तमवित्तः संचिनोति यः।
स्वशरीरं सपंकेन स्नास्यामीति विलम्पति।। (16)

The poor man who accumulates wealth so as to be able to acquire merit and the destruction of evil karms by spending it in charity is like the man who covers himself with filth in the expection that he is going to bathe his body thereafter.

"शुद्धर्धनैर्विवर्धन्ते, सतामपि न संपदाः।
न हि स्वच्छाम्बुभिः पूर्णाः कदाचिदपि सिन्धवः।।" (45) आत्मानुशासनं

पुनः शिष्य प्रश्न करता है, हे गुरुदेव! धन निंदनीय क्यों हैं? पात्रदान, देवपूजा

आदि क्रिया पुण्य के लिए कारण है और यह क्रियाएँ बिना धन संभव नहीं है। इसलिये पुण्य के साधन स्वरूप धन निंदनीय क्यों है? इसलिये धन प्रशस्त है और किसी भी उपाय से धन उपार्जन करके पात्रादि दान देकर के सुख के कारण भूत पात्रदान करना चाहिए। इस शंका का समाधान आचार्य करते हैं-

जो निर्धन व्यक्ति सेवा, कृषि आदि कर्म से धन संचय करके पात्रदान, देवपूजा, त्याग आदि करके अपूर्व पुण्य प्राप्त करना चाहता है वह स्नान कर लूँगा इस प्रकार विचार करके स्व-शरीर को कीचड़ से युक्त करता है। यथा-कोई निर्मल शरीर वाला सोचता है कि मैं बाद में शरीर को स्नानादि से स्वच्छ कर लूँगा इस प्रकार से स्वच्छ शरीर को कीचड़ से मल से लिप्त कर लेता है उसी प्रकार जो अविवेकी, असमीक्षाकारी पाप से धनोपार्जन करके पात्रदानादि पुण्य से पाप को नष्ट कर दूँगा ऐसा मानकर धनार्जन करता है वह भी अयोग्य है क्योंकि शुद्ध वृत्ति से किसी के भी धनार्जन संभव नहीं है। आत्मानुशासन में कहा भी है-सज्जनों की संपत्ति भी शुद्ध धन से बनती नहीं है जैसा कि स्वच्छ पानी से कदापि नदियाँ परिपूर्ण नहीं होती है। संस्कृत टीकाकार ने यह भी सूचित किया है जिस प्रकार कुछ चक्रवर्ती आदि को बिना यत्न से पूर्वोपार्जित पुण्य से संपत्ति की प्राप्ति हो जाती है और वह उस संपत्ति से श्रेय मार्ग के लिए पात्रदानादि करता है तो विशेष दोषकारी नहीं है।

समीक्षा-यादृशी भावना यस्य सिद्धि र्भवति तादृशी।

अर्थात् जिस प्रकार भावना होती है, उसी प्रकार सिद्धि होती है क्योंकि 'भावना भवनाशिनी, भावना भववर्धिनी' अर्थात् पवित्र भावना से भव का नाश होता है, तो दूषित भावना से भव की वृद्धि होती है। इसीलिए पूजक को, धार्मिक व्यक्तियों को हर समय, हर तरह से भाव को सम्हालना चाहिए व परिमार्जित करना चाहिए, पूजा, अर्चना, दान, तीर्थयात्रा स्वाध्याय आदि का परम लक्ष्य आत्मा को निर्मल बनाना है और मोक्ष प्राप्त करना है उसका आनुशंगिक फल पुण्य उपार्जन है जिसका फल संसार की विभूति है। परंतु जो संपत्ति, पुत्र प्राप्ति, केस में जययुक्त होना, शत्रु को कष्ट पहुँचाना आदि क्षुद्र लौकिक्य सिद्धि के लिए तथा परलोक में स्वर्ग-प्राप्ति/भोग-प्राप्ति आदि के लिए पूजा दान आदि करता है तो उसका भाव दूषित उद्देश्य क्षुद्र होने के कारण यथार्थ नहीं है। निदान करने से फल की उपलब्धि भी कम हो जाती है,

इसलिए प्रत्येक धार्मिक कार्य पवित्र उद्देश्य से पवित्र साधनों से ही संपादन होना चाहिए। भोग, धन, स्त्री, पुत्र, सत्ता, प्रसिद्धि, कीर्ति आदि की कामना से धर्म करना जैसे भीख माँगना है। धर्म भक्त को भगवान् बनाता है, परन्तु भक्त को भिखारी नहीं बनाता है। धर्म के नाम पर भीख माँगना भी भिखारीपना है इसलिए त्यजनीय है। कवि ने कहा भी है-

माँगन मरण समान है, मत माँगों कोई भीख।
माँगन से मरना भला, यह सद्गुरु की सीख।
बिन माँगे मोती मिले, माँगे मिले न भीख।
बिन माँगे दूध बराबर, माँगे मिले सो पानी।
कबीर वह है खून बराबर, जामे खींचा तानी।

जो दान करने के लिए भी अन्याय से धन उपार्जन करता है वह अधार्मिक अज्ञानी है, क्योंकि, उसका साधन अपवित्र है। इतना ही नहीं वह उस धन से वस्तुतः धर्म नहीं चाहता प्रसिद्धि, कीर्ति चाहता है। क्योंकि वास्तविक धार्मिक व्यक्ति धर्म का स्वरूप, उसका साधन एवं उसका उद्देश्य जानता है। धर्म आत्मा का स्वरूप है। आत्मा ही उसका साधन एवं सिद्धि है।

उपर्युक्त कारणों से सिद्ध होता है कि पूजक को पहले स्वयं में योग्यता लानी चाहिए। श्रावक के कुछ विशिष्ट गुणों का वर्णन करते हुए कहा भी है।

न्यायोपात्तधनो यजन् गुणगुरुन् सद्गीस्त्रिवर्गभजन्न
न्यायोनुगुणं तदर्हगृहिर्णः स्थांनालयो ह्रीमयः।
युक्ताहारविहार आर्यसमितिः प्राज्ञः कृतज्ञो वशी,
श्रृण्वन् धर्मविधि दयालुरधर्मीः सागारधर्म चरेत्।।

न्यायपूर्वक धन कमाने वाला गुणों, गुरुजनों और गुणों से महान् गुरुओं को पूजने वाला, आदर, सत्कार करने वाला परनिंदा, कठोरता आदि से रहित प्रशस्त वाणी बोलने वाला, परस्पर में एक-दूसरे को हानि न पहुँचाते हुए धर्म और काम का सेवन करने वाला, धर्म, अर्थ और काम सेवन के योग्य पत्नी, गाँव, नगर और मकान वाला, लज्जाशील, शास्त्रानुसार खान-पान और गमनागमन करने वाला सदाचारी पुरुषों की संगति करने वाला, विचारशील, पर के द्वारा किये गये उपकार को मानने

वाला, जितेन्द्रिय, धर्म की विधि को प्रतिदिन सुनने वाला, दयालु और पापभीरु पुरुष गृहस्थ धर्म को पालने में समर्थ होता है।

उपर्युक्त श्रावकों के गुण में प्रथम गुण है 'न्यायपूर्वक धन कमाना' श्रावक गृह में रहता है व्यापार-धंधा करना है इसलिए उसको धन की आवश्यकता पड़ती है। तथापि धनार्जन असत् उपायों से नहीं करना चाहिए।

स्वामिद्रोह, मित्रद्रोह, विश्वासघात, ठगना, चोरी करना आदि निंदित उपायों से धनोपार्जन रहित तथा अपने-अपने वर्णों के अनुसार सदाचार को न्याय कहते है। न्यायपूर्वक धनोपार्जन करना न्यायोपात्तधन कहलाता है। जो पुरुष न्यायपूर्वक धनोपार्जन करता है वही गृहस्थ धर्म धारण करने योग्य है क्योंकि गृहस्थों की मनोवृत्ति प्रायः कर धनोपार्जन में ही लगी रहती है। इसलिये धनेच्छुक मनुष्य यहाँ तहा न्याय-अन्याय का विचार न करने धनोपार्जन करते हैं। उनकी मनोभूमि एकदेशव्रत पालन करने की तरफ नहीं झुक सकती है। न्यायोपार्जन किया हुआ धन ही इस लोक और परलोक में सुख देने वाला है। सो ही आचार्यों ने कहा हैं-

सर्वत्र शुचयो धीराः सुकर्मबलगर्विताः।
स्वकर्मनिहितात्मानः पापाः सर्वत्र शंकिताः।।

जो पुरुष न्याय और उत्तम कर्मों के बल से गर्वित हैं वे पुरुष सब जगह प्रत्येक स्थिति में तथा प्रत्येक कार्य में धीर तथा पवित्र रहते हैं। उनको कहीं पर भी किसी प्रकार का भय नहीं होता है। किन्तु जिन्होंने निंद्य तथा नीच कर्मों से अपनी आत्मा को पवित्र किया है, वे सब शंकित तथा भयभीत हैं और भी आचार्यों ने कहा है-

अन्यायोपार्जितं वित्त दश वर्षाणि तिष्ठति।
प्राप्तेत्वेकादशे वर्षे समूलं च विनश्यति।। (9)
यांति न्यायप्रवृतस्य तिर्यंचोऽपि सहायतां।
अपन्थानं तुं गच्छन्तं सोदरोऽपि विमुञ्चति।। (10)

अन्यायपूर्वक उपार्जन किया हुआ धन अधिक से अधिक दस वर्ष तक रह सकता है और ग्यारहवाँ वर्ष लगने पर मूल सहित नष्ट हो जाता है। न्यायमार्ग पर चलने वाले पुरुषों को तिर्यंच भी सहायता करते है और अन्यायपूर्वक प्रवृत्ति करने वालों का साथ अपना सगा भाई भी छोड़ देता है। दूसरे की तो बात ही क्या है इसलिये

न्यायपूर्वक धनोपार्जन करना चाहिए। परंतु वर्तमान में प्रायः दिखाई देता है कि अनेक लोग अनैतिक व्यापार, हिंसात्मक व्यापार, निषिद्ध व्यापार आदि करके धन कमाते हैं और उससे दानादि करके धर्म करना चाहते हैं। जैसे कुछ व्यक्ति स्वयं तो शराब नहीं पीते किन्तु शराब की फैक्ट्रियाँ, दुकानें चलाते हैं। कुछ व्यक्ति स्वयं तो बीड़ी नहीं पीते परंतु बीड़ी की फैक्ट्री में बीड़ी बनवाते हैं व दुकान पर बेचते हैं। कुछ व्यक्ति खुद तो माँस नहीं खाते किन्तु डालडा में चर्बी मिलाकर दूसरों को खिलाते हैं। कुछ व्यक्ति स्वयं चर्म निर्मित वस्तुओं का प्रयोग नहीं करते परन्तु चर्म की विभिन्न सामग्रियाँ यथा- जूते, चप्पल, बेल्ट, सूटकेस, मनीबेग आदि निर्माण करके विक्रय करते हैं। वे सोचते हैं कि हम तो स्वयं नहीं खाते, प्रयोग में नहीं लाते, हम तो केवल धन कमाने के लिए, व्यापार रूप में प्रयोग में लाते हैं इसमें हमारा क्या दोष है? परन्तु उन्हें जान लेना चाहिए कि केवल पाप कृत रूप में नहीं होता है परन्तु पाप मनसा, वचसा, कर्मणा, कृत, कारित, अनुमोदना से भी होता है। उनकी सोच ऐसी है कि हम विष पीते नहीं, पिलाते हैं। क्या वह दोषकारक है? परन्तु विवेक से विचार करने पर सिद्ध होता है कि विष पीने से तो स्वयं ही एक ही की हत्या होती है किन्तु विष पिलाने से अनेक व्यक्तियों की हत्या होती है। इसी प्रकार माँस खाने से, बीड़ी, तम्बाकू आदि नशीली वस्तुओं का सेवन करने से तो स्वयं पाप कमाता है परन्तु इसके उत्पादन एवं विक्रय करने से तो स्वयं भी पाप कमाता है एवं दूसरों से भी पाप करवाता है, हिंसा करवाता है। इन हिंसात्मक व्यापारों से हिंसा के साथ-साथ पर्यावरण भी दूषित हो जाता है। विश्व में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से हिंसा व अत्याचार को प्रोत्साहन मिलता है। इसलिए उपर्युक्त निषिद्ध व्यापार जो करता है वह कभी धार्मिक नहीं हो सकता।

समता V/S ध्यान

(समता बिन सुध्यान असंभव, सुध्यान से समता वर्द्धमान)

(चाल : आत्मशक्ति.....)

मोह क्षोभ रहित होती है समता, जो आत्मा का शुद्ध स्वरूप है।
एकाग्र चिंता निरोध होता ध्यान, जो छद्मस्थों में ही संभव है।।
अंतमुहूर्त तक होता है ध्यान, समता अनंतकाल तक संभव है।

परस्पर उपकारी होते दोनों ही, तो भी समता व्यापक है।।

अशुभ शुभ शुद्ध होता है ध्यान समता होती शुभ व शुद्ध।
एकेंद्रिय/(मिथ्यादृष्टि) से चौदह गुणस्थान में ध्यान, सामायिक
/(प्रतिमा) से सिद्ध तक सामायिक।। (1)

सतत समताधारी होते श्रमण, जीविय मरणे लाहालाह में।
संयोग-वियोग व शत्रु-मित्र में, सुख-दुःख में निंदा-प्रशंसा में।।

समता से च्युत होने पर वे, करते हैं छेदोपस्थापना सदा।
प्रतिक्रमण से ले प्रायश्चित्त तक, यह होता शुभोपयोग चारित्र।। (2)

समता की वृद्धि करने हेतु वे, करते हैं संध्याकाल में ध्यान।
ध्यान बुद्धि से समता भी बढ़ता, समता वृद्धि से बढ़ता है ध्यान।।

दोनों की वृद्धि से शुभ भाव बढ़े, जिससे गुणस्थानों की होती वृद्धि।
श्रेणी आरोहण से शुद्ध भाव प्रारंभ (प्रगट), शुक्लध्यान की भी होती उत्पत्ति।। (3)

बारहवें गुणस्थान के अंत/(में) तक, होता शुक्लध्यान परम उत्कृष्ट।
तेरहवें गुणस्थान में होता केवलज्ञान, यहाँ से न होता है यथार्थ ध्यान।।

घाती रहित व भावमन रहित से, न संभव एकाग्रचिंता निरोध।
जिससे यहाँ से न होता यथार्थ ध्यान, उपचार से अविहित होता ध्यान।। (4)

परन्तु यहाँ से लेकर सिद्ध पर्यंत होती है परम समता सदा।
आत्म स्वभाव होता है समतामय, अतः परम समता रहती सर्वदा।।

समता बिन न शुभ-शुक्लध्यान, समता बिना न है परम धर्म।
समता हेतु सभी धर्म आराधना, 'कनकनंदी' का परम आत्मधर्म।। (5)

ग.पु.कॉ., सागवाड़ा, दिनांक 29.06.2017, रात्रि 8.57

संदर्भ-

अनासक्ति से शुद्ध ध्यान

नाहं कस्यपि मे कश्चिन्न भावोऽस्ति बहिस्तनः।
यदैषा शेमुषी साधोः शुद्ध ध्यानं तदा मतम्।। (69) अमि.श्राव.

'मैं किसी का नहीं हूँ, और न कोई बाहरी पदार्थ मेरा है,' ऐसी बुद्धि जब साधक के प्रकट होती है, तभी उसके शुद्ध ध्यान माना गया है।

राग-द्वेषादि के अभाव से ध्यान की योग्यता

रागद्वेषमदक्रोधलोभमन्मथमत्सराः।
न यस्य मानसे सन्ति तस्य ध्यानेऽस्ति योग्यता।। (70)

राग-द्वेष मद क्रोध लोभ काम-विकार और मत्सर भाव जिस पुरुष के मन में नहीं होते हैं, उसके ध्यान की योग्यता होती है।

राग-द्वेषादि से मन में अस्थिरता

रागद्वेषादिभि क्षिप्तं मनः स्थैर्यं प्रचाल्यते।
कांचनस्येव काठिन्यं दीप्यमानैर्हुताशनैः।। (71)

राग-द्वेषादिक से विक्षिप्त हुए मन की स्थिरता चलायमान हो जाती है। जैसे कि दैदिप्यमान अग्नि से सोने की कठिनता भी पिघल जाती है।

कषाय सहित मन में ध्यान असंभव

विद्यमाने कषायेस्ति मनसि स्थिरता कथम्।
कल्पांतपवनैः स्थैर्यं तृणं कुत्र प्रपद्यते।। (72)

मन में कषाय के विद्यमान रहने पर स्थिरता कैसे संभव है? प्रलय काल के पवन के द्वारा उड़ाये गये तृण स्थिरता को कहाँ पा सकते हैं।

शुद्धात्मा-ध्यान से कर्म की निर्जरा

अक्षय्यकेवलालोकविलोकित चराचरम्।
अनन्तवीर्यशर्माणममूर्तमनुपद्रवम्।। (73)
निरस्त कर्म संबंध सूक्ष्म नित्यं निरास्त्रवम्।
ध्यायतः परमात्मानमात्मनः कर्म निर्जरा।। (74)

जिन्होंने अक्षय केवल ज्ञान के द्वारा सर्व चर-अचर जगत् को देख लिया है, जो अनंत बल और सुख के धारक हैं, अमूर्त हैं, उपद्रव रहित हैं, जिन्होंने सर्व कर्मों के संबंध को दूर कर दिया है, मनःपर्ययज्ञान के द्वारा भी नहीं जाना जाने से सूक्ष्म स्वरूपी है, नित्य है और कर्मों के आस्रव से सर्वथा रहित है, ऐसे सिद्ध परमात्मा का ध्यान करने वाले जीव के कर्मों की निर्जरा होती है।

स्वात्मा से स्वात्मा के ध्यान से मोक्ष

आत्मानमात्मना ध्यायन्नात्मा भवति निर्वृतः।
घर्षयन्नात्मनाऽऽमानं पावकी भवति द्रुमः।। (75)

आत्मा के द्वारा आत्मा को ध्याता हुआ यह आत्मा निवृत्त होता हुआ स्वयं सिद्ध परमात्मा बन जाता है। जैसे कि अपने आपसे घर्षण को प्राप्त हुआ वृक्ष अग्नि बन जाता है।

देहादिक से आत्मा को भिन्न नहीं जानने वाले साधु को भी मोक्ष नहीं

न यो विविक्तमात्मानं देहादिभ्यो विलोकते।
स मज्जति भवांभोधौ लिगंस्थोऽपि दुरुत्तरे।। (76)

जो पुरुष देहादिक से अपने आप को भिन्न नहीं देखता है वह मुनि लिंग में स्थित होकर भी इस दुस्तर संसार-समुद्र में डूबता है।

विपरीतज्ञ संसार में परिभ्रमण करता है

सविज्ञानमविज्ञानं विनश्वरमनश्वरम्।
सदानात्मीयमात्मीयं सुखर्द दुःखकारणम्।। (77)
अनेकमेकमंगादि मन्यमानो निरस्तधीः।
जन्ममृत्युजरावर्ते बंभ्रमीति भवोदधौ।। (78)

जो अज्ञानी जीव अचेतन को चेतन मानता है, विनश्वर को अविनश्वर मानता है, पराये को अपना मानता है, दुःख के कारण को सुखदायी मानता है और शरीर-रागादि अनेक विभिन्न पदार्थों को एक मानता है, वह जन्म-जरा-मरण रूप भँवर वाले संसार-समुद्र में चिरकाल तक परिभ्रमण करता है।

देहात्मा बुद्धि से बंधन तो देहात्मा विभिन्नता से मुक्ति

आत्मनो देहतोऽन्यत्वं चिन्तनीयं मनीषिणा।
शरीरभारमोक्षाय सायकस्येव कोशतः।। (79)
य देहात्मैकताबुद्धिः सा मज्जयति संसृतौ
सा प्रापयति निर्वाणं य देहात्मविभेदधीः।। (80)

इसलिये शरीर के भार से मुक्ति पाने के लिए ज्ञानीजनों को तरकस से बाण के

समान देह से आत्मा की भिन्नता का चिंतवन करना चाहिए। देह में जो-जो आत्मा के एकत्व की बुद्धि है, वह संसार में डूबाती है और देह से आत्मा के भिन्नत्व की जो बुद्धि है, वह निर्वाण को प्राप्त कराती है।

देह एवं आत्मा का अनुभव भिन्न-भिन्न ज्ञान से होने से दोनों में भिन्नता

देहचेतनयोर्भेदो भिन्नज्ञानोपलब्धितः।
सर्वदा विदुषा ज्ञेयश्चक्षुःघ्राणार्थयोरिव।। (82)

जैसे नेत्र का विषय रूप और घ्राण का विषय गंध ये दोनों भिन्न-भिन्न हैं, इसी प्रकार भिन्न-भिन्न ज्ञान की उपलब्धि होने से शरीर और चेतन आत्मा का भेद भी विद्वान् को सदा ही जानना चाहिए।

ज्ञान ज्ञेय संबंध तथा ज्ञान-ज्ञेय-भेद के सिद्धांत के अनुसार ज्ञान भेद से ज्ञेय भेद होता हैं, जैसा कि प्रतिबिंब की भिन्नता से प्रतिबिंबित होने वाला की भिन्नता परिज्ञान होता है। इस न्यायानुसार देह तो इन्द्रिय ज्ञान से ज्ञात होता है और आत्मा स्वसंवेदन से ज्ञात होता है! इन्द्रिय ज्ञान से आत्मा अज्ञेय है और स्वसंवेदन से शरीर अज्ञेय है। इस प्रकार भिन्न ज्ञान से ज्ञात होने से देह एवं आत्मा भिन्न है। यथा रूप वर्ण आकार नेत्र से जाना जाता है तो गंध नासिका से जानी जाती है अतः रूप-गंध भिन्न-भिन्न है। ऐसा भेद विज्ञान/विश्लेषण ज्ञान से शरीर आत्मा से भिन्न अनुभव में आता है। यथा-

जिन परम पैनी सुबुधि छैनी, डारि अंतर भेदिया।
वरणादि अरु रागादिर्तै, निज भाव को न्यारा किया।।
निज मांहि निज के हेतु निज कर, आपको आपै गह्यो।
गुणगुणी ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय, मँझार कछु भेद न रह्यो।। (8)

अतः इन्द्रिय, यंत्रों से आत्मा का अनुभव/परिज्ञान संभव नहीं है। एतदर्थ तो आत्म संवेदन ही अनिवार्य है।

स्वात्मा ही स्व-निवास स्थान

पत्तनं काननं सौधमेषाऽनात्मधिया मतिः।
निवासो दृष्टतत्त्वानामात्मैवात्यक्षयोऽमल।। (86)

मेरा निवास नगर है, वन है और भवन है, ऐसी बुद्धि आत्म ज्ञान से रहित

मिथ्यादृष्टि जीवों के होती है। किन्तु जिन्होंने वस्तु-स्वरूप को जाना है, ऐसे आत्मदर्शी ज्ञानियों का निवास तो अक्षय निर्मल आत्मा ही है।

शुद्ध-जीव अमूर्तिक

शुद्धस्यजीवस्यनिरस्तमूर्त्तेः, सर्वे विकाराः परकर्मजन्याः।
मेघादिजन्या इव तिग्मरश्मेर्विनश्वराःसंति विभास्वरस्य।। (87)

अमूर्त्त शुद्ध जीव के राग-द्वेषादि सभी विकार भाव कर्मोदय जनित हैं। जैसे कि प्रकाशमान सूर्य के मेघादि जनित विनश्वर विभाव देखे जाते हैं।

आत्मज्ञ की धनादि से अनासक्ति

दृष्टामतत्वो द्रविणादिलक्ष्मींन मन्यते कर्मभवां स्वकीयाम्।
विपक्षलक्ष्मीं भुवने विवेकी प्रपद्यते चेतसि कःस्वकीयाम्।। (88)

जिस पुरुष ने आत्म तत्त्व को जाना है, वह कर्मजनित धनादि संपदा को अपनी नहीं मानता है। लोक में ऐसा कौन विवेकीपुरुष है जो अपने शत्रु की लक्ष्मी को मन में अपनी समझता हो।

ज्ञान दर्शनमयी शुद्ध चेतना ही स्वतत्त्व

ज्ञान दर्शनमयं निरामयं मृत्युसंभवविकारवर्जितम्।
आमनन्ति सुधियेऽत्र चेतनं सूक्ष्ममव्ययमपास्तकल्मषम्।। (89)

ज्ञानीजन तो जन्म-मरण आदि विकारों से रहित, निरामय, सूक्ष्म, अव्यय और कर्ममल रहित ज्ञान-दर्शनमयी शुद्ध चेतना को ही अपना मानते हैं।

ध्यान से कोटि भवों के कर्म नाश

अभ्यस्यतो ध्यानमनन्यवृतेरित्थं विधानेन निरन्तरायम्।
व्यपैति पापं भवकोटिबद्धं महाशमस्येव कषाय जालम्।। (93)

इस प्रकार पूर्वोक्त विधान से निरंतराय ध्यान का अभ्यास करने वाले एकाग्रचित्त पुरुष के कोटि भवों के बंधे पाप नष्ट हो जाते हैं जैसे कि महान् प्रशम भाव के धारक के कषायों का समूह नष्ट हो जाता है।

तपोविधानैर्बहुजन्मलक्षैर्यो दह्यते संचित कर्म राशिः।
क्षणेन स ध्यानहुताशनेन प्रवर्तमानेन विनिर्मलेन।। (100)

धन्य पुरुष है ध्यानी

निरस्तसर्वेन्द्रियकार्यजातो योदेहकार्यं न करोति किंचित्।
स्वात्मीयकायोद्यतचित्तवृत्तिः सध्यानकार्यं विदधाति धन्यः।। (103)

जो पुरुष सर्व इन्द्रियों के विषयभूत कार्य समूह को दूर करके देह के कुछ भी कार्य को नहीं करता है और अपने आत्मीय कार्य के करने में उद्यत चित्तवृत्ति होकर ध्यान के कार्य को करता है, वह पुरुष धन्य है।

ध्यानी के लक्षण

न रोषो न तोषो न मोषो न दोषो न कामो न कम्पो न दामो न लोभ।
न मानो न माया न खेदो न मोहो यदीयेऽस्ति चित्ते तदीयेऽस्ति योगः।। (106)

जिसके चित्त में न द्वेष है, न राग है, न चोरी का भाव है, न अन्याय आदि कोई दोष है, न काम भाव है, न कंपन्न है, न दंभ है, न लोभ है, न मान है, न माया, न खेद है और न मोह है; उसी पुरुष के चित्त में ध्यान हो सकता है।

समाधिविध्वंसविधौ पटिष्ठं न जातु लोकव्यवहारपाशंम्।
करोतियो निस्पृहचित्तवृत्तिः प्रवर्तते ध्यानममुष्य शुद्धम्।। (108)

जो पुरुष समाधि के विध्वंस करने में अति कुशल ऐसे लोक-व्यवहार रूप जाल को कभी भी नहीं करता है, और जिसकी चित्तवृत्ति सर्व संसारी कार्यों से निस्पृह है उसी पुरुष के निर्मल ध्यान होता है।

विधीयते ध्यानमवेक्षमाणेयद्भू तबोधैरिह लोककार्यम्।
रौद्रं तदार्त्तं च वदिन्त सन्तःकर्मद्रुमच्छेदनबद्धकांक्षा।। (109)

जो बोध रहित अज्ञानी पुरुष लौकिक कार्य की इच्छा रखते हुए ध्यान करते हैं, उसे कर्मरूप वृक्ष को छेदने में कमर बाँधकर उद्यत संत जन रौद्र और आर्त्तध्यान कहते हैं।

संसारिकं सौख्यमवाप्तुकामैध्यानं विधेयं न विमोक्षकारि।
न कर्षणं सस्यविधायि लोके पलाललाभाय करोति कोऽपि।। (110)

मोक्ष के सुख को करने वाला ध्यान सांसारिक सुख के पाने की इच्छा से ज्ञानियों को नहीं करना चाहिए। क्योंकि लोक में धान्य को उत्पन्न करने वाला कृषि कार्य कोई भी भूसे (पलाल) के लाभ के लिए नहीं करता।

अभ्यासमानं बहुधा स्थिरत्वं यथैति दुर्बोधमहीप शास्त्रम्।
नूनं तथा ध्यानमपीति मत्वाध्यानं सदाऽभ्यस्यतु मोक्तु कामः।। (111)

जैसे अत्यंत कठिन भी शास्त्र निरंतर अनेक प्रकार से अभ्यास किये जाने पर स्थिरता को प्राप्त होता है/जाता है, उसी प्रकार से ध्यान को भी मानकर मुक्ति पाने के इच्छुक पुरुष को निश्चय से ध्यान का सदा अभ्यास करना चाहिए।

अवाप्य मानुष्यमिदं सुदुर्लभं करोति यो ध्यानमनन्यमानसः।
भनक्ति संसारदुरन्तपंजरं स्फुटं स सद्यो गुरुदुःखमन्दिरम्।। (112)

इस अति दुर्लभ मनुष्य भव को पा करके जो मनुष्य एकाग्रचित्त होकर ध्यान को करता है, वह भारी दुःखों के गृहरूप इस दुःखदायी संसार पिंजर को शीघ्र भेदता है।

मेरा (आ. कनकनंदी) विश्व रूप

(मेरा सत्याग्रह-अनाग्रह)

(चाल : कसमे-वादे प्यार....., तुम दिल की....., सायोनारा.....)

मैं ही मेरा द्रव्य-तत्त्व हूँ...मैं ही मेरा पदार्थऽऽ
मैं ही मेरा गुण-धर्म हूँ...मैं ही मेरी पर्यायऽऽ
मैं ही मेरा बंध-मोक्ष हूँ...आस्रव व संवर हूँऽऽ
चौरासी लक्ष योनि मध्य में (हूँ)...चौदह मार्गणा में हूँऽऽ
मेरे चौदह गुणस्थान में हूँ...कर्त्ता-धर्त्ता-भोक्ता हूँऽऽ
मेरे पंच परिवर्तन में (मैं) हूँ...मेरी चतुर्गति में मैं हूँऽऽ
शुभ-अशुभ-शुद्ध मैं हूँ...विभाव-स्वभाव में मैं हूँऽऽ
मेरे विश्व रूप में मैं हूँ...मेरे बिना मेरा ये नहीं हैऽऽ
मेरा रत्नत्रय भी मैं हूँ...श्रद्धा-प्रज्ञा-चर्या में हूँऽऽ
व्रत-नियम-समिति में हूँ...सोलह कारण/(अनुप्रेक्षा) भावना में हूँऽऽ
उत्तम दशधर्म में मैं हूँ...क्षमा-मार्दव-आर्जव में हूँऽऽ
शौच-संयम-तप-त्याग (हूँ)...सत्य-ब्रह्म-आकिंचन्य हूँऽऽ

मेरा विश्व रूप मुझमें है...अन्य सभी सहयोग/(संबद्ध) हैऽऽ
अशुद्ध से नहीं मेरा संबद्ध...निमित्त-नैमित्तिक कारण हैऽऽ

अनादि कालीन पर संबद्ध त्याग से...पाना मुझे है स्व-सर्वस्वऽऽ
इस हेतु ही कर रहा साधना...नवकोटि से स्व-आत्म आराधनाऽऽ

साधनानुकूल साधन स्वीकारूँ...अन्य सभी को बहिष्कार करूँऽऽ
ख्याति पूजा लाभ को नकारूँ...वर्चस्व व बाह्य आडम्बर छोड़ूँऽऽ

अन्य/(पर) से न करूँ अहंकार-ममकार...स्व में ही करूँ 'स्वाभिमान-सोऽहं'ऽऽ
इस भी परे बनना 'अहंमय'...शुद्ध-बुद्ध-आनंदघनमयऽऽ

इसमें मेरा होता पक्षपात है...इसमें मेरा होता सत्याग्रह हैऽऽ
यह ही मेरा पंथ-मत-लक्ष्य है...'कनक' को अन्य सभी में (से) अनाग्रह हैऽऽ

बनकोड़ा, दिनांक 26.06.2017, मध्याह्न 2.44

मैं ही मेरे लिए ग्राह्य/(सर्वस्व), अन्य सभी अग्राह्य/(परिग्रह)

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : सायोनारा....., हो मेरे बंधु रे.....)

मैं ही मुझे पूर्ण जानूँ, यह ही मेरी भावना।
मैं ही मुझे पूर्ण मानूँ, यह ही मेरी कामना।
मैं ही मुझे पूर्ण पाऊँ, यह ही मेरी साधना।
अन्य सभी कुछ त्याग करूँ, यह मेरी आराधना।...(1)

मुझमें ही अनंत शक्ति, अन्य से क्या चाहना।
मुझमें ही अनंत गुण, अन्य से क्या कामना।
मुझमें ही अनंत सुख, अन्य से क्या याचना।
मुझमें ही अनंत धर्म, अन्य में क्या ढूँढ़ना।...(2)

इससे भिन्न अन्य सभी में, नहीं मेरा प्रयोजन।
इससे भिन्न अन्य सभी में, नहीं मेरा नियोजन।

इससे भिन्न अन्य सभी में, नहीं मेरा आलंबन।
स्व अतिरिक्त अन्य सभी मेरे, हेतु पराधीन।...(3)

मैं हूँ सत्य-शिव-सुंदर, मैं हूँ शुद्ध परमेश्वर।
तन-मन-इंद्रिय परे, स्वयंभू स्व-प्रभाकर।
द्रव्य-भाव-नोकर्म रहित, अमूर्तिक सुधाकर।
जन्म-जरा-मृत्यु रहित हूँ, शुद्ध-बुद्ध सुखाकर।...(4)

राग द्वेष काम क्रोध ईर्ष्या घृणा, तृष्णा व मोह।
ख्याति पूजा लाभ प्रसिद्धि, वर्चस्व व विग्रह।
तेरा मेरा भेदभाव वैर, विरोध व दुराग्रह।
इन सभी से परे मैं हूँ, पावन व निर्विकार/(निर्मल)।...(5)

अन्य सभी क्या करते क्या कहते नही संक्लेशमना।
आदर्श अनुकरण करूँ, नहीं बनूँ अंधानुकरणमना।
सनम्रसत्याग्राही बनूँ, गुण-दोष से करूँ शिक्षा ग्रहण।
अन्य के हेतु न करूँ, भाव व्यवहार से विषम।...(6)

स्व का कर्त्ता-धर्त्ता मैं हूँ, स्व का ही मैं विधाता।
संकल्प-विकल्प-संक्लेश परे, स्व का मैं उद्धारकर्त्ता।
स्व-उद्धार सहित ही मैं करूँ, विश्व की हिताकांक्षा।
इस हेतु ही 'कनकनंदी', करे संपूर्ण साधना।...(7)

सीपुर, दिनांक 15.06.2017, रात्रि 9.01 व 10.44

संदर्भ-

समाधिगतसमस्ताः सर्वसावद्यदूराः,
स्वहितनिहितचित्ताः शान्तसर्वप्रचाराः।
स्वपरसफलजल्पाः सर्वसंकल्प मुक्ताः,
कथमिह न विमुक्ते भर्जिनं ते विमुक्ताः।। (226) आत्मानुशासन

जो समस्त हेय-उपादेय तत्त्व के जानकार हैं, सब प्रकार की पाप क्रियाओं से

रहित हैं, आत्महित में मन को लगाकर समस्त इन्द्रिय व्यापार को शांत करने वाले हैं, स्व और पर के लिए हितकर वचन का व्यवहार करते हैं तथा सब संकल्प-विकल्पों से रहित हो चुके हैं; ऐसे वे मुनि यहाँ कैसे मुक्ति के पात्र न होंगे? अवश्य होंगे।

स्व-शुद्धात्मा से भिन्न है कर्मज उपलब्धियाँ

एकः सदा शाश्वतिको ममात्मा-विनिर्मलः साधिगम स्वभावः।
बहिर्भवाः सन्त्यपरे समस्ता-न शाश्वताः कर्मभवाः स्वकीयाः।। (26)

My self is ever one, Eternal, pure, and all knowing in its essence. All the rest are all outside me, non-eternal and brought about as results of one's own karmas.

भावार्थ-मेरा आत्मा सदा एक है, शाश्वत है, पवित्र है, ज्ञान स्वभावी है अन्य संपूर्ण बाह्य में उत्पन्न होने वाले है वे सब कर्म से उत्पन्न हैं, वे सब अपने नहीं है, शाश्वतिक नहीं है।

प्राप्त शिक्षाएँ-ब्रह्माण्ड में अनंतानंत जीव है और प्रत्येक जीव स्वतंत्र सत्ता वाला है। इसलिए तो कोई एक मरने पर ब्रह्माण्ड के संपूर्ण जीव नहीं मरते हैं, एक जीव जन्म लेने पर संपूर्ण जीव जन्म नहीं लेते हैं, ऐसा ही सुख-दुःख भाव-व्यवहार में भी जान लेना चाहिए। जीव द्रव्य/सत्य होने से अनादि अनंत काल से है और अनंत भविष्य तक होने से शाश्वत है। शुद्ध जीव शरीर इन्द्रिय-मन-मस्तिष्क-मोह-राग-द्वेष-कामादि भाव से रहित होने से निर्मल अमूर्तिक-पवित्र है, ज्ञान स्वरूप ही आत्मा (जीव) है। अतः जीव की उत्पत्ति कोई निश्चित कालावधि में किसी निश्चित भौतिक-रासायनिक प्रक्रिया से उत्पन्न होकर मरने के बाद नाश होने वाला नहीं है। जन्म-मरण, सांसारिक विभिन्न अवस्थाएँ, संबंध, सुख-दुःख आदि कर्मज है। कर्म संबंध से उत्पन्न होने वाले हैं। जैसा कि आकाश का दृश्यमान आकार-रूप-रंग आदि शुद्ध आकाश नहीं है परन्तु भौतिक-तत्त्व के संयोग से है वैसा ही शुद्धात्मा से भिन्न समस्त भाव-व्यवहार-अवस्थाएँ-शरीर-राग-द्वेष-ज्ञान आदि कर्म संयोग से उत्पन्न हुए है।

भौतिक-कर्मज आत्मा से भिन्न

यस्यास्ति नैक्यं वपुषापि सार्द्धं-तस्यास्ति किं पुत्रकलत्रमित्रैः।
पृथक्कृते चर्मणि रोमकूपाः-कुतोहि तिष्ठन्ति शरीरमध्ये।। (27)

How can he, who is not one even with his own body, by connected with his son, wife, friends, when the skin is removed from the body, where would the pores remain.

भावार्थ-जिसका शरीर के साथ भी एकत्व नहीं है उसका पुत्र, स्त्री और मित्रों के साथ क्या एकत्व है? चमड़ी के पृथक करने पर शरीर में बालों के छिद्र निश्चय से किस प्रकार रह सकते हैं? अर्थात् निश्चय से बालों के छिद्र नहीं रह सकते हैं?

प्राप्त शिक्षाएँ-शरीर का निर्माण माता-पिता के रज-वीर्य एवं कर्म (नो कर्म) के उदय से होता है। रज-वीर्य एवं कर्म पौद्गलिक (भौतिक-रासायनिक) है जबकि आत्मा (शुद्धात्मा) अमूर्तिक-चैतन्य (ज्ञान-दर्शन-सुख-वीर्य-आध्यात्मिक शक्ति) स्वरूप है। इस दृष्टि से शरीर से विजातीय द्रव्य आत्मा होने से शरीर से पृथक आत्मा है। शरीर से संबंधित माता-पिता, पति-पत्नी, पुत्र-पुत्री, भाई-बंधु, शत्रु-मित्र आदि तक तो पृथक/भिन्न/अलग है ही। जैसा कि चर्म को शरीर से अलग करने से बाल के छिद्र भी अलग हो जाते हैं क्योंकि वह छिद्र चर्म के आश्रय से होते हैं वैसा ही शरीराश्रित माता-पितादि भी आत्मा से भिन्न है। अतः शरीर के समान ही माता पितादि के प्रति मोह/ममत्व/राग/एकत्व भाव नहीं रखना चाहिए।

यद्यपि संसारावस्था में व्यवहार नय से जीव एवं शरीर तिल-तैल, दूध-घी, दूध-पानी के जैसे एकमेक सा हो रहे हैं (लग रहे हैं) तथापि शुद्ध निश्चय से तात्त्विक दृष्टि से भिन्न-भिन्न है। ऐसा श्रद्धान-विवेक रखते हुए यथायोग्य स्व-शरीर तथा शरीर से युक्त जीवों के प्रति आध्यात्मिक-साधना के अनुकूल भाव-व्यवहार करना चाहिए अर्थात् शरीर को स्वस्थ रखते हुए आध्यात्मिक साधना तथा माता-पितादि से वात्सल्य/साम्य भाव/आत्म भाव रखते हुए आत्म कल्याण करना चाहिए। न राग न द्वेष, न आसक्ति, न वैरत्व भाव होना चाहिए। क्योंकि यह सब भाव व्यवहार अनात्म होने से इससे कर्मबंध होता है जिससे संसार में परिभ्रमण करते हुए दुःख भोगना पड़ता है।

श्यामो गौरः कृशः स्थूलः काणः कुण्ठोऽबलो बली।

वनिता पुरुषः षण्ढो विरूपो रूपवानहम्।। (59) अ. श्रावकाचार

जो अपने को मैं काला हूँ, मैं गोरा हूँ, मैं पतला हूँ, मैं मोटा हूँ, मैं काणा हूँ, मैं विकलाङ्ग हूँ, मैं निर्बल हूँ, मैं सबल हूँ, मैं स्त्री हूँ, मैं पुरुष हूँ, मैं नपुंसक हूँ, मैं कुरूप हूँ, मैं रूपवान हूँ।

जात देहात्म विभ्रान्तेरेषा भवति कल्पना।

विवेकं पश्यतः पुंसो न पुनर्देहदेहिनोः।। (60)

इस प्रकार (उपरोक्त प्रकार से) शरीर में आत्मा की भ्रांति वाले जिस पुरुष की कल्पना होती है और जिसे देह और देही (जीव) का भेद दिखाई नहीं देता, उसे बहिरात्मा कहते है। किन्तु जिसे देह और देही का भेद दिखाई देता है, ऐसे सम्यग्दृष्टि पुरुष के उक्त प्रकार की कल्पना नहीं होती है।

शत्रु मित्र पितृ भ्रातृमातृकान्ता सुतादयः।

देह सम्बन्धतः सन्ति न जीवस्य निसर्गजाः।। (61)

देह (शरीर) का अपकार करने वाला सो शत्रु व देह का उपकार करने वाला सो मित्र और देह को उत्पन्न करने वाला सो पिता और जहाँ देह की उत्पत्ति वहाँ ही जिसकी उत्पत्ति होती है वह भाई (सहोदर), देह को उत्पन्न करे सो माता, देह को जो रमावे सो स्त्री, देह से उत्पन्न सो पुत्र आदि सभी संबंध जीव के देह के संसर्ग से हैं, स्वाभाविक (नैसर्गिक) नहीं है।

श्वाभ्रस्तिर्यङ्नरो देवो भवामीति विकल्पना।

श्वाभ्रतिर्यङ्नृदेवाङ्ग सङ्गतो न स्वभावतः।। (62)

मैं नारकी हूँ, मैं तिर्यंच हूँ, मैं मनुष्य हूँ और देव हूँ, यह कल्पना नारकी, तिर्यंच, मनुष्य और देवगति के शरीर के संग से होती है, स्वभाव से नहीं है।

बालकोऽहं कुमारोऽहं तरुणोऽहमहं जरी।

एता देहपरीणामजनिताः सन्ति कल्पनाः।। (63)

मैं बालक हूँ, मैं कुमार हूँ, मैं जवान हूँ, मैं बूढ़ा हूँ, ये सब कल्पनाएँ देह के परिवर्तन से उत्पन्न होती हैं।

विदग्धः पण्डितो मूर्खो दरिद्रः साधनोऽधनः।

कोपनोऽसूयको मूढ़ो द्विष्टस्तुष्टोऽशठः शठः।। (64)

सज्जनो दुर्जनो दीनो लुब्धो मत्तोऽपमानितः।

जात चित्तात्मसम्भ्रान्तेरेषा भवति शेमुषी।। (65)

मैं चतुर हूँ, विद्वान् हूँ, मूर्ख हूँ, दरिद्र हूँ, धनिक हूँ, निर्धन हूँ, क्रोधी हूँ, ईर्ष्यालु हूँ, मूढ़ हूँ, द्वेषी हूँ, संतुष्ट हूँ, ज्ञानी हूँ, अज्ञानी हूँ, सज्जन हूँ, दुर्जन हूँ, दीन हूँ, लोभी हूँ, उन्मत्त हूँ, अपमानित हूँ, ऐसी बुद्धि रूप कल्पना चित्त में आत्मा की भ्रांति वाले पुरुष के होती है।

देहे यात्ममतिर्जन्तोः सा वर्द्धयति संसृतिम्।

आत्मन्यात्ममतिर्या सा सद्यो नयति निर्वृतिम्।। (66)

जीव की शरीर में जो आत्मबुद्धि होती है, वह संसार को बढ़ाती है। किन्तु आत्मा में जो आत्मबुद्धि होती है, वह शीघ्र ही मुक्ति को ले जाती है।

यो जागर्त्याऽऽत्मनः कार्ये कायकार्यं स मुञ्चति।

यः स्वपित्यात्मनः कार्ये कायकार्यं करोति सः।। (67)

जो पुरुष आत्मा के कार्य में जागता है, वह शरीर के कार्य को छोड़ता है। किन्तु जो आत्मा के कार्य में सोता है, वह शरीर के कार्य को करता है।

दुःखदायी संयोग सर्वथा त्यजनीय

संयोगतो दुःखमनेकभेदं-यतोऽश्नुते जन्मवने शरीरी।

ततस्त्रिधासौ परिवर्जनीयो-यियासुना निर्वृतिमात्मनीनाम्।। (28)

The self, encased in the body, undergoes various sorts of sufferings; Because of this external connection. Therefore he who desires Deliverance of the self should avoid this corporal contact through mind, speech and action.

भावार्थ-क्योंकि संसारी जीव संसार रूपी वन में संयोग कारण अनेक प्रकार के दुःख को प्राप्त करता है इसलिए आत्मा के उद्धारक, मोक्ष के इच्छुक पुरुष को इनको तीन प्रकार से छोड़ देना चाहिए।

प्राप्त शिक्षाएँ-भाव कर्म (मोह-राग-द्वेषादि) के संयोग से द्रव्यकर्म (ज्ञानावरणादि

8 कर्म) का संयोग होता है तथा द्रव्य कर्म के कारण शरीर, माता-पितादि चेतन, धन-संपत्ति आदि अचेतन तथा अलंकार-वस्त्र-धनादि से युक्त पुत्रादि भाई-बंधु आदि मिश्र परिग्रहों (संयोग) को मन-वचन-काय से अर्थात् मन-वचन-काय, कृत-कारित-अनुमत के गुणन रूप 9 कोटि/भेद से त्याग देना चाहिए। क्योंकि-

परः परस्ततो दुःखमात्मैवात्मा ततः सुखं।
अत एव महात्मनास्तन्निमित्तं कृतोद्यमाः।। (45)

आचार्यश्री ने इस श्लोक में सुख का आधार तथा उसे प्राप्त करने का संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित उपाय बताया है। उन्होंने यह बताया कि दुःख आत्मा का स्वरूप नहीं है तथा सुख दूसरों से प्राप्त नहीं होता है वरन् दुःख पर का स्वभाव है तथा सुख स्व-स्वभाव है। जो सुख के लिए दूसरों को/अनात्म स्वरूप को अपनाता है वह सुख के परिवर्तन में दुःखों को गले लगाता है। इसके विपरीत जो पर संयोग को त्याग करके आत्मा का ही आश्रय लेता है आलंबन लेता है वह सुख को प्राप्त करता है। इसका रहस्य यह है कि शुद्ध, स्वतंत्र आत्मा का स्वरूप ही अक्षय अनंत सुख स्वरूप है तथा शरीरादि पौद्गलिक द्रव्य है, जिसमें सुख का सर्वथा अभाव है। उसको स्वीकार रूप में जो मोह, राग है वह दुःख के निमित्त है। क्योंकि उसके कारण जो कर्म बंध होता है, उससे आत्मा परतंत्र हो जाता है और सुखादि गुण भी दुःख रूप में परिणमन कर लेते हैं परन्तु भेद विज्ञान तथा भेद क्रिया रूप वीतराग चारित्र से पर संबंध रूप बंधन कट जाता है। तब आत्मा के सुखादि गुण प्रगट हो जाते हैं। इसे ही स्वतंत्रता/निःसंगत्व/स्वाधीन-मोक्ष कहते है।

अर्थात् शरीर, वैभव, सत्ता, संपत्ति, प्रसिद्धि, परिवार, शत्रु-मित्र, राग-द्वेष, काम-क्रोध आदि पर है, अनात्मा है, पर-आत्मा है। अतः उनसे स्वयं को सुख प्राप्त नहीं हो सकता है, किन्तु उनके प्रति जो राग-द्वेष, ममत्व, आकर्षण-विकर्षण रूपी संक्लेश है उससे दुःख ही प्राप्त होगा, इससे भिन्न जो शुद्ध आत्मस्वरूप है वह सुखस्वरूप होने से उसकी उपलब्धि से सुख की उपलब्धि होती है, इसलिए महात्मा पुरुष स्व-आत्म-उपलब्धि अर्थात् स्व-हित के लिए पुरुषार्थ करते हैं। नारायण कृष्ण ने भी कहा है-

प्रशान्तमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम्।

उपैति शान्तरजसं ब्रह्मभूतमकल्मषम्।। (27) गीता पृ. 76

जिसका मन भलीभाँति शांत हुआ है, जिसके विकार शांत हो गये है, ऐसा ब्रह्ममय हुआ निष्पाप योगी अवश्य उत्तम सुख प्राप्त करता है।

युञ्जत्रेवं सदात्मानं योगी विगतकलमषः।

सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तं सुखमश्नुते।। (28)

आत्मा के साथ निरन्तर अनुसंधान करते हुए पाप-रहित हुआ यह योगी सरलता से ब्रह्मप्राप्ति-रूप अनंत सुख का अनुभव करता है।

विकल्प त्याग से परमात्म लीनता

सर्वं निराकृत्य विकल्पजालं-संसारकान्तारनिपात हेतुम्।

विविक्त मात्मानमवेक्ष्यमाणो-निलीयसे त्वं परमात्मतत्त्वे।। (29)

Liberate thyself from the trammels of doubt through which thou art lost in this world forest. Realise thyself as separate and absorbed in contemplation of the highest self.

भावार्थ-संसार वन में पतन के हेतुभूत संपूर्ण विकल्प जालों को दूर करके एकमात्र आत्मा को देखते हुए तुम परमात्म तत्त्व में लीन हो जाओ।

प्राप्त शिक्षाएँ-संकल्प, विकल्प, संक्लेश से आत्मप्रदेश में कंपन्न होता है, जिससे तनाव/पीड़ा होती है, पापकर्म का आस्रव-बंध होता है। इसके कारण ही जीव चतुर्गति रूपी संसार में 84 लाख योनियों में परिभ्रमण करते हुए अनेक शारीरिक-मानसिक-आध्यात्मिक दुःखों को अनुभव करता है। अतः आध्यात्मिक सुख के इच्छुक महामानव स्व-संबोधन/आत्म-विश्लेषण/आत्म-संशोधन को सर्वाधिक महत्व देता है।

अयि कथमपि मृत्वा तत्वकौतूहली सन्।

अनुभव भव मूर्तेः पार्श्ववर्ती मुहूर्तम्।

पृथगथ विलसंतं स्वं समालोक्य।

येन त्यजसि झगति मूर्त्या साकमेकत्वमोहम्।। (अमृत कलश)

हे शांति के इच्छुक आत्मन्! तत्त्व कौतुहल आदि किसी प्रकार से मरकर भी स्व-विज्ञान घनस्वरूप आत्म तत्त्व को मोह, माया, शोक-दुःख से मुहूर्त मात्र के लिए

अलग अनुभव करो और जब ऐसा अनुभव करो तो तत्काल स्वशुद्धात्मा से भिन्न भौतिक/अनात्म/विकारभूत मोहादि को हठात् त्याग कर दो इससे तुम निर्मल/पवित्र, आनंद, ध्यान स्वरूप हो जाओगे।

विरम किमपरेणाकार्यकोलाहलेन स्वयमपि निभृतः सन् पश्य षण्मासमेकम्।
हृदयसरसि पुंसः पुद्गलदभिन्नधाम्नो ननु किमनुपलब्धिर्भाति किंचोपलब्धिः।।

हे आत्मन्! संसार के अकार्य कोलाहल से विराम लो। स्वयं ही समस्त संकल्प-विकल्पों से अवकाश प्राप्त करके स्व-आत्मस्वरूप का अवलोकन/अनुभव करो। तब स्वयं को अनुभव हो जाएगा कि तुम्हारा चैतन्य शुद्ध-स्वरूप समस्त भौतिक स्वरूप से भिन्न है या नहीं? अर्थात् निश्चय से भिन्न है।

अतएव हे आत्मन्! आत्मविश्वास, आत्मज्ञान, आत्म अनुसंधान, आत्म परीक्षण-निरीक्षण, आत्म विश्लेषण, आत्मानुचरण से ही स्वात्मोपलब्धि रूप सुख-शांति, संवर, निर्जरा, मोक्ष प्राप्त किया जाता है। अन्य सब धार्मिक क्रिया-काण्ड, व्रत-नियम-उपनियम, तप-त्याग, परीषह-उपसर्ग सहन, पूजा-पाठ, जप-तप, मंत्र-ध्यान आदि इसके लिए साधन/निमित्त/कारण/उपाय हैं।

हे साधकात्मन्! तुम्हारा निज आत्मा वैभव अक्षय अनंत है। वर्तमान पंचमकाल के समस्त देश-विदेश के सामान्य जन से लेकर उद्योगपति, प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति, वैज्ञानिक, साधु-संत के वैभव सीमित हैं, क्षायोपशमिक, कर्म सापेक्ष हैं। अतएव आत्म वैभव की अपेक्षा वर्तमान के स्व-पर के वैभव अत्यंत तुच्छ हैं/हेय हैं, इसलिए वर्तमान के स्व-पर वैभव से न राग करो, न ईर्ष्या करो, न अहंभाव करो, न दीनभाव करो। जो कुछ तुम्हारी वर्तमान की उपलब्धि है उसका सदुपयोग निज आत्म वैभव की उपलब्धि के लिए ही करो। वर्तमान की उपलब्धि का उपयोग ख्याति, पूजा, लाभ, प्रसिद्धि, संक्लेश-तनाव, ईर्ष्या-द्वेष, दन्द-फन्द में करके इह-परलोक में दुःखी मत हो। शास्त्रों में वर्णन पाया जाता है कि प्राचीन काल के तीर्थंकर, गणधर आदि चार ज्ञान एवं चौसठ ऋद्धियों के स्वामी होते हुए भी उन सबका उपयोग ख्याति, पूजा, प्रसिद्धि या यहाँ तक कि उनके ऊपर उपसर्ग-परीषह करने वालों के निवारण के लिए नहीं किया क्योंकि ऐसा करने से उपलब्धि का (1) सम्यक् सदुपयोग नहीं होता (2) प्राप्त उपलब्धि में मंदता आती है (3) आत्मोत्थ अक्षय-उपलब्धि में बाधा होती है।

अतः हे आत्मन्! ''वन्दे तद्गुण लब्धये'' अनुसार तुम्हारी पंचपरमेष्ठी में जो पूजा/भक्ति/प्रार्थना तब यथार्थ होगी जब तुम उनके गुणों को स्वीकार करोगे क्योंकि गुणानुस्मरण, गुणानुवादन तथा गुणानुकरण ही यथार्थ भक्ति है, सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र है। अतः हे आत्मन्!

आदहिदं कादव्वं यदि चेत् पर हिदं कादव्वं।
आदहिदं परहिदादं आदहिदं सुट्ठू कादव्वं।।
उत्तमा स्वात्मचिंतास्यान्मोहचिन्ता च मध्यमा।
अधमा कामचिन्ता स्यात् परचिंताऽधमाधमा।।

अर्थात् जिस प्रकार दीपक स्वयं पहले प्रकाशित होकर दूसरों को प्रकाशित करता है, उसी प्रकार तुम स्वयं स्व-उपकार करते हुए परोपकार करो। इसके बिना अन्य समस्त प्रपंच, ढोंग-पाखण्ड, संक्लेश त्याग करो।

स्वकृत कर्म ही शुभाशुभ

स्वयं कृतं कर्म यदात्मना पुरा-फलं तदीयं लभते शुभाशुभम्।
परेणदत्तं यदि लभ्यते स्फुटं-स्वयं कृतं कर्म निरर्थकं तदा।। (30)

What ever karmas you have performed previously, you experience their fruits, whether good or evil. If what you experience is caused by another, then the karmas you have performed will clearly be of no effect.

भावार्थ-स्वयं के द्वारा पूर्व में उपार्जित शुभाशुभ कर्म के फल स्वरूप सुख-दुःख को जीव अनुभव करता है। यदि अन्य के द्वारा दिये गये कर्म तथा कर्मफल स्वरूप सुख-दुःख को जीव भोगता है तो स्वयं के द्वारा उपार्जित कर्म निरर्थक हो जाएगा।

प्राप्त शिक्षाएँ-**''कर्म प्रधान विश्व करि राखा, जो जस करहि, फलहुँ तस चाखा''** के नियमानुसार प्रत्येक जीव स्व-स्व उपार्जित शुभ-अशुभ कर्म के अनुसार सुख-दुःख स्वरूप फल को भोगता है। जैसा कि जो पानी को पीता है उसकी प्यास बुझती है न कि दूसरों की प्यास बुझती है; जो भोजन करता है उसकी भूख शांत होती है, दूसरों की नहीं, जो विष पीता है उसकी मृत्यु होती है अन्य की नहीं,

वैसा ही जो शुभ-अशुभ परिणाम करता है उसके अनुसार उसके आत्म प्रदेश में जो कर्म परमाणु पुण्य-पाप रूप में बंधते हैं वे ही कर्म योग्य द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव के अनुसार जन्म-मरण, गति, आयु, शरीर, परिवार, भाव, व्यवहार, सहयोगी, साधन आदि की उपलब्धि होती है, सुख-दुःख, हानि-लाभ आदि मिलते हैं। जैसा कि द्रव्य-क्षेत्र-कालादि के निमित्त को प्राप्त करके नीम, बबूल, आम, नारियल, गेहूँ, धान, चना आदि के बीज से जो वृक्ष बनेंगे उस बीज के अनुसार ही फल-बीज उत्पन्न करेंगे, अन्य बीज के अनुसार वैसा ही कर्मानुसार ही जीवों को सुख-दुःखादि मिलता है भले बाह्य निमित्त सहयोगी बनता है न कि प्रमुख कारण।

स्व-कर्म फल चिन्तन से साम्यभाव

निजार्जितं कर्म विहाय देहिनोन कोपि कस्यापि ददाति किञ्चन।
विचारयन्नेवमनन्य मानसः-परो ददातीति विमुञ्च शेमुषीम्।। (31)

Leaving aside the self-gathered karmas as the dweller in the body, no one gives anything to anyone. Think of this with a concentrated mind and give up the idea that their if another who gives.

भावार्थ-अपने द्वारा उपार्जित कर्म को छोड़कर कोई भी किसी भी जीव को कुछ देने में असमर्थ हैं। नहीं देता है ऐसा विचार कर दूसरा देता है ऐसी बुद्धि को छोड़कर एकाग्रमना हो।

मानव यदि है तुम्हें आकर्षक (सुंदर) बनना

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : परदेशियों से न अखियाँ मिलाना.....)

मानव यदि है तुम्हें आकर्षक बनना, उत्तम भाव-व्यवहार-कथन करना।
फैशन-व्यसन-दंभ-क्रूरता छोड़ना, सेवा-सहयोग-दया से प्रसन्न रहना।। (1)

सरल-सहज व शुचिता रखना, छल-छद्म व कुंठा न रखना।
मन-वचन-काय से सीधा होना, प्रसन्नचित्त से मुस्कुराते रहना।। (2)

दयालु-सहृदय-कोमल बनना, क्रूरता-कठोरता-हिंसा त्यागना।

तनाव-उदासीनता-दबाव त्यागना, तन-मन-आत्मा से हल्का रहना।। (3)

शालीन-अनुशासित जीवन जीना, उठना-बैठना-चलना करना।
लेना-देना व बोलना-सुनना, उद्दण्ड-उत्श्रृंखल-अविनय त्यागना।। (4)

आत्मानुशासी-आत्मसुधार करना, परनिंदा-अपमान-घृणा त्यजना।
गुण-गुणी की प्रशंसा करना, धन्यवाद देना व कृतज्ञ रहना।। (5)

स्व-पर-विश्व हित की भावना भाना, शांत-सौम्य व पावन बनना।
मैत्री-प्रमोद-कारुण्य-माध्यस्थ रखना, अंतरंग-बहिरंग स्वच्छता रखना।। (6)

उक्त गुणों से जो सहित होते, आकर्षण गुण से वे युक्त होते।
यथा तीर्थंकर बुद्ध साधु सज्जन, सती-साध्वी व गुणी महान्।। (7)

मदर टेरेसा सेवाभावी नाइटेंगल, समाजसेवक व समाज सुधारक।
स्वतंत्रता सेनानी व दयालु माता, संकट निवारक प्राण रक्षणकर्त्ता।। (8)

उक्त गुणों से जो जन रिक्त होते, सत्ता-संपत्ति-सुंदरता से युक्त भी होते।
तो भी अनादर पात्र व आकर्षक होते, 'कनक' को सदा ही सुगुण सुहाते।। (9)

चितरी, दिनांक 05.07.2017, मध्याह्न 2.31

वैज्ञानिक तरीके से खुद को बनाये ज्यादा आकर्षक

हर इंसान चाहता है कि वह ज्यादा आकर्षक नजर आये। इसके लिए कुछ लोग मेकअप करते हैं तो कुछ अच्छे कपड़े पहनना पसंद करते है पर यदि आप कुछ खास वैज्ञानिक तरीकों को अपनाये तो ज्यादा आकर्षक नजर आ सकती हैं। जानते हैं इन वैज्ञानिक तरीकों के बारे में...

मुस्कुराइए-यूनिवर्सिटी ऑफ ब्रिटिश कोलंबिया के एक अध्ययन के मुताबिक, यदि महिलाएँ मुस्कुराती हैं तो ज्यादा आकर्षक नजर आती हैं। मुस्कुराना किसी भी अन्य एक्सप्रेशन से ज्यादा प्रभावी होता है। यह बताता हैं कि आप खुश है और दोस्ताना रवैया रखती है।

लाल रंग पहने-कई वैज्ञानिक शोध साबित करते है कि लाल रंग के कपड़े पहनकर आप ज्यादा आकर्षक नजर आती है। आप दुनिया के किसी भी कोने में

रहती हो और आपका रूप-रंग कुछ भी हो, पर यदि आपने लाल रंग के कपड़े पहनकर रखे है तो आप भीड़ में भी अलग और ज्यादा आकर्षक नजर आयेंगे।

आसानी से समझ में आयें-जर्मनी में हुए एक शोध में पता लगा है कि जो इंसान आसानी से समझ में आ जाते हैं, वे ज्यादा आकर्षक नजर आते हैं। अगर अपनी भावनाओं को छुपाकर रखती हैं तो यकीन मानिये कि आप आकर्षक नजर नहीं आयेंगी। आपको आकर्षक नजर आने के लिए अपनी भावनाओं को अच्छी तरह से पेश करना चाहिए।

हास्यबोध रखें-अगर आप किसी व्यक्ति को हँसा पाती हैं तो आप उसकी नजर में ज्यादा आकर्षक बन जाती है। अध्ययन बताते हैं कि पुरुषों और महिलाओं, दोनों के द्वारा हास्यबोध रखने वालों को ज्यादा पसंद किया जाता है। इसलिये आपको आकर्षक बनने के लिए एक अच्छा सेंस ऑफ ह्यूमर विकसित करना चाहिए।

दयालु बनें-आकर्षण पूरी तरह से लुक्स पर निर्भर नहीं करता। अगर आप दयालु है तो लोगों की निगाह में आप आकर्षक भी बन जाती है। चीन में एक शोध में पाया गया कि जो अच्छा है, वह आकर्षक है। इसलिये अगर आप आकर्षक बनना चाहती है तो क्रूरता छोड़कर दयाभाव अपना लें।

पालतू जानवर का साथ-फ्रांस के शोधकर्त्ताओं का मानना है कि पालतू जानवर साथ में होने से आपसे बात करना ज्यादा आसान हो जाता है और आप ज्यादा आकर्षक नजर आने लगती हैं। आप पालतू जानवरों जैसे कुत्ते या बिल्ली की देखभाल किस तरह से करते हैं, इसका भी असर पड़ता है। इसलिए आकर्षक बनने के लिए पालतू जानवरों का साथ लें।

तनाव न लें-जिस तरह से मुस्कुराहट और दयालुता आपको ज्यादा आकर्षक बनाती है, उसी तरह से अगर आप तनाव मुक्त रहती है तो ज्यादा आकर्षक नजर आती है। अगर आपके चेहरे पर तनाव के भाव बने रहते है तो लोग आपसे दूर भागने लगते हैं। दक्षिण अफ्रीका में हुए एक अध्ययन के मुताबिक तनाव मुक्त रहकर इंसान ज्यादा स्मार्ट नजर आता है।

देखभाल करें-अगर आप आकर्षक नजर आना चाहती है तो आपको खुद का पूरा खयाल रखना चाहिए। आपके बाल सही तरह से कटे होने चाहिए, सही

तरह स उठना-बठना चाहए, आपक कपड़ ढग क हान चाहए और वजन सह। होना चाहिए। शोध साबित करते हैं कि जो इंसान खुद की देखभाल करते हैं, वे ज्यादा आकर्षक होते हैं।

जीवन सार-जो सुंदरता आँखों द्वारा देखी जाती हैं, वह कुछ ही पल की होती हैं, यह जरूरी भी नहीं कि हमारे भीतर से भी वही खूबसूरती दिखाई दें। -जॉर्ज सेंड

सुंदरता का कोई अर्थ नहीं

जब हम सत्य के साथ जीवन जी रहे होते हैं, तो हमारा मन संतोष से भरा होता है, ऐसे में हमारे तन में सकारात्मक ऊर्जा जन्म लेती है और हम सुंदर होते जाते हैं।

सुंदरता हर किसी के जीवन की सर्वश्रेष्ठ जरूरत रही है शायद इसीलिए दुनिया भर में सौंदर्य की अपनी-अपनी परिभाषाएँ गढ़ी गई हैं और हर कोई सुंदरता को अपने पास समेट लेना चाहता है। हम आजीवन इस प्रयास में जुटे रहते हैं कि हम जो भी करे सुंदर हो, हम जो भी पहने सुंदर हो, हम जो भी बोले सुंदर हो, हर कोई हमारे तन से लेकर मन तक की सुंदरता से प्रभावित हो।

लेखिका मेरी स्टोप्स जब सोलह वर्ष की थी, तो किसी ने उनकी सुंदरता की प्रशंसा कर दी और उन्हें बड़ा गर्व हो गया। उनके पिता ने पुत्री को उचित सीख देते हुए कहा, 'बेटी, 16 वर्ष की अवस्था में कोई तुम्हारी सुंदरता की प्रशंसा करे, तो उसमें अभिमान करने की कोई बात नहीं, क्योंकि उस सुंदरता का श्रेय तुम्हें नहीं, बल्कि प्रकृति को है। हाँ, जब तुम 60 बरस की हो जाओ, तब भी अगर कोई तुम्हें सुंदर कहे तो अभिमान करना, तब सुंदरता का श्रेय तुम्हें ही होगा।' असली सुंदरता का राज यही है कि वह कभी क्षय नहीं होती।

याद रखें-बाहरी सुंदरता उम्र के साथ ढल जाती है मगर आंतरिक सुंदरता स्थाई रहती है। असली सुंदरता व्यक्ति में बसने वाले उसके गुण हैं। यदि आप सुंदर बनना चाहते हैं तो मुस्कुराइए, क्योंकि मुस्कुराता हुआ इंसान सुंदर लगता है। सच्ची सुंदरता देखने के लिए कोमल हृदय चाहिए, चालाक बुद्धि सिर्फ बाहरी सुंदरता देख सकती है। तन और मन की सुंदरता एक-दूसरे से जुड़ी हुई हैं। अगर आप अपने मन

में लंबे समय तक किसी के प्रति द्वेष, ईर्ष्या और घृणा जैसी चीजों को रखते हो, तो आपके तन की सुंदरता भी जाती रहेगी। मनुष्य के जीवन में जब स्नेह और प्रेम होता है, तब उसके मन में सकारात्मक ऊर्जा होती है, जो उसे सुंदर बनाती है। सुंदरता जब तन के साथ मन में भी होती है, तभी व्यक्ति आकर्षक बन पाता है। विनम्रता के बिना सुंदरता का कोई अर्थ नहीं। हर वह व्यक्ति सुंदर है, जिसका मन प्रेम से भरा हुआ हो।

मेरा दीर्घ अनुभव-स्व-परिणती (स्वभाव) में ही शांति; पर-परिणती (विभाव) में अशांति

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : आत्मशक्ति.....)

आगम में जो वर्णन हुआ है उसे मैं अनुभव कर रहा हूँ।
निस्पृह-निराडंबर-समता-शांति को आत्मानुभव से कर/(पा) रहा हूँ।।

आत्मा में ही हैं अनंत गुण जो सम्यक्दर्शन-ज्ञान-चारित्रमय।
अनंत सुखवीर्य अस्तित्व वस्तुत्व समता-शांति-आनंदमय।।

अतएव स्व-आत्म स्वभाव में स्थिर होने से मिलते उपरोक्त गुण।
आत्म स्वभाव से विपरीत होने से, मिलते इनसे विपरीत कुगुण।।

आत्म स्वभाव में स्थिर होने हेतु अतः त्यागकर रहा हूँ विपरीत भाव।
जितने अंश में स्व में स्थिर होता हूँ उतने अंश में पाता हूँ स्वभाव।।

जितने अंश में स्वभाव में स्थिर न हो पाता उतने अंश में पाता हूँ कुगुण।
जिससे मुझे न मिलती समता-शांति जिससे न प्रगट होते सुगुण।।

स्व-स्वभाव में स्थिर होने हेतु त्यागकर रहा हूँ आत्म-विभाव।
राग द्वेष मोह काम क्रोध आदि व उसके उत्पादक सभी बाह्य-कारक।।

इसलिए मैं श्रद्धा-प्रज्ञा से संकल्पपूर्वक त्याग रहा हूँ बाह्य-कारक।
ख्याति पूजा लाभ प्रसिद्धि तथा संकल्प-विकल्प-संक्लेश आदिक।।

अपना-परया शत्रु-मित्र भाव अंधानुकरण व दबाव-वर्चस्व।।

समय-शक्ति-बुद्धि-साधन का जिससे होता है दुरुपयोग।
ऐसे भाव-व्यवहार-कथन आदि का कर हूँ नवकोटि (सर्वथा) से त्याग।।

अपेक्षा-उपेक्षा-प्रतीक्षा आदि का कर रहा हूँ यथायोग्य त्याग।
आकर्षण-विकर्षण-द्वंद्व-वैर-विरोध का कर रहा हूँ यथायोग्य त्याग।।

दुर्गुण नाश व सुगुण/(स्वगुण) प्राप्त करने हेतु ही कर रहा हूँ सर्व साधना।
सुद्रव्य क्षेत्रकाल भाव प्राप्तकर, कर रहा हूँ यथाशक्ति साधना।।

इससे ही मेरी हो रही आत्मविशुद्धि जिससे मुझे मिलती शांति/(शक्ति)।
इससे भिन्न अन्य सभी से, मिलती मुझे अशांति/(क्षय होती शक्ति)।।

यह सब मैंने आगम में जाना आधुनिक विज्ञान भी सिद्ध कर रहा।
बाल्यकाल से ही (मैं) अनुभव कर रहा हूँ 'कनक' अतः स्वभाव चाहा।।

चितरी, दिनांक 07.07.2017, (चतुर्दशी-चातुर्मास-स्थापना)
(स्व-आलोचना-प्रतिक्रमण-प्रत्याख्यान प्रायश्चित्त व ब्र. सोहन, ब्र. संध्या के कारण यह कविता बनी।)

संदर्भ-

ध्यान-योग्य, योग्यता एवं परिस्थिति

अभवच्चितविक्षेपः एकान्ते तत्वसंस्थितः।
अभ्यस्येदभियोगेन, योगी तत्वं निजात्मनः।। (36)

He in whose mind no distrubances occur and who is established in the knowledge of the self-such an ascetic should engage himself diligently in the contemplation of his soul, in a lonely place.

यहाँ शिष्य प्रश्न करता है-हे गुरुदेव! अभ्यास क्यों करना चाहिए? अर्थात् शिष्य की जिज्ञासा यह है कि अभ्यास का प्रयोग उपाय क्या है? बार-बार सुप्रसिद्ध स्थान, नियम आदि में प्रवृत्त होना अभ्यास है। इस संवित्ति रूप जिज्ञासात्मक शंका का

समाधान। आचार्यश्री शिष्य के बोध के लिए कहते हैं।

संयमी-योगी को आलस्य निद्रादि को निरसन (जय) करके योग्य शून्य गृहादि में स्वात्मा का अभ्यास करना चाहिए। बाल्य मनुष्यादि रहित एकांत स्थान में तथा अंतरंग राग-द्वेषादि रहित एकांत-भाव से योगी को निजात्मा का ध्यान करना चाहिए। क्योंकि दोनों प्रकार की एकांत से रहित अवस्था में स्थित होने पर विक्षोभ उत्पन्न होता है जिससे आत्म-ध्यान नहीं हो पाता है।

समीक्षा-अनादिकाल से यह जीव स्व-स्वरूप से बर्हिमुख होकर इन्द्रियाँ एवं मन के माध्यम से स्व-शक्ति का विघटन, बिखराव, ह्रास एवं क्षय कर रहा है। इसको ही बाह्य प्रवृत्ति, कुध्यान, अपध्यान, आर्तध्यान, रौद्रध्यान, संसारवर्धिनीध्यान कहते हैं। बाह्य से निवृत्ति होकर स्व में रमण रूप प्रक्रिया को ही सुध्यान, धर्मध्यान, शुक्लध्यान, योग, लीनता, समाधि आदि से अभिहित करते हैं।

इच्छा निरोधः ध्यानंः, इच्छा का सम्यक् रूप से निरोध करना ध्यान है। उमास्वामी आचार्यश्री ने मोक्षशास्त्र में कहा भी है-

'एकाग्र चिन्ता निरोधोध्यानं' चित्त को अन्य विकल्पों से हटाकर एक ही विषय में लगाने को ध्यान कहते हैं। महर्षि पतंजलि ने भी ध्यान का लक्षण कहते हुए पतंजलि योग दर्शन के प्रथम चरण में ही कहा है-

"योगश्चित्तवृत्ति निरोधः"

चित्त की वृत्तियों का जो निरोध है वह योग कहा जाता है। गीता में श्री कृष्ण ने कहा है-समत्व योग उच्यते (2.48) बुद्धि की समता या समत्व को ही योग (ध्यान) कहते हैं अथवा "योगः कर्मसु कौशलम्" (2.50) अर्थात् शुभाशुभ से मुक्त होकर कर्म करने की कुशलता को योग कहते है।

उपरोक्त सिद्धांत से यह सिद्ध होता है कि मन (बुद्धि, चित्त) की प्रवृत्ति अन्य-अन्य विषय से हटकर एक विषय में स्थिर भाव से केन्द्रीभूत हो जाना, लीन हो जाना, स्थिर हो जाना ही ध्यान है। अतएव ध्याता को ध्यान करने के लिए जो अनिवार्य तथा प्रथम एवं प्रधान नियम है उसका वर्णन आचार्य पूज्यपाद स्वामी समाधि तंत्र में निम्न प्रकार कहे हैं-

यत्रैवाहितधीः पुंसः श्रद्धा तत्रैव जायते।

यत्रैव जायते श्रद्धा चित्तं तत्रैव लीयते।। (95)

मनुष्य की बुद्धि में जो बात दृढ़ता से बैठ जाती है उसको उसी विषय का श्रद्धान या रूचि विश्वास हो जाता है और जहाँ रूचि पैदा हो जाती है, उसी विषय में सोते-जागते तथा पागलपन या मूर्छित दशा में भी उसका मन रमा रहता है।

आत्मदृष्टा पुरुष की बुद्धि में आत्मा समाया हुआ होता है। इस कारण सब दशा में उसका मन अपने आत्मा में ही लगा रहता है। बहिरात्मा की बुद्धि अपने शरीर की ओर लगी रहती है, अतः अपने शरीर को ही अपने सर्वस्व (आत्मा) की श्रद्धा से देखा करता है, इसी कारण सोते-जागते आदि सभी अवस्थाओं में उसका मन शरीर में ही लीन रहा करता है।

यत्रैवाहितधीः पुंसः श्रद्धा तस्मान्निवर्त्तते।

यस्मान्निवर्त्तते श्रद्धा कुतश्चित्तस्य तल्लयः।। (96) (समाधि तंत्र)

मनुष्य की बुद्धि में जो बात ठीक नहीं समाती उस बात् में उसको श्रद्धा रूचि नहीं होती और जिस विषय की श्रद्धा नहीं होती है उस विषय में उसका मन भी लीन नहीं होता। तद्नुसार अंतरात्मा की बुद्धि में अपनी आत्मा समायी रहती है। अतः शरीर में उसकी रूचि नहीं होती इसी कारण से वह आत्मा में लीन रहता है, शरीर में उसकी रूचि नहीं होती। इसके विपरीत बहिरात्मा की समझ में शरीर के सिवाय आत्मा और कुछ नहीं है। अतः उसकी श्रद्धा आत्मा में नहीं होती। इसी कारण उसका मन भी आत्मा में लीन नहीं होता। यह जीव अनादिकाल से संसार शरीर भोग, उपभोग इन्द्रिय विषय के राग-रंग में रचा-पचा अनुभव किया सुना है। इसलिये वह विषय अनुभूत होने के कारण स्व-स्वरूप सबसे अधिक निकटवर्ती होने पर भी मन की प्रवृत्ति स्वयंमेव सहज रूप से विषयों की ओर हो जाती है। परन्तु इससे विपरीत स्व-स्वरूप का भान अनुभव नहीं होने के कारण स्व-स्वरूप सबसे अधिक निकटवर्ती होने पर भी मन की प्रवृत्ति स्व में सरलता से नहीं होती है। इसलिये बाह्य द्रव्यों से चित्त को हटाकर स्व में स्थिर करने के लिए स्वयं का मनन-चिंतन परिज्ञान सतत करना चाहिए। पूज्यपाद स्वामी ने समाधि तंत्र में कहा है-

तदब्रुयात्तत्परान्पृच्छेत्तदिच्छेत्तत्परो भवेत्।

येनाविद्यामयं रूपं त्यक्त्वा विद्यामयं व्रजेत्।। (52)

आत्मा श्रद्धालु को वह आध्यात्मिक चर्चा करना चाहिए, वह आत्मा सम्बन्धी ही बातें अन्य विद्वानों से पूछनी चाहिए। उसी आध्यात्मिक विषय की चाह रखनी चाहिए। उसी आध्यात्मिक विषय में सदा तत्पर, तैयार या उत्सुक रहना चाहिए। जिससे अपनी आत्मा का अज्ञान भाव छोड़कर ज्ञान भाव प्राप्त हो।

गीता में कर्मयोगी नारायण श्री कृष्ण ने भी ध्यान के विषय में वर्णन करते हुए कहा है-

अविद्या, राग-द्वेष इन्द्रिय विषय में रमायमान चित्त सर्वदा चंचल एवं क्षुभित रहता है इसलिये मन को स्थिर करना शीघ्र सहज साध्य नहीं है। मन को स्थिर करने के लिए जब श्री कृष्ण अर्जुन को उपदेश देते हैं तब अर्जुन श्री कृष्ण को निम्न प्रकार अपना भाव प्रगट करते हैं-

चंच्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद् दृढ़म्।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्।। (34) अध्याय 6

हे कृष्ण यह मन चंचल, हठीला बलवान और 'दृढ़' है। वायु के समान अर्थात् हवा को गठरी में बाँधने के समान इसका निग्रह करना मुझे अत्यंत दुष्कर दिखता है।

श्री कृष्ण अर्जुन की वास्तविक परिस्थिति एवं कठिनाइयों को अनुभव करके निम्न प्रकार संबोधन करते हैं-

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्।
अभ्यासेन तु कौंतेय वैराग्येण च गृह्यते।। (35)
असंयतात्मना योगो दुष्प्रावृत इति मे मतिः।
वश्यात्मना तु यतता शक्याऽवाप्तुमुपायतः।। (36)

है महाबाहु अर्जुन! इसमें संदहे नहीं, कि मन चंचल है और उसका निग्रह करना कठिन है, परन्तु है कौन्तेय! अभ्यास और वैराग्य से वह स्वाधीन किया जा सकता है। मेरे मत में जिसका अन्तःकरण काबू में नहीं, उसका (इस साम्यबुद्धि रूप) योग का प्राप्त होना कठिन है, किन्तु अन्तःकरण को काबू में रखकर प्रयत्न करते रहने पर, उपाय से (इस योग का) प्राप्त होना संभव है।

जैसे जल स्वभावतः तरल एवं निम्नगामी है उसी प्रकार मन भी निम्नगामी है।

मन का प्रवृत्त विषय, कषाय म, राग-द्वष म, राग-रग म हाना सहज-सरल ह। जस जल को घन या ऊर्ध्वगामी बनाना श्रम साध्य एवं समय साध्य है, उसी प्रकार मन को निर्मल एवं स्थिर करना श्रम साध्य एवं समय साध्य है। जब जल तरल रहता है तब जल स्वाभाविक रूप से अधोगमन करता है परन्तु जब घन तुषार रूप परिणमन करता है तब जल अधोगमन नहीं करता है। उसी प्रकार मन, ज्ञान, वैराग्य, संयम, मनन-चिंतन, अनुप्रेक्षा अभ्यास के बल से दृढ़ घनीभूत हो जाता है तब मन अधोगामी (विषय कषायों की ओर प्रवृत्ति करना) चल (अस्थिर, क्षुभित, अशांत, व्यथित) नहीं रहता है। मन को निर्मल, स्थिर, शांत बनाना विश्व का सर्वश्रेष्ठ एवं सबसे क्लिष्ट कार्य है। मन चंचल होने का कारण राग-द्वेष है एवं मन स्थिर होने का कारण राग-द्वेष की निवृत्ति है।

रागद्वेषादिकल्लोलैरलोलं यन्मनो जलम्।

स पश्यत्यात्मनस्तत्त्वं तत्तत्वं नेतरो जनः।। (35) (समाधि तंत्र)

जिस पुरुष का मन रूपी जल राग-द्वेष, मोह, मद, क्रोध, लोभ, माया आदि की लहरों से चंचल नहीं है वह मनुष्य अपने आत्मा के वास्तविक स्वरूप को अपने निर्मल मन में देख लेता है। अन्य मनुष्य उस आत्मा के स्वरूप को नहीं देख पाता।

अविक्षिप्तं मनस्तत्त्वं विक्षिप्तं भ्रान्तिरात्मनः।

धारयेत्तदविक्षिप्तं विक्षिप्तं नाश्रयेत्ततः।। (36)

मोह मिथ्यात्व और राग-द्वेष आदि के क्षोभ से रहित मन आत्मा का स्वभाव है और मोह तथा राग-द्वेष से व्याकुल मन आत्मा की भ्रांति यानि भ्रम है। इसलिये राग-द्वेष-मोह से रहित शुद्ध मन बनाना चाहिए, राग-द्वेष-मोह आदि दुर्भावों से मन को मलीन नहीं करना चाहिए।

अविद्याभ्यास संस्कारैरवशं क्षिप्यते मनः।

तदैव ज्ञान संस्कारैः स्वतस्तत्त्वेऽवतिष्ठते।। (37)

मन अज्ञान के अभ्यास के संस्कारों द्वारा अपने वश में न रहकर इन्द्रियों के विषय भोगों में फँस जाता है वही मन आत्मा और शरीर के भेद विज्ञान के संस्कारों से अपने आत्म स्वरूप में ठहर जाता है।

यथा यथा समायाति, संवित्तौ तत्वमुत्तमम्।

तथा तथा न रोचन्ते, विषयाः सुलभा अपि।। (37)

As greater and greater progress is made in the realigation of the glorious self, so is lessened, more and more, the liking for even those objects of pleasure which may be obtined with ease.

''शमसुखशीलितमनसामशनमपि द्वेषमेति किमु कामाः।

स्थलमपि दहाति झषाणां किमङ्ग पुनरङ्गमाराः।।''

पुनः शिष्य शंका करता है कि-आत्म स्वरूप का अभ्यास कैसे करना चाहिए? हे भगवान्! आपने जो लक्षण कहा है उस लक्षणरूप संवित्ति में प्रवर्तन किस उपाय से योगीजन करते हैं और उसे जानते हैं? आचार्य देव कहते हैं कि-हे धीमान् शिष्य! उसका वर्णन कर रहा हूँ उसे तुम सुनो-

जैसे-जैसे विशुद्ध आत्म स्वरूप के अभिमुख योगीजन गमन करते हैं अर्थात् आत्म स्वरूप में लीन होकर उसकी अनुभूति करते हैं वैसे-वैसे सुलभ भी रमणीय इन्द्रिय जनित भोग में बुद्धि उत्पन्न नहीं होती है। महासुख की उपलब्धि होने पर अल्प सुख के कारण का अनादर लोक में भी दिखाई देता है। इसका स्पष्टीकरण निम्न प्रकार है-

जिस प्रकार जल रहित स्थल भाग भी मछली को जलाता है तब अग्नि की बात ही क्या है? अर्थात् अग्नि से तो मछली जलेगी ही, मृत्यु को प्राप्त कर लेगी। उसी प्रकार जिसका चित्त समता रूपी सुख से सम्पन्न है उन्हें भोजन लेने पर भी द्वेष होता है अर्थात् भोजन में भी आसक्ति नहीं होती है। तब उन्हें कामभोग में कैसे द्वेष नहीं होगा? अर्थात् निश्चय से विरक्ति होगी।

समीक्षा-कामभोग कर्मजनित वैभाविक भाव होने के कारण जितने-जितने अंश में आत्मा का स्वाभाविक भाव स्वरूप आत्मनुभूति प्रगट होती जाएगी उतने-उतने अंश में कामभोग से विरक्ति होती जाएगी। जिस प्रकार की जितने-जितने अंश में प्रकाश होता जाता है उतने-उतने अंश में अंधेरा दूर होता जाता है। घनांधकार में भी जब दीपक प्रज्ज्वलित होता है तब भी प्रकाश के अनुपात से अंधकार दूर होता है उसी प्रकार सुलभ भी प्रचुर भोगरूपी अंधकार में वैराग्य रूपी आत्म-ज्योति प्रगट

होता है और अंत में भोग से विरक्ति हो जाती है। राजर्षि भर्तृहरि ने कहा भी है-

रम्य हर्म्यतलं न किं वसयते श्रव्यं न गेयादिकं
किं वा प्राणसमासमागम सुखं नैवधिकं प्रीयते।
किंतु भ्रान्तपतत्पतंगपवनव्यालोलदीपांकुर-
च्छायाचंचलमाकलय्य सकलं सन्तो वनान्तं गता।। (55)

क्या संत महात्माओं के रहने के लिए बड़े-बड़े राजप्रसाद न थे? क्या उनके सुनने के लिए अच्छे-अच्छे संगीत न थे। क्या प्राण के समान अत्यंत प्रिय स्त्रियों का समागम सुख उनको अधिक प्रीतिकर न था कि उन्होंने इस संसार को गिरते पतंग की हवा से हिली हुई दीपक की छाया के समान चंचल जानकर निर्जन वन में चला जाना ही श्रेयस्कर समझा।

साम्राज्यां कथमप्यवाप्य सुचिरात्संसारसारं पुनः।
त्यक्त्वैव यदि क्षितिश्वखराः प्राप्ताः श्रियं शाश्वतीम्।।
त्वं प्रागेव परिग्रहान् परिहर त्याज्यान् गृहीत्वापि ते।
मा भूत भौतिकमोदकव्यतिकरं संपाद्य हास्यास्पदम्।। (40) आत्मानु.

जिस किसी प्रकार से संसार के सारभूत साम्राज्य (सार्वभौम राज्य) को चिरकाल में प्राप्त करके भी यदि चक्रवर्ती उसे छोड़ने के पश्चात् ही अविनश्वर मोक्ष-लक्ष्मी को प्राप्त हुए हैं तो फिर तुम त्यागने के योग्य उन परिग्रहों (विषयों) को ग्रहण करने के पहिले ही छोड़ दो। इससे तुम परिव्राजक के लड्डू के समान विषयों का संपादन करके हँसी के पात्र न बन सकोगे।

अव्युच्छिन्नः सुखपरिकरैर्लालिता लोलरम्यैः।
श्यामाङ्गीनां नयनकमलैरर्चिता यौवनान्तम्।।
धन्योऽसि त्वं यदि तनुरियं लब्धबोधेर्मृगीभि।
दग्धारण्ये स्थलकमलिनी शङ्कयालोक्यते ते।। (88)

निरंतर प्राप्त होने वाली सुख-सामग्री से पालित और यौवन के मध्य में सुंदर स्त्रियों के चंचल एवं रमणीय नेत्र रूप कमलों से पूजित अर्थात् देखा गया ऐसा वह तेरा शरीर विवेक-ज्ञान के प्राप्त होने पर यदि जले हुए वन में हिरणीयों के द्वारा स्थल कमलिनी को आशंका से देखा जाता है तो तू धन्य है-प्रशंसा के योग्य है।

यथा यथा न रोचन्ते, विषयाः सुलभा अपि।

तथा तथा समायाति, संवित्तौ तत्वमुत्तमम्।। (38)

As even those objects of please which are easily obtainbale become inreasingly intolerable in the same measure does the glorious self come into one's enjoyment!

''विमकिमपरेणाकार्यकोलाहलेन,

स्वयमपि निभृतः सन्पश्य षण्मासमेकम्।

हृदयसरसि पुसं पुद्गलाभिन्नधाम्नो,

ननु किमनुपलब्धिर्भाति किं चोपलब्धिः।।'' (नाटक-समयसार)

विषय विरक्ति ही योगी की स्व-आत्म-संवित्ति की सूचना देने वाली है, उसके अभाव से अर्थात् विषय विरक्ति के अभाव से आत्म-संवित्ति भी नहीं हो सकती है। विषय विरक्ति से आत्म-संवित्ति भी वृद्धि को प्राप्त हो जाती है। यथा-समयसार कलश में कहा भी है-

हे आत्मन्! तू बिना प्रयोजन के इस निष्फल कोलाहल से विरक्त हो और स्वयं में लीन होकर छह महीने पर्यंत इस चैतन्य स्वरूप आत्म स्वरूप का अवलोकन करो अर्थात् अनुभव करो ऐसा करने पर क्या पुद्गल से भिन्न चैतन्य-ज्योति स्वरूप आत्म-की प्राप्ति तेरे इस हृदय रूपी सरोवर में नहीं होगी! अर्थात् अवश्य होगी।

समीक्षा–जैसे-जैसे प्रकाश फैलता है वैसे-वैसे ही अंधकार दूर होता जाता है। इसी प्रकार जैसे-जैसे विषय विरक्ति होती है वैसे-वैसे आत्म संवित्ति की वृद्धि होती जाती है। क्योंकि विषय शक्ति और आत्म-संवित्ति परस्पर विरोध गुण है। विरोधी गुणों में से एक गुण की वृद्धि होने पर दूसरे विरोधी गुण की हानि होना स्वाभाविक है। यथा उष्णता एवं शीतलता परस्पर विरोधी गुण होने से उनमें से कोई एक गुण की वृद्धि होने पर दूसरे गुण की हानि होती है। इससे सिद्ध होता है कि जो मोक्ष सुख चाहता है उसे विषय-सुख त्याग करना आवश्यक है। अष्टावक्र गीता में भी कहा है-

पश्यभूतविकारांस्त्वं भूतमात्रान् यथार्थतः।

तत्क्षणाद्बन्धनिर्मुक्तः स्वरूपस्मो भविष्यसि।। (7)

अब चैतन्य स्वरूप के साक्षात् करने का उपाय कहते है-

हे शिष्य! भूतविकार अर्थात् देह, इन्द्रिय आदि को वास्तव में जड़ जो पंच महाभूत उनका विकार जान आत्म स्वरूप मत जान। यदि गुरु श्रुति और अनुभव से ऐसा निश्चय कर लेगा तो तत्काल ही संसार बंधन से मुक्त होकर शरीर आदि से विलक्षण जो आत्मा उस आत्म स्वरूप विषय स्थिति को प्राप्त होगा, क्योंकि शरीर आदि के विषय आत्म भिन्न जड़त्व आदि का ज्ञान होने पर इन शरीर आदि का साक्षी जो आत्मा सो शीघ्र ही जाना जाता है।

वासना एवं संसार इति सर्वा विमुञ्च ताः।

तत्यागोवासनात्यागात्स्थितिरद्वयथातथा।। (8)

इस प्रकार आत्मज्ञान होने पर आत्मज्ञान के विषय में निष्ठा होने के लिए वासना के त्याग करने को उपदेश कहते हैं-विषयों के विषय वासना होना ही संसार है, इस कारण हे शिष्य! उन संपूर्ण वासनाओं का त्यागकर, क्योंकि वासना के त्याग से आत्मनिष्ठा होने पर इस संसार का स्वयं त्याग हो जाता है और वासनाओं के त्याग होने पर भी संसार के विषय शरीर की स्थिति प्रारब्ध कर्मों के अनुसार रहती है।

विहारा वैरिणं काममर्थं चानखर्थ संकुलम्।

धर्ममप्येतयोर्हेतुं सर्वत्रानादरं कुरु।। (1)

पूर्व विषयों के बिना भी संतोष रूप से वैराग्य का वर्णन किया, अब विषय तृष्णा के त्याग का गुरु उपदेश करते है-हे शिष्य! ज्ञान का शत्रु जो काम है, उसका त्याग कर और जिसके पैदा करने में रक्षा करने में तथा खर्च करने में दुःख होता है सर्वथा दुःखों से भरे हुए अर्थ कहिये धन का त्याग कर तथा काम और अर्थ दोनों का हेतु जो धर्म, उसका भी त्याग कर और तदनन्तर धर्म काम रूप त्रिवर्ग के हेतु जो सकाम कर्म उनके विषय आसक्ति का त्याग कर।

स्वप्नेन्द्राजालवत्पश्य दिनानी त्रीणि पंच वा।

मित्रक्षेत्रघनागारदारदायादिसम्पदः।। (2)

इस प्रकार शिष्य शंका करता है कि-स्त्री, पुत्रादि और अनेक प्रकार के सुख देने वाले जो कर्म उनका किस प्रकार त्याग हो सकता है? तब गुरु कहते हैं कि हे शिष्य! तीन अथवा पाँच दिन रहने वाले मित्र, क्षेत्र, धन, स्थान, स्त्री और कुटुम्ब

आदि संपत्तियों को स्वप्न और इंद्रजाल के समान आनत्य जान।

यत्रयत्र भवेतृष्णा संसारं विद्धि तत्र वै।

प्रौढवैराग्यमाश्रित्य वीततृष्णः सुखी भव।। (3)

अब यह वर्णन करते हैं कि, संपूर्ण काम्य कर्मों में अनादर करना रूप वैराग्य ही मोक्ष रूप पुरुषार्थ का कारण है, जहाँ-जहाँ विषयों की विशेष तृष्णा होती है वहाँ ही संसार जान, क्योंकि विषयों की तृष्णा ही कर्मों के द्वारा संसार का हेतु होती, इस कारण दृढ़ वैराग्य का अवलंबन करके अप्राप्त विषयों में इच्छा रहित होकर आत्मज्ञान की निष्ठा करके सुखी हो।

तृष्णामात्रात्म को बन्धस्तन्नाशोमोक्षउच्यते।

भवसंसक्तिमात्रेण प्राप्ति तुष्टिर्मुहुर्मुहः।। (4)

उपरोक्त विषय को अन्य रीति से कहते हैं-हे शिष्य! तृष्णा मात्र ही बड़ा भारी बंधन है और उस तृष्णा मात्र का त्याग ही मोक्ष कहलाता है, क्योंकि संसार के पीछे आसक्ति का त्याग करके बारंबार आत्म ज्ञान से उत्पन्न हुआ संतोष ही मोक्ष कहलाता है।

आत्म-संवित्तिवान् का लक्षण-1

निशामयति निश्शेषमिन्द्रजोलोपमं जगत्।

स्पृहयत्यात्मलाभाय, गत्वान्यत्रानुतप्यते।। (39)

The seeker of the self regards the whole world as a product of illusion and is moved by the desire to atting to self realigation. If he ever becomes entangled in anything else he repents of it!

स्वाआत्मा संपत्ति की वृद्धि होने पर जो चिह्न प्रकट होते हैं उसे हे शिष्य तुम सुनो-

योगी शब्द अंतः दीपक होने के कारण उसे सर्वत्र जोड़ना चाहिए। जो स्व-आत्म-संवित्ति के रसिक/ध्याता है वह संपूर्ण चराचर बाह्य वस्तु को उपेक्षा रूप से देखता है। उसे हेय, उपादेय, ग्रहणीय एवं तेजनीय का ज्ञान होने के कारण इन्द्रजालियाँ (जादूगर) के द्वारा प्रदर्शित सर्प व हार के समान समस्त सांसारिक वस्तु प्रतिभाषित होती है। इसलिए वह संसार को इन्द्रजाल के समान अवास्तविक मानकर चिदानंद स्वरूप स्व-आत्म संवित्ति को चाहता है तथा स्व-आत्मा से अतिरिक्त किसी वस्तु में

स्व-चित्त की प्रवृत्ति पूर्व संस्कार वश हो जाती है तब वह पश्चाताप करता है। वह दुःखी होकर सोचता है कि हाय मेरे से यह अनात्म कार्य कैसे हो गया।

आत्म-संवित्तिवान् का लक्षण-2

इच्छत्येकान्तसंवासं, निर्जनं जनितादरः।

निजकार्यवशात्किञ्चिदुक्त्वा विस्मरति द्रुतम्।। (40)

The Seeker after the self longs for solitude, prefering disraciation with men; if he has to speak to men for a purpose of his own, he puts it out of his mind as son as it is said!

''गुरुपदेशमासाद्य, समभ्यस्यन्नानारतम्।

धारवासौष्ठवाध्यान प्रत्ययानपि पश्यति।।''

आत्म-साधक आत्म-साधना के लिए स्वंभाव से निर्जन गिरी, गुहा आदि में गुरु आदि के साथ रहने की अभिलाषा करता है और वहाँ भी रहकर जन-मनोरंजन कार्य, चमत्कार पूर्ण मंत्रादि प्रयोग तथा अनावश्यक वार्तालाप से निवृत्त होने का प्रयत्न करता है। सामान्य जन स्वार्थ वशात् संसारी लाभ-अलाभ संबंधी प्रश्न करते हैं जिससे साधक को साधना में बाधा पहुँचती है। इसीलिये जनसम्पर्क से रहित एकांत में साधना करने के लिए कहा गया है। लौकिक चमत्कार ध्यान के लिए, आत्म-साधना के लिए बाधक है। तत्त्वानुशासन में कहा भी है-

गुरु के उपदेशानुसार सतत् आत्मस्वरूप का अभ्यास करने वाला ध्यानी धारणा, सौष्ठव आदि ध्यान के प्रतियों का साक्षात् प्रतिक्षक करने लगता है अर्थात् जिस समय आत्मलीनता होती है उस समय ज्ञान की प्रकृष्ठता के कारण उसे संसार का कोई भी पदार्थ अदृश्य प्रतीत नहीं होता है वह अपने आत्मानंद में स्थिर रहता है।

समीक्षा-प्राथमिक साधक के मन की चंचलता के लिए बाह्य द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव भी निमित्त बनते हैं। उन बाह्य निमित्तों से निवृत्त होने पर तज्जन्य चंचलता भी दूर होती है। कहा भी है-

विकीर्यते मनः सद्यः स्थानदोषेण देहिनाम्।

तदेव स्वस्थतां धत्ते स्थानमासाद्य बन्धुकरम्।।22।।

स्थान के दोष से प्राणियों का मन शीघ्र ही विकार को प्राप्त होता है तथा वही

मन रमणीय स्थान को पाकर स्वस्थता को धारण करता है-राग-द्वेष से रहित होकर आत्मस्वरूप में अवस्थित होता है।

अंधानुकरण बिन संपूर्ण बनूँ

-आचार्य कनकनंदी

(चाल : तेरे प्यार का आसरा.....)

आदर्शों का अनुकरण (मैं) करता रहूँगा, जब तक मैं न सर्वज्ञ बनूँगा।
अनादर्शों को मैं न कभी मानूँगा, भले नवकोटि से (मैं) साम्य रहूँगा।। (1)

परम सत्य को मैं मान्यता दूँगा, अनेकांत दृष्टि से (मैं) निर्णय लूँगा।
स्याद्वाद पद्धति से कथन करूँगा, समता-शांति हेतु प्रयास करूँगा।। (2)

राग द्वेषी मोही व स्वार्थी जनों से, ईर्ष्या घृणा तृष्णा सहित जनों से।
भेद-भाव पक्ष-पात सहित जनों से, संकीर्ण-कट्टर व रूढ़िवादी से।। (3)

परनिंदा-अपमान सहित जनों से, अहंकार-ममकार सहित जनों से।
अंधानुकरण व ढोंगी-पाखण्डी से, अप्रभावी रहूँ मैं साम्य भाव से।। (4)

तीर्थंकर गणधर आदि महापुरुष, अंधानुकरण बिना करते पुरुषार्थ।
हर महान् उपलब्धि भी इससे होती, भेड़-भेड़िया चाल से उपलब्धि न होती।। (5)

धर्म-दर्शन व राजनीति-कानून, नीति-नियम व सामाजिक बंधन।
भौतिक-विज्ञान से मनोविज्ञान, किसी का भी न करूँगा अंधानुकरण।। (6)

इससे मेरी होगी श्रद्धा जागृति, प्रज्ञा व चर्या में होगी उन्नति।
आत्मविशुद्धि-शांति बढ़ेगी, प्रतिस्पर्द्धा बिना मेरी उन्नति होगी।। (7)

आत्म केन्द्रित मैं हो पाऊँगा, संकल्प-विकल्प से रहित होऊँगा।
मेरी अनंत शक्तियाँ को पाऊँगा, 'कनक' शुद्ध-बुद्ध मैं हो पाऊँगा।। (8)

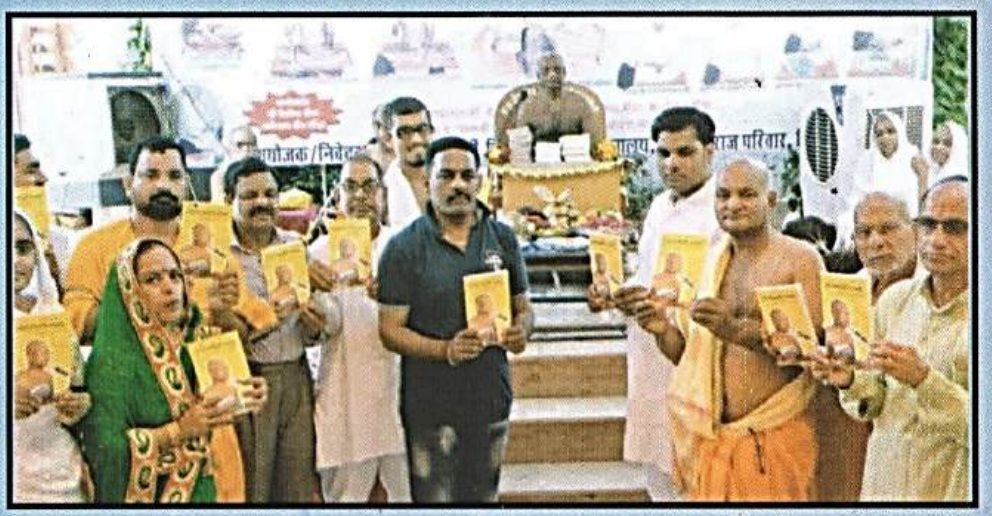

आचार्य कनकनन्दी प्रवचनामृत का विमोचन का एक दृश्य। (चितरी-2017)

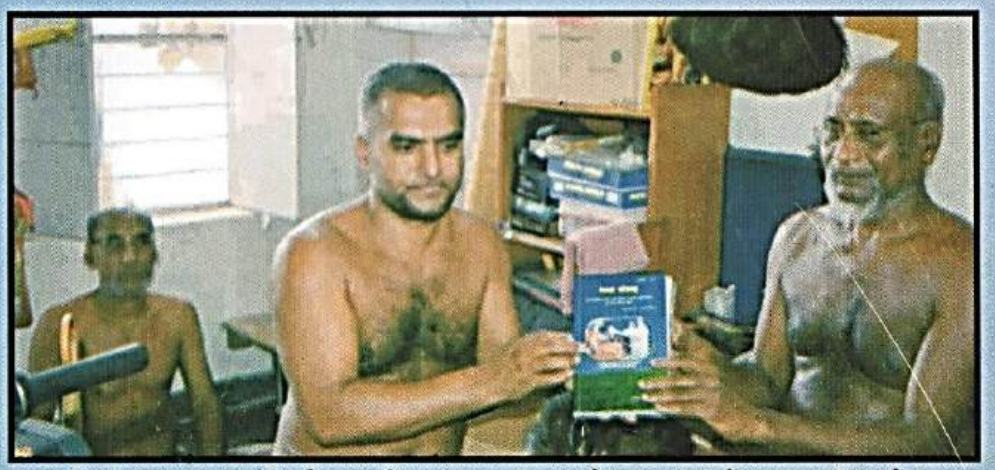

मुनिश्री प्रणामसागरजी को स्व रचित ग्रन्थ प्रदान करते हुए आचार्य कनकनन्दी गुरुदेव। (सिपुर-2017)

रयणसागर ग्रन्थ का विमोचन करते हुए आचार्य कनकनन्दी गुरुदेव आदि। (चितरी-2017)

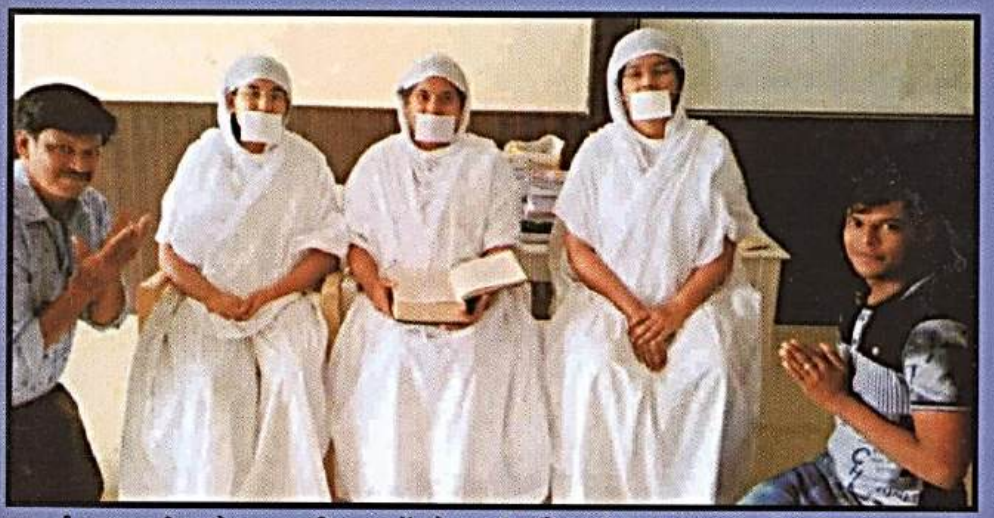

आचार्य कनकनन्दी गुरुदेव द्वारा रचित ग्रन्थों को साध्वी "वैभवश्री" "आत्मा" (जै. श्वे. स्थानकवासी) को समर्पित करते हुए महेश व तीर्थ। (पूना-2017)

स्वाध्याय सभा में मुनि प्रणाम सागर की जिज्ञासा का समाधान करते हुए आचार्य कनकनन्दी गुरुदेव। (सिपुर-2017)

आचार्य कनकनन्दी द्वारा रचित आध्यात्म व राष्ट्रीय कविता सुनते हुए अखिल भारतीय सन्त अखाड़ा परिषद के अध्यक्ष महन्त नरेन्द्रगिरी। (चितरी-2017)